Digita

तुलसीदास

कुंवर चन्द्र प्रकाश सिंह

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

तुलसीदास

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

तुलसीदास

[नाटक]

●

लेखक

कुंवर चन्द्रप्रकाश सिंह

आमुख लेखक

महामनीषी आचार्यप्रवर डॉ० जयदेव सिंह

प्रकाशक

नार्दर्न इण्डिया पब्लिशिंग हाउस

नया हैदराबाद, लखनऊ—२२६ ००७

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

प्रकाशक : श्री दिलीप कुमार त्रिपाठी
नार्दर्न इण्डिया पब्लिशिंग हाउस,
नया हैदराबाद, लखनऊ—२२६ ००७
फोन : ७५६५५

© लेखक

संस्करण : प्रथम
जून, १६८४

मूल्य : १५ रुपये

मुद्रक : हरी मेहरोत्रा
रामा प्रेस,
नजीराबाद, लखनऊ—२२६ ०१८
फोन : ४५६४८ तथा ४४६३७

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

वैष्णव आचार्यों और भक्तों

की

लोककल्याणकारी ज्योतिर्मयी परम्परा

को

सश्रद्ध समर्पित

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

आत्म निवेदन

'तुलसीदास' नाटक को साहित्य-जगत् के समक्ष प्रस्तुत करते हुए मुझे प्रसन्नता हो रही है। इस नाटक में गोस्वामी तुलसीदास के व्यक्तित्व और कृतित्व को नाटकीय रूप प्रदान किया गया है। गोस्वामी तुलसीदास के जीवन की नाटकीय समस्याओं को पहले भी कुछ नाटकों में उजागर किया गया है, पर वे नाटक गोस्वामी जी के गृह-त्याग पर समाप्त हो जाते हैं। यह नाटक उनके गृह-त्याग से आरम्भ होता है। इस नाटक में उनकी जीवनव्यापी विराट बाह्य और आभ्यन्तर साधना को रूपाकार देने का प्रयत्न किया गया है। यह साधना ही उनके कृतित्व में फलवती हुई है और आज के इस सर्वतोमुखी विघटन के युग में समाज और देश को एक सूत्र में आबद्ध रखने का कार्य कर रही है। उनके द्वारा राष्ट्र की मंगलविधायिका शक्तियों को बल मिलता रहा है और भविष्य में भी निरन्तर मिलता रहेगा।

इस नाटक में गोस्वामी तुलसीदास के युग की ऐतिहासिकता को उसके यथार्थ रूप में अभिव्यक्त करने का प्रयत्न किया गया है। नाटकीय पात्रों में से अधिकांश इस अर्थ में ऐतिहासिक हैं कि आचार्य विश्वनाथ मिश्र जैसे वरेण्य विद्वानों ने गोस्वामी तुलसीदास की जीवनी के प्रसंग में उनके जिन परिकरों अथवा सुहृदों के नामों का निर्धारण किया है, उन्हें ग्रहण करने का प्रयत्न मैंने किया है। कुछ नाम बाबा बेनीमाधवदास के मूल गोसाईंचरित से लिये गये हैं। शेष पात्र ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य में कल्पित किये

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

गये हैं। मेरा प्रयास यह रहा है कि उस युग के सत्य को जीवंत-दृश्यात्मक रचना का रूप दिया जा सके। यह नाटक हिन्दी की उस प्रतिनिधि परिनिष्ठित शैली में लिखा गया है जिसका रूप भारतेन्दु और प्रसाद के द्वारा विकसित किया गया था। आज का रंगशिल्प पाश्चात्य प्रयोगों से इतना प्रभावित है कि प्रत्येक नाटककार, रंग-कर्मी और नाट्यसमीक्षक 'प्रसाद' के कृतित्व को प्रत्यक्ष अथवा परोक्ष रूप में नकार कर ही आत्मतोष प्राप्त करता है। हमारे नाट्यसाहित्य के विकास की दृष्टि से यह एक संकट है—इसे हम सांस्कृतिक संकट मानते हैं। हमारी नाट्यपरम्परा रसानुयायी रही है। इसलिये उसमें साधारणीकरण की प्रक्रिया प्रमुख रही है। आज के नाटक इतने व्यक्तिवैचित्र्यवादी हो गये हैं कि कभी-कभी उनमें निरूपित पात्रों और घटनाओं की चरम विकृति पर विश्वास करना कठिन प्रतीत होने लगता है। उनकी विश्वसनीयता तभी स्वीकार्य हो सकती है, जब यह मान लिया जाय कि इन नाटकों के नायक स्वयं उनके लेखक हैं।

वस्तुतः गोस्वामी तुलसीदास उस विराट् भक्ति आन्दोलन के एक प्रमुख उन्नायक हैं जिसके द्वारा समाज में साम्य, सख्य और स्वातन्त्र्य की भावना का जन-जन में व्यापक प्रवर्तन हुआ था, जिसने ऊँच-नीच और जात-पाँत के सब बन्धनों को तोड़ दिया था और जिसने राष्ट्र की पराजय की उस अन्धकार-बेला में अपनी संस्कृति की अपराजेयता की चेतना जगा दी थी। वैष्णव भक्ति-आन्दोलन ने मानव-मानव के बीच समता की जिस भूमि का उद्घाटन किया, उसका सही मूल्यांकन अभी तक नहीं हो पाया है। कुछ दशक पूर्व विदेशों में प्रवर्तित हरे कृष्ण आन्दोलन उसी भक्ति-आन्दोलन की अनन्त शक्ति का प्रकाश है।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

आज के अधिकांश रंगकर्मियों और नाट्य-समीक्षकों की मनोवृत्ति और मुद्रा से मैं परिचित हूं। वे अपने-अपने क्षेत्र में जो कार्य कर रहे हैं, वह प्रशंसनीय है। मुझे भवभूति के इस कथन में विश्वास है कि काल निरवधि है और पृथ्वी बहुत बड़ी है।

इस नाटक का आमुख लिखने का कष्ट पद्मभूषण डॉ० जयदेव सिंह ने किया, इसके लिये मैं उनका आभारी हूं। डॉ० जयदेव सिंह समसामयिक भारत के एक अन्यतम मनीषी हैं। वे संगीत, नाट्यशास्त्र, दर्शन, साहित्य और अध्यात्मविद्या के धुरिकीर्त्तनीय आचार्य हैं। वे महामहोपाध्याय महामनीषी गोपीनाथ कविराज की परम्परा के संरक्षक और संवर्धक हैं। उनकी महामनीषा का मूल्यांकन मेरे जैसे अल्पज्ञ द्वारा संभव नहीं। उन्होंने मेरे इस नाटक का आमुख लिखा, यह उनका अहैतुक अनुग्रह है। मेरे पास आभार व्यक्त करने के लिये उपयुक्त शब्द नहीं हैं।

एक निवेदन। ग्रंथ में जहाँ-जहाँ 'कैलाश' आया है, उसे 'कैलास' पढ़ा जाय एवं 'बद्रीनाथ' को 'बदरीनाथ'। अंतिम पृष्ठ पर 'सप्ताश्क यान' छपा है, उसे 'सप्ताश्व यान' पढ़ा जाय। ११२ पृष्ठ पर 'दीनबन्धु की माता' के स्थान पर 'दीनबंध की पत्नी' पढ़ा जाय।

'तुलसीदास' नाटक का प्रकाशन, नार्दर्न इण्डिया प्रकाशन के मालिक श्री दिलीप कुमार त्रिपाठी ने जिस तत्परता से किया, उसके लिये मैं उनका भी आभारी हूं।

—कुँवर चन्द्रप्रकाश सिंह

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

आमुख

कुँवर चन्द्रप्रकाश सिंह ने नाटक पर अपना शोध प्रबन्ध लिखकर डाक्टरेट की उपाधि अर्जित की है। अतः वह नाटक के मूलतत्वों में निष्णात हैं। जहां तक मुझे पता है तुलसीदास नाटक उनकी प्रथम कृति नहीं है।

मैंने इसको आदि से अन्त तक पढ़ा है। नाटक बहुत सुन्दर है। अपनी पत्नी की फटकार से तुलसीदास जी के जीवन में आमूलचूल परिवर्तन हुआ था, यह एक प्रसिद्ध कथा है। यह नाटक के लिए बहुत ही सुन्दर विषय हो सकता है, किन्तु जहां तक मुझे पता है अभी तक किसी ने तुलसीदास जी के जीवन की इस घटना को आधार बनाकर एक नाटक की रचना नहीं की।

कुँवर जी ने इस अभाव की पूर्ति की है। यह विषय बहुत सुन्दर है और नाटक के लिए सर्वथा योग्य । अतः कथावस्तु की दृष्टि से यह बहुत ही रोचक है और आदि से अन्त तक भिन्न-भिन्न अंकों और दृश्यों में इसकी रोचकता का सुन्दर निर्वाह हुआ है।

तुलसीदास और रत्नावली इस नाटक के मुख्य पात्र हैं और दोनों का चरित्रचित्रण बहुत सुन्दर हुआ है। इसमें तुलसीदास को एक क्रान्तिकारी वैष्णव के रूप में चित्रित किया गया है जिसने समाज के तिरस्कृत और दलित वर्ग की सेवा और उन्नयन का महान् व्रत ले रखा है, उनका उद्धार ही उनकी दिन की चिन्ता

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

है और रात का स्वप्न। साथ ही वह जगह-जगह पर रामलीला का आयोजन कर रहे हैं जिसके माध्यम से वह धर्म की अधर्म पर विजय प्रदर्शित करना चाहते हैं। वह जहां-जहां जाते हैं वहां-वहां स्वयं रामकथा सुनाकर भक्तिस्पन्दिनी धारा प्रवाहित करते हैं।

रत्नावली का तो कहना ही क्या ? वह सत्प्रेरणा की रत्नमंजूषा ही है। प्रभु का अनुग्रह उसके रूप में मूर्तिमान हो उठा है। अपने पति को चरम लक्ष्य तक पहुँचाने में ही उसके सारे जीवन की निरन्तर साधना है। यह अपनी पराकाष्ठा पर तब पहुँचती है जब तुलसीदास के अस्वस्थ होने के समाचार को पाकर वह अन्न-जल त्याग देती है और एकासन पर बैठकर अहर्निश रामचरितमानस का पाठ करती है और अन्त में उसका शरीर दिव्य आभा से मंडित हो उठता है और वह प्रकाश किशोरी जी के विग्रह के श्रीचरणों में समा जाता है।

कथावस्तु के विकास की सबसे मार्मिक स्थिति वह है जहां तुलसीदास जी का अनुभव इन शब्दों में अंकित किया गया है :

"मैं उन देवीमूर्ति को कई दिनों से स्वप्न में देख रहा हूं। मुखमण्डल कुछ परिचित तो लगता है, मैं यह निश्चय नहीं कर पा रहा कि वे कौन हैं। पर उन्होंने मुझे स्वस्थ तो कर ही दिया है। हनुमान जी ने ही सम्भवतः उन्हें मेरे कल्याण के लिए प्रेरित किया होगा। पर यह चरण-स्पर्श करना कुछ समझ में नहीं आ रहा" (पृ० १५८) स्वप्न में रत्नावली का तुलसीदास जी का चरण-स्पर्श करना नाटकीय कला की बहुत ही मार्मिक स्थिति है।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

नाटक के प्रत्येक दृश्य में लेखक ने जो कोष्ठक में संकेत दिये हैं, उनसे नाटक का मञ्चीकरण बहुत ही विशद हो गया है।

इसकी भाषा भी बहुत व्यञ्जक है। कुछ उदाहरण निम्नलिखित हैं "इस संघर्ष-संकुल जीवन में तुम्हारी कनकलताकान्त शरीरयष्टि की छाया में ही मुझे सुख और विश्रान्ति के कुछ क्षण मिले हैं। तुम्हारा शरच्चन्द्रविनिंदक मुख निर्निमेष देखते हुए जीवन का तापत्रास दूर कर सकूँ, यही कामना शेष है" (पृ० १८)।

"प्रिय के परम कल्याण के लिए अपनी सुख-स्पृहा का आत्यंतिक विसर्जन ही प्रेम है। यही मैंने किया है। उन्हें अपने रूप और देह की आसक्ति में बांधकर मैंने अपने सुख की वाञ्छा नहीं की" (पृ० १६)।

आमुख-लेखक का वही कार्य है जो नाटक में सूत्रधार का। कथावस्तु का संकेत कर वह रंगमञ्च से अलग हो जाता है। इस नाटक की विशेषताओं का संकेत कर मैं भी विराम ग्रहण करता हूं। पाठक स्वयं देखें कि इस रत्नराशि में क्या-क्या रत्न छिपे हुए हैं।

नामदेव सिंह

डी० लिट्०, डी० म्यूज़, पद्मभूषण

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

तुलसीदास

नाटक

पात्र-परिचय

पुरुष

तुलसीदास	—	मानस के महाकवि, नाटक के नायक।
दीनबंधु पाठक	—	गोस्वामी तुलसीदास के श्वशुर।
रामनाथ, श्यामनाथ	—	गोस्वामी जी के साले।
काशीनाथ, कैलास, समर सिंह, रामू	—	गोस्वामी जी के मित्रगण।
मेघा भगत	—	काशी की प्राचीन रामलीला के प्रवर्त्तक।
उज्जयिनीदास	—	उज्जैन के निवासी संगीताचार्य।
बेनीमाधवदास	—	'मूल-गोसाईंचरित' के प्रणेता, गोस्वामी जी के एक प्रमुख शिष्य।
वेंकटरमण	—	तमिलभाषी वैष्णव युवक।
सोमेश्वर	—	कर्णाटक के शैव युवक।
राघवानन्द	—	पुरी के वैष्णव संत।
नाभादास	—	'भक्तमाल' के लेखक प्रसिद्ध भक्तकवि।
टोडरमल	—	तुलसीदास के मित्र।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

महन्त	—	शंकरदेव की गद्दी के अधिष्ठाता।
सूरदास	—	'सूरसागर' के प्रणेता महाकवि।
कुंभनदास, परमानन्ददास	—	अष्टछाप के प्रसिद्ध कविगण।
मनसुखा	—	गोपभाव का उपासक ब्रज का एक सख्यनिष्ठ भक्त।
रूपारुण स्वामी	—	मिथिला भाव के उपासक महानसंत।
नरोत्तमदास	—	सुदामा चरित्र के प्रणेता कवि।
बनबंडी स्वामी	—	गोस्वामी तुलसीदास के अनन्य सहयोगीसंत। मानस के आदि व्यासों में एक।
नंदलाल गोस्वामी	—	गोस्वामी जी के शिष्य संडीला निवासी। मानस के आदि व्यासों में एक।
पुजारी, अन्य पात्र	—	संत समाज, निरंजन जैसे संदेशवाहक……। अयोध्या के श्वपच ब्राह्मण आदि।

स्त्रीपात्र

रत्नावली (यमुना)	—	गोस्वामी तुलसीदास की पत्नी।
सरस्वती	—	रत्नावली की भाभी।

रत्नावली की माता

वेंकटरमण की माता

कुछ ग्रामीण स्त्रियां आदि

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

प्रथम अंक

प्रथम दृश्य

[पर्दा उठने के पूर्व गंभीर मेघ गर्जन, दारुण वज्रपात और घोर वर्षा का शब्द सुनाई पड़ता है। पर्दा उठने के बाद भी वह सुनाई पड़ता रहता है। पर्दा धीरे-धीरे उठता है। चारों ओर भाद्रपद की अमावस्या की रात्रि का सूचीभेद्य अंधकार छाया है। कहीं कुछ दिखाई नहीं पड़ता। लहरों के थपेड़ों और हरहराती हुई धारा के शब्द से अनुमान किया जा सकता है कि वर्षा से बढ़ी हुई कोई नदी निकट है। सहसा दिशाओं को कँपा देने वाले गुरुगर्जन के साथ धरती और आकाश को दग्ध-सा करता हुआ बिजली का प्रकाश चारों ओर भर जाता है। उस प्रकाश में यमुना के सैकत तट पर खड़े कुछ झोपड़े दिखाई दे जाते हैं। गर्जन के रुकने पर एक झोपड़े से बोलचाल के कुछ स्वर सुनाई पड़ते हैं।]

एक स्वर— लगता है, आज तो प्रलय ही हो जायेगी।

दूसरा स्वर—मैं तो जल का ही निवासी हूं। मैंने भी ऐसी भयानक रात कभी नहीं देखी।

(बिजली गरज कर फिर चमक उठती है।)

पहला स्वर—(आश्चर्य से) कैलाश भैया ! वह अद्‌भुत दृश्य देखो। इस काल रात्रि में कोई दु:साहसी प्रलय के समुद्र की तरह उमड़ी यमुना की छाती चीरता हुआ चला आ रहा है।

(बिजली का प्रकाश अंतर्हित हो जाता है।)

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

दूसरा स्वर– अद्भुत ! अभूतपूर्व ! वह तो आकर लगभग किनारे लग गया है। जिस बढ़ी और उमड़ी हुई यमुना को देखने का साहस ही नहीं होता, उसके मदमाते प्रवाह के गर्व को खर्व करने वाला यह कौन हो सकता है ?

पहला स्वर– लगता है, वह किनारे आ गया। (ध्यान से सुनते हुए) वह कुछ गा भी रहा है।

दूसरा स्वर—ठीक कहते हो, वह गा रहा है। अँधेरे में कुछ दिखाई तो पड़ता नहीं। पर उसका गीत वेगवती यमुना के हरहर रव को प्रतिहत करता हुआ गूंजने लगा है, फिर भी वह क्या गा रहा है, यह समझ में नहीं आ रहा……… स्वर तो कुछ परिचित लगता है।

(बिजली का तीव्र प्रकाश पुनः फैल जाता है, उसमें एक व्यक्ति तेजी से आगे बढ़ता हुआ दिखाई पड़ता है। उसे देखकर दोनों चिल्ला उठते हैं। बिजली छिप जाती है।)

दोनों—ये तो हमारे परम बंधु श्रीवर जी हैं।

पहला स्वर—ठीक कहते हो कैलाश भैया, ये वही हैं।

दूसरा स्वर—चलो ! हम लोग दौड़कर इन्हें लौटा लावें।

(बिजली फिर कौंधती है और वह व्यक्ति फिर दिखाई पड़ जाता है। स्कन्धविलंबित केशराशि और शरीर के वस्त्र भीगे हैं, चरणों में अदम्य वेग है, और कंठ में अद्भुत संगीत। दोनों दौड़कर उन्हें पकड़ना चाहते हैं। बिजली फिर छिप जाती है। अँधेरा हो जाता है। दोनों अंधकार का वक्ष चीरकर आगे बढ़नेवाले उस पथिक को अधीर होकर पुकारते हैं।)

दोनों—श्रीवर ज़ी ! श्रीवर जी ! इस भयानक रात में आप कहाँ जा रहे हैं ? आइए, इस झोपड़े में विश्राम कीजिए।

(कोई उत्तर नहीं मिलता। दोनों मिलकर जोर-जोर से पुकारते हैं। उत्तर देती है हरहराती हुई यमुना, कड़क-कड़क कर टूट पड़ने

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

वाला रौद्ररूप धारी आकाश। सबको प्रतिहत करता हुआ गूंजता है संगीत :—

अब लौं नसानी, अब ना नसैहों।)

पहला स्वर—ये क्या गा रहे हैं, भैया कैलाश! ध्यान से सुनकर बताओ।

(बिजली फिर चमकती है। अंधकार को जीतने का संकल्प लेकर आगे बढ़ने वाला वह पथिक गाते-गाते दूर चला जाता है।)

दूसरा स्वर—रामू भैया! श्रीवर जी गा रहे हैं :—

अब लौं नसानी, अब ना नसैहौं।......

कैलाश—सुनो, सुनो वे गा रहे हैं।......मेघों के गर्जन और यमुना की धारा के भयावह तर्जन के कारण कुछ समझ में नहीं आ रहा है। कदाचित वे कह रहे हैं :—

'राम कृपा......भव निसा......सिरानी, जागे फिरि न डसैहौं।......और कुछ समझ में नहीं आता।

(बिजली फिर चमकती है और मूसलाधार वर्षा भी होने लगती है। पथिक आगे बढ़ता हुआ दिखाई पड़ता है—वह अपने संगीत की स्वरलहरी में भाव-विभोर प्रतीत होता है।)

दोनों—श्रीवर जी! श्रीवर जी! इस प्रलय-बेला में आप आगे न जायँ। यहाँ इस झोपड़ी में आकर विश्राम करें। बड़ी भयानक रात है।

(संगीत का स्वर कठिनाई से ही सुनाई पड़ता है। एक बार फिर बिजली कौंधती है, और बहुत दूर उस पथिक की झलक दिखाई देती है। बिजली कौंधकर छिप जाती है।)

कैलाश—भगवान् कृष्ण ने महाविषधर शत-शत फणों वाले कालिय नाग को नाथकर उस पर विश्व-विमोहक संगीत छेड़ा था। उसी प्रकार हमारे श्रीवर जी भी शत-शत कालिय नागों से भी अधिक दुर्द्धर्ष इस अन्धकार को पद-

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

दलित कर अपना संगीत छेड़ रहे हैं। अश्रुतपूर्व है यह घटना !

रामू—इस वर्षा और अन्धकार में उन्हें लौटा पाना भी हमारे लिए असंभव है। वर्षा थमे, तो हम लोग पाठक जी के घर चलकर स्थिति को समझने का प्रयत्न करें।

[पर्दा गिरता है]

द्वितीय दृश्य

[पर्दा धीरे-धीरे उठता है। पहले ही जैसा दृश्य। भाद्रपद की अमावस्या की रात्रि का अन्धकार छाया है। सहसा गंभीर गर्जन के साथ विद्युत् का तीव्र प्रकाश चारों ओर भर जाता है, और एक मध्यम श्रेणी के गृहस्थ के घर के भीतरी भाग का कुछ अंश उद्भासित हो उठता है। तीन द्वारों वाले एक सामान्य-से प्रकोष्ठ का लंबा-चौड़ा अलिन्द। बिछी हुई तीन-चार शय्यायें दिखाई पड़ती हैं। सब पर लोग शिर से पैर तक अपना शरीर ढके हुए सोये हैं। ऊपर जोर के खटके का शब्द होता है, जैसे किसी ने तेज धमाके के साथ द्वार को खोला और बन्द किया हो। शय्या पर लेटे हुए एक व्यक्ति, जो गृहस्वामी दीनबन्धु पाठक हैं, खाँसते हुए उठ जाते हैं, और निकट की शय्या पर सोई हुई अपनी पत्नी को पुकारते हैं।]

दीनबंधु—यमुना की माँ ! ओ यमुना की माँ ! उठो, देखो !

यमुना की माँ—(जागकर शय्या पर बैठते हुए) कहो, क्या बात है ? मैं जाग गई हूं। कितना भयानक अन्धकार है। आज वर्षा तो शायद रात भर थमी नहीं।

दीनबंधु—एक क्षण को भी नहीं थमी। बड़ी भयानक रात्रि है। मुझे अटारी पर कुछ खटका मालूम हुआ है, जैसे किसी ने जोर

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

से दरवाजा खोला और बन्द किया हो। क्या यमुना ऊपर अकेली ही सोई है ? रामनाथ और श्यामनाथ दोनों को जगा लो, बहू को भी जगाओ। ऊपर जाकर देखो, क्या बात है ? मैं वात-पीड़ा के कारण सीढ़ियाँ नहीं चढ़ सकता।

यमुना की माँ—(घबड़ाए स्वर में) ओ राम ! ओ श्याम ! ओ बहू ! उठो, जागो। देखो घर में शायद चोर है।

(पास की शय्या पर लेटा हुआ दीनबंधु का कनिष्ठ पुत्र श्यामनाथ उठ बैठता है। दूसरा प्रकोष्ठ खोलकर रामनाथ और उसकी पत्नी आ जाते हैं।)

सब लोग—क्या हुआ पिताजी ?

दीनबंधु– मुझे अटारी पर कुछ खटके और धमाके की आवाज सुनाई पड़ी। वहाँ यमुना अकेली सोई है। मशाल जला लो, दीपक इस अंधेरी रात और अंधड़ में काम नहीं देगा। जाकर देखो क्या बात है ?

(श्यामनाथ प्रकोष्ठ से मशाल लाकर जलाता है तथा रामनाथ और उसकी पत्नी के साथ अटारी पर जल्दी-जल्दी जाता है।)

दीनबंधु—कितनी हठी है यह लड़की ! कितनी बार कहा, अकेली अटारी पर न सोया कर, कहीं डर जायेगी, पर वह मेरी बात हँसकर उड़ा देती है।

यमुना की माँ—हठी नहीं, बचपन से ही यमुना बड़ी स्वाभिमानिनी है। आपने कह दिया, अटारी पर अकेली डरेगी तो उसने वहीं रहकर यह सिद्ध कर दिया कि वह डरना जानती ही नहीं।

दीनबंधु—वह स्वभाव से ही एकान्तप्रिय भी है और वह अटारी तो बचपन से ही उसे बहुत प्यारी है। मैं देखता हूं, विवाह हो जाने से भी उसके स्वभाव में कोई परिवर्तन नहीं हुआ।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

यमुना की माँ—परिवर्तन क्या हो ? अभी विवाह हुए दिन ही कितने हुए ? बच्ची है अभी !

दीनबंधु—मेरी बीमारी में तुमने लड़की को तो बुला भेजा, पर श्रीवर जी को क्यों नहीं बुलाया ? उनको बुरा लगा होगा ।

यमुना की माँ—मैंने बुलाया उन्हें भी था । पर उनके गुरु द्वारका आदि धामों की यात्रा पर जाने वाले थे, उन्हें भेजने जाना आवश्यक था । इसलिए वे न आ सके, बेटी को भेज दिया । कई दिनों से दुर्दिन लगा है, वर्षा थमे तो रामनाथ को भेज दूँ, साथ ही ले आवे ।

दीनबंधु—भगवान् की कृपा से पुत्री और जामाता में बड़ा प्रेम है । दोनों का दाम्पत्य-जीवन उत्तरोत्तर सुखी हो, प्रभु से यही प्रार्थना है ।

यमुना की माँ—सचमुच दोनों में बड़ा प्रेम है । यह भगवान् की परम कृपा और हमारा चरम सौभाग्य है । बहू कहती थी, श्रीवर जी यमुना को रत्नावली कहते हैं ।

दीनबंधु—बड़ा अच्छा नाम है । श्रीवर जी कवि भी तो हैं ।

(सीढ़ियों पर से तेजी से उतरने की आवाज । रामनाथ और श्यामनाथ घबड़ाये हुए आते हैं ।)

रामनाथ—बड़ा गजब हो गया, पिताजी !

श्यामनाथ—अनर्थ हो गया, माता जी !

दीनबंधु—(अत्यन्त विकल होकर) तुम लोग कुछ कहोगे भी या इसी तरह उद्वेग में मेरे प्राण ले लोगे ! जल्दी बोलो तो हुआ क्या ? बेटी यमुना कुशल से तो है ?

रामनाथ—यमुना तो ठीक है, पर बहनोई जी इस अँधेरी रात में अकेले ही आये और उलटे पाँव लौट गये ।

दीनबंधु—(आश्चर्य से) पागल हुए हो रामनाथ ! यह तुम क्या

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

कहते हो ? तुम्हारे बहनोई जी अर्थात् श्रीवर जी इस अँधेरी रात में अकेले आये और उलटे पाँव लौट गये !

रामनाथ—मैं अक्षरश: सत्य कह रहा हूं, पिताजी !

यमुना की माँ—बोल श्यामनाथ ! क्या यह सच है ? जमाई जी इस भयानक रात में आकर फिर चले क्यों गये ? ऐसी अनहोनी क्यों हुई ? जल्दी बोलो, मेरा हृदय अनिष्ट की आशंका से फटा जा रहा है ।

श्यामनाथ—बात सर्वथा सत्य है, माता जी ! वे आये थे, पर यमुना बहिन ने उन्हें कुछ ऐसी लगती बात कह दी कि वे तुरन्त लौट पड़े, एक क्षण भी नहीं ठहरे ।

दीनबंधु—हाय, यह कैसा अनिष्ट हुआ । बेटी यमुना ! तूने यह क्या कह डाला ? यह वर्षा, यह वज्रपात ! इसमें श्रीवर जी आये और लौट भी गये ! भगवान् तेरा क्या विधान है !

यमुना की माँ—(आँसू गिराती हुई) भगवान्, अब तुम्हारा ही अवलंब है । हमारी लाज तुम्हारे हाथ है । इस अँधेरे में जमाई जी किधर गये होंगे ?

दीनबंधु—अभी कहाँ और कितनी दूर गये होंगे । अभी-अभी ही तो हमने द्वार खुलने और बन्द होने की आवाज सुनी थी । (रामनाथ और श्यामनाथ से) बच्चो, तुम दोनों मशाल लेकर नदी के घाट की ओर देखो । उधर से ही आने-जाने का मार्ग है ।

यमुना की माँ—नदी में तो बाढ़ आई हुई है, इस अन्धकार में उन्होंने नदी कैसे पार की होगी ? इस प्रलयकाल में तो नौका मिलना भी कठिन है । इसलिए वे दूर नहीं जा सके होंगे, अधिक से अधिक घाट तक पहुंचे होंगे । जल्दी जाओ बेटा, और पैर पड़कर उन्हें मना लाओ ।

दीनबंधु—हमारा घर गाँव के बाहर है, नहीं तो पड़ोसियों को

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

बुलाता। बुलाने जाने में देर होगी और इस बीच वे किसी ओर निकल जा सकते हैं। इसलिए तुम दोनों जल्दी जाओ। सूचीभेद्य अन्धकार है। वर्षा में मशाल न बुझने पावे, छाता लगा लो और दंड ले लो। जल्दी जाओ।

रामनाथ—हमें किसी पड़ोसी की आवश्यकता नहीं, पिता जी! हम अभी जा रहे हैं।

(दोनों मशाल, छाता और डंडा लेकर तेजी से जाते हैं।)

दीनबंधु—(ऊंचे स्वर से) ओ बहू! यमुना को लेकर नीचे आ जा। बता भी तो, यह सब कैसे हुआ? जल्दी आ नहीं तो मैं पागल हो जाऊँगा। मेरा हृदय फटा जा रहा है।

(यमुना को साथ लेकर बहू नीचे आती है, दोनों ही समवयस्का और सुन्दरी हैं। बहू श्वशुर के सामने आकर मुख को अर्द्ध अवगुंठित कर लेती है, और यमुना नत शिर, पैर के अँगूठे से धरती कुरेदने लगती है।)

यमुना की माँ—बोल बहू, क्या हुआ? यमुना ने तुझे क्या बताया है?

बहू—श्रीवर जी जब अपने गुरुदेव को तीर्थयात्रा के लिए बिदा करके अपने घर लौटे, तो ननद जी के बिना उन्हें घर बहुत सूना लगा। एकाकीपन उनके लिए इतना असह्य हो गया कि वे दुर्दिन की उपेक्षा कर यहाँ के लिए तत्काल चल पड़े। मार्ग में ही रात्रि हो गयी, फिर भी वे चलते ही रहे और जब वे हमारे ग्राम के नदी-तट पर पहुंचे, तो रात आधी से अधिक बीत चुकी थी।

दीनबंधु—बहू! नदी में तो भयावह बाढ़ आई हुई है, उन्होंने इसे पार कैसे कर लिया?

बहू—पिता जी, तैरकर नदी पार करने का संकल्प करके उन्होंने सहारे के लिए उपयुक्त काष्ठखण्ड की खोज की। अँधेरे में

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

कुछ दिखाई तो देता ही नहीं था, उनके हाथ लग गया एक डूबे हुए व्यक्ति का शव, जो बह कर किनारे लग गया था। उसी का अवलंब लेकर उन्होंने यह बढ़ी और उमड़ी हुई नदी पार कर ली।

यमुना की माँ—हे राम! यह दुःसाहस। भगवान् ने ही रक्षा कर ली, तेरी बड़ी-बड़ी बाँहें हैं मेरे प्रभु!

दीनबंधु—फिर क्या हुआ?

बहू—वे जब यहाँ आये, तो द्वार बन्द था। द्वार पर उन्होंने दस्तक दी, पर अंधड़ के प्रकोप के कारण किसी ने सुना नहीं। उन्हें अटारी के बन्द झरोखे से दीपक के प्रकाश का कुछ आभास मिला। अतएव उन्होंने पीछे से छत पर चढ़ने का उपाय किया। पिछवारे के पनारे से एक साँप लटक रहा था, उन्होंने रस्सी समझकर उसे पकड़कर छत पर चढ़ने का प्रयत्न किया।

(दीनबंधु और उनकी पत्नी दोनों सिहर उठते हैं।)

दीनबंधु—हाय! हाय। उस सर्प से वे बचे कैसे? सांसारिक लोगों को रज्जु में सर्प का भ्रम होता है, उन्हें सर्प में रज्जु का भ्रम हुआ।

बहू—सर्प को पहचान कर तेजी से उन्होंने उसे झटक कर दूर फेंक दिया, भगवान् की कृपा से सर्प को काटने का अवसर ही नहीं मिला।

यमुना की माँ—बड़े दयालु हो परमात्मा! तुमने मेरी बेटी के सिंदूर की रक्षा की।

दीनबंधु—हाँ बहू, फिर वे ऊपर कैसे आये?

बहू—वे घूमकर गोष्ठ की छानी के पास गये, और उस पर चढ़ कर छत पर आ गये। अटारी का द्वार उन्होंने थपथपाया, ननद ने उठकर द्वार खोला। श्लथ शरीर श्रीवरजी को सउ

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

कुसमय में इस अवस्था में अटारी के द्वार पर खड़े देख ये विस्मय से अवाक् रह गई।

दीनबंधु—यमुना का विस्मय से अवाक् रह जाना तो स्वाभाविक था, पर वे तुरन्त ही लौट क्यों गये ?

बहू—पिताजी, उनका लौट जाना ही तो हमारे लिए शल्य बन गया है। जब ननदजी ने उनकी इस अश्रुतपूर्व दुःसाहसपूर्ण यात्रा का वृत्त सुना, तो उन्हें आर्य नारी-सुलभ लज्जा, संकोच और आत्मग्लानि का अनुभव हुआ। उन्होंने श्रीवरजी से कहा—'तुम बिना बुलाये इस प्रलयकाल जैसी रात्रि में मेरे पिता के घर चले आये, तुम को अपनी कुल-मर्यादा का भी ध्यान नहीं आया ! मैं कल सवेरे अपने पितृगृह में अपना मुँह कैसे दिखाऊँगी ?'

यमुना की माँ—हाय ! तूने यह क्या कह दिया, बेटी ! तेरे प्रति उनके इस प्रेम को देखकर हम अपने को धन्य मानते। बेटी, तूने उन्हें इस वर्षा और रात में लौटकर जाने कैसे दिया, कितनी कठोर हो गई है तू ?

बहू—माँ, यह सब किसी अदृष्ट का विधान है। ननद जी के मुँह से निकल गया—'मैं जानती हूं, तुम्हारी प्रतिभा अनन्यसाधारण है। आज तुमने जिस पौरुष का प्रमाण दिया है, वह अभूतपूर्व है। पर तुम्हारी इस प्रतिभा और पुरुषार्थ का केन्द्र बिन्दु मेरा क्षुद्र नश्वर रूप मात्र है। मेरे हाड़-माँस के शरीर में तुम्हारी जितनी आसक्ति है, उतनी यदि श्रीराम में होती, तो तुम्हारा और मेरा दोनों का जीवन सार्थक हो जाता।'

दीनबंधु—यह बोल गई मेरी बेटी ! इसे मैं इसकी कठोरता कहूं या आर्यनारी की सहज संस्कारशीलता। फिर भी, श्रीवर जी का लौट जाना तो बड़ा भारी अमंगल है। इतना सुनकर ही वे लौट गये।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

बहू—हाँ, पिताजी ! ननदजी की बात सुनकर कुछ देर वे नेत्र मूंद कर ध्यानस्थ रहे, उनका मुखमंडल किसी अनिर्वचनीय तेज से मंडित हो उठा। फिर वे धीरे-धीरे बोले-- 'प्रिये रत्नावली ! गुरु की वाणी के प्रताप से भी जिस प्रकाश का अनुभव मैं आज तक अपने भीतर न कर पाया था, उसका साक्षात्कार आज तुमने मुझे करवा दिया है। तुम स्वयं सरस्वती हो। तुम्हारे स्वर के शरों ने मेरे सब बंधन काट दिये हैं। जिस कली में मैं बंद था, आज वह मेरे ही भीतर खुल गई है। मुक्ति का महा प्रवाह किसी महान् लक्ष्य की ओर बढ़ने को मुझे प्रेरित कर रहा है। अब मेरे लिए न घर में रहने की आवश्यकता है और न अवकाश ही। तुमने मुझे बंधनमुक्त किया है। मैं वचन देता हूं, तुम्हारी इसी वाणी के प्रकाश में मैं श्रीराम के मंगलमय चरणों की शरण खोजूंगा।' यह कहकर उन्होंने झटके से द्वार खोल दिया, और जिस मार्ग से आये थे उसी से द्रुत और दृढ़ गति से चले गये।

यमुना की माँ—हाय बहू, जाते समय यमुना ने उन्हें रोका नहीं?

बहू—ननद जी रोकतीं क्या ? स्थिति ने सहसा ऐसा मोड़ लें लिया, जिसकी कल्पना इन्हें भी नहीं थी। जाते समय उनके मुख पर ऐसी स्वर्गीय आभा और संकल्प की दृढ़ता छा गयी थी कि वे उन्हें निर्निमेष देखती ही रह गयीं। कुछ कह न पायीं। उनके चले जाने पर ही इन्हें आत्मबोध हुआ।

(रामनाथ और श्यामनाथ का प्रवेश। मशाल बुझ गई है, दोनों बड़े दुःखी दिखाई पड़ते हैं।)

दीनबंधु—कुछ पता लगा, बेटा ?

रामनाथ—कुछ नहीं, पिता जी ! हम लोग नदी के किनारे-किनारे उन्हें खोजते हुए दूर तक चले गये। हम लोगों ने उनका

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

नाम लेकर जोर-जोर से पुकारा भी, पर कोई उत्तर नहीं।

श्यामनाथ—एक बार बिजली बड़े जोर से कड़की, आँखों को चौंधिया देनेवाला प्रकाश चारों ओर भर गया। उस समय मुझे लगा जैसे कोई व्यक्ति उमड़ती हुई प्रबल धारा के विरुद्ध काष्ठ जैसी किसी वस्तु का सहारा लिये तैरता हुआ दूसरे किनारे की ओर जा रहा है। यह देखकर मैंने दुगने वेग से अत्यन्त अधीर होकर बहनोई जी का नाम लेकर बार-बार पुकारा, पर मेरे पास केवल मेरी क्षीण प्रतिध्वनि ही लौटी। पता नहीं, वह कौन व्यक्ति था?

दीनबंधु—वही थे तेरे बहनोई, बेटा! वह काष्ठखंड नहीं था, शव था। उसी के सहारे तैरकर वे यहाँ आये थे, और उसी के सहारे फिर वे उलटी धार पार कर गये हैं। अपनी भाभी और बहिन से पूछ। मुझे लगता है, उन्होंने भगवान् बुद्ध की तरह महाभिनिष्क्रमण किया है।

यमुना की माँ—मुझे तुम लोगों की बातें समझ में नहीं आतीं, मेरा हृदय अकुला रहा है। तुम सब लोग अधिक प्रकाश की व्यवस्था करके नदी के किनारे जाकर उनकी खोज करो। (दीनबंधु से) तुम भी अकर्मण्यता छोड़कर उठो। गाँव में जाकर अपने आत्मीयों को जगा लो और सबको लेकर श्रीवर जी की खोज करो। मेरे मन को धैर्य नहीं। जाओ, बैठो नहीं। (रोती है)

यमुना—माँ, धैर्य धरो। प्रकाश की व्यवस्था नहीं करनी पड़ेगी, वह स्वयं आ रहा है। देखो, वर्षा और तूफान दोनों थम गये हैं, अंधकार भी कम होने लगा है, पौ फट रही है। प्राची ने इस रात्रि के हृदय में सूर्य की किरणों के तीर मार दिये हैं। प्रभात दूर नहीं।

(माँ आगे बढ़कर यमुना को अपने हृदय से लगा लेती है। वह माँ

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

के वक्ष में अपना मुंह छिपाकर रो पड़ती है। वर्षा का शब्द कम हो जाता है, अंधकार क्षीण होते-होते सर्वथा दूर हो जाता है। ग्राम का एक केवट आता है, शरीर पर केवल अधोवस्त्र है, जो भीगा हुआ है। उसके पीछे-पीछे गाँव का एक ब्राह्मण युवक है, उसके सब वस्त्र भीगे हैं।)

दीनबंधु—रामू ! कहाँ से आ रहे हो ?

रामू—दंडवत करता हूँ, बाबा। मैं कल साँझ नौका लेकर उस पार गया था। इस पार आने के पहले ही आँधी और पानी आ गया। उसी किनारे मड़ैया में रात भर पड़े रहना पड़ा। ये काशीनाथ भैया भी अपने संबंधियों के यहाँ गये थे, नदी पार नहीं कर पाये। आँधी-पानी के कारण उधर ही रह जाना पड़ा।

दीनबन्धु—काशीनाथ भैया ! तुम श्रीवर जी को तो पहचानते ही हो, विवाह के समय से ही उनसे तुम्हारा सौहार्द है। रात में वे तुम लोगों को उस पार कहीं दिखाई तो नहीं पड़े ?

काशीनाथ—वही बताने तो हम लोग आये हैं, पाठक काका !

रामू—बाबा ! उनको हमने घोर आँधी और वर्षा में उमड़ती नदी पार कर उस पार जाते हुए देखा। मुझको तो वह सब चमत्कार-सा लगा।

काशीनाथ—काका ! हम लोग मड़ैया में बैठे थे, नाव किनारे बँधी थी। तेज आँधी के झोंकों के कारण हम लोग मड़ैया में भी भीग रहे थे—नींद आने की कोई संभावना ही नहीं थी। बिजली रह-रह कर कड़क उठती थी। लगता था, जैसे प्रकाश की लपलपाती हुई असंख्य तलवारें उस घने अंधेरे को काट कर टुकड़े-टुकड़े कर देना चाहती हैं। आधी रात के पश्चात् बिजली के ऐसे ही प्रकाश में सहसा दिखाई पड़ा,

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

कोई व्यक्ति एक काष्ठखंड जैसी किसी वस्तु के सहारे नदी पार करता हुआ बढ़ा चला आ रहा है।

रामू—बाबा ! ऐसा पुरुषार्थ, ऐसा साहस जीवन में कभी नहीं देखा। हम जल के जीव केवट भी ऐसी वर्षा और अंधकार में ऐसी धारा पार करने की हिम्मत नहीं कर सकते।

दीनबंधु—अच्छा ! आगे कहो, प्राण कंठ को आ रहे हैं।

काशीनाथ—यह देखकर हम लोग वर्षा में भी मड़ैया छोड़कर बाहर आ गये। हम लोग जानना चाहते थे कि मृत्यु के साथ खेलने वाला यह कौन है ? उसी समय फिर बिजली गरज कर दिशाओं को कँपाती हुई लपलपा उठी। उस प्रकाश में हमने देखा, वे श्रीवर जी हैं।

यमुना की माँ—हाय ! तुम लोगों ने उन्हें रोका नहीं, जाने दिया। वे अब कहाँ हैं, कुशल से तो हैं ? (सिसकती है)

काशीनाथ—उनको पहचान कर हम लोग उनको पुकारते हुए उनकी ओर दौड़े। हम लोगों ने अपना नाम बतलाते हुए कहा—'श्रीवर जी ! आप कहाँ जा रहे हैं ? इस वर्षा में यहाँ मड़ैया में विश्राम कीजिए।'

दीनबंधु—फिर !

रामू—फिर क्या, उन्होंने हमारी पुकार पर ध्यान ही नहीं दिया। फिर गहरा अंधेरा हो गया। वे किधर गये और कहाँ गये, यह हम जान नहीं सके। अवश्य कुछ क्षणों तक एक गीत की टेक सुनाई पड़ी।

दीनबंधु—गीत की टेक ! क्या था वह ?

रामू—मैं तो केवल इतना ही सुन पाया—'अब लौं नसानी अब ना नसैहौं।' हम लोग इस स्वर के सहारे उस दिशा में कुछ दूर बढ़े भी, पर फिर कुछ सुनाई नहीं पड़ा। काशीनाथ भैया, तुमको कुछ याद है ! क्या था वह गीत ?

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

काशीनाथ—मुझे पूरा स्मरण है, यह मैं नहीं कह सकता । कुछ-कुछ ध्यान में आ रहा है ।

दीनबंधु--जो कुछ ध्यान में आ रहा हो, वह सुनाओ भैया काशीनाथ !

काशीनाथ—काका ! वह गीत कुछ इस प्रकार था—

अब लौं नसानी अब ना नसैहों ।
राम कृपा भव निसा सिरानी, जागे फिर न डसैहों ।
पायो नाम चारु चिंतामनि, उर-कर ते न खसैहौं ।
स्याम रूप सुचि रुचिर कसौटी, चित कंचनहिं कसैहों ।।

इतना ही मैं ठीक-ठीक सुन पाया । इसे सुनकर ही मैं बाहर की घोर वर्षा, तूफान, गर्जन-तर्जन आदि को भूल गया, मेरे पैर उनकी खोज में आगे नहीं बढ़ पाये ।

दीनबंधु—क्या कहा ?……'स्याम रूप सुचि रुचिर कसौटी चित कंचनहिं कसैहों ।' बेटा काशीनाथ ! अपने सब आत्मीयों को साथ लेकर श्रीवर जी को खोजो, कैलाश कवि और जमींदार का लड़का समर सिंह भी उनका मित्र है । तुम सब लोग प्रयत्न करो । प्रकाश हो गया है, मैं भी घाट तक चलता हूं ।

काशीनाथ—चलो ।

यमुना की माँ—मैं भी घाट तक चलती हूं ।

(सब जाते हैं, बहू और यमुना घर में ही रह जाती हैं ।)

बहू—(गीत याद कर) ननद जी, स्याम रूप की कसौटी पर चित-कंचन को कसने की प्रेरणा तुम्हीं ने तो श्रीवर जी को दी है ।

यमुना—(दीर्घ निःश्वास लेकर) ठीक कहती हो, भाभी !

बहू—ऐसा करते हुए तुम्हें तनिक भी कष्ट नहीं हुआ, ननद जी !

यमुना—यह मत पूछो, भाभी ! (रोने लगती है) मुझे उन्हें लौटाते हुए जो वेदना हुई, उसे कैसे कहूं ? हृदय दग्ध हुआ जा रहा

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

है, शरीर की सब संधियाँ टूट रही हैं, शिरायें फटी जा रही हैं, किंतु भाभी…… !

बहू—किंतु क्या ? (रोती हुई यमुना को हृदय से लगाकर) ननद जी ! धीरज धरिए और मुझसे अपने मन की बात कहिए !

यमुना—(रोते हुए) भाभी ! जीवन में उन्होंने कष्ट ही कष्ट सहे हैं। विधाता ने उनके भाग्य में सुख लिखा ही नहीं था। माता-पिता ने जन्मते ही त्याग दिया। जिस धात्री ने उन्हें शैशव में मातृ-स्नेह दिया, वह भी अकाल ही काल-कवलित हुई। अनाथ शैशव की जो यातनायें उन्होंने झेलीं, उनको सहते हुए वे जीवित रह सके—यही आश्चर्य है।

बहू—ननद जी ! अपना यह सब पूर्व वृत्त उन्होंने तुम्हें विवाह के बाद बतलाया।

यमुना—हाँ, भाभी ! मैं उनके बाल-जीवन का वृत्त सुनकर एक रात रोती ही रह गई थी।

बहू—धात्री के स्नेह से वंचित होकर उनका शैशव कैसे बीता बहिन ?

यमुना—कहते थे, जगज्जननी पार्वती की प्रेरणा से उन्हें एक महान गुरु नरहरि देव का अवलंब मिला। वे परम सहृदय गुरु भी उनकी दुरवस्था देखकर अपना वैराग्य भूल कर हिमाद्रि की तरह शत-शत धाराओं में द्रवीभूत हो उठे थे। इन गुरु ने ही उनको वैष्णवों के पाँच संस्कार कराये और राममंत्र की दीक्षा दी। वेद, वेदान्त, षड्दर्शन, तंत्र, पुराण आदि के अध्ययन का क्रम भी उन्होंने ही आरम्भ करवाया।

बहू—धन्य हैं ये गुरु ! उन्होंने माता और पिता दोंनो के अभाव की पूर्ति की।

यमुना—यथार्थ है, भाभी ! उन्होंने ही इनकी प्रतिभा और मनीषा

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

के पोषण के लिए वैष्णव सम्प्रदाय के वैखानस और पांचरा दोनों आगमों तथा अष्टांग योग की दीक्षा दी ।

बहू—मैं भी एक ऐसे विद्वान् पिता की पुत्री हूं जिनके पास सुदूर क्षेत्रों के छात्र वेदान्त पढ़ने आते हैं। अतएव, शिक्षा का कुछ महत्व मैं भी जानती हूं। श्रीवर जी के अध्ययन की जैसी पूर्ण व्यवस्था उनके गुरुदेव ने की, वह तो इस देश के पुराने विश्रुत विश्वविद्यालयों में ही हो पाती होगी !

यमुना—इतना ही नहीं, भाभी ! उनकी शिक्षा को सभी दृष्टियों से परिपूर्ण बनाने के लिए गुरुदेव उन्हें काशी के प्रसिद्ध आचार्य शेष सनातन को सौंप आये। उनके चरणों में रहकर उन्होंने पन्द्रह वर्षों तक वेद-वेदांग, इतिहास, पुराण, संगीत, काव्यशास्त्र आदि का सांगोपांग अध्ययन किया। पन्द्रह वर्ष के बाद अपना अध्ययन पूरा कर जब वे गुरुदेव के चरणों में लौटे, तो वे इनको पाकर बड़े प्रसन्न हुए ।

बहू—माँ कह रही थीं, गुरुदेव की आज्ञा से ही उन्होंने विवाह किया है।

यमुना—ऐसी ही बात है, भाभी ! गुरुदेव ने उनसे कहा था, देश और धर्म पर महान् संकट है। इस विपरीत काल में तुम भगवान् के कार्य के एक महान् निमित्त बनकर आये हो। विवाह के पश्चात् तुमको अपना वह लक्ष्य दिखाई पड़ने लगेगा। पहले गार्हस्थ्य जीवन में प्रविष्ट होकर धर्म के व्यावहारिक स्वरूप का अनुभव करो ।

बहू—वह वृत्त मुझे भी ज्ञात है। मैं एक बात जानना चाहती हूं ननद जी ! क्या विवाह के पश्चात् श्रीवर जी की मनोवृत्ति में कुछ परिवर्तन हुआ ?

यमुना—अवश्य, भाभी ! विवाह के पश्चात् ये मेरे प्रति अधिकाधिक मोहाविष्ट होते हुए लगते थे। कहा करते थे—'प्रिये

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

रत्नावली ! इस संघर्ष-संकुल जीवन में तुम्हारी कनकलता-कान्त शरीर-यष्टि की छाया में ही मुझे सुख और विश्रान्ति के ये कुछ क्षण मिले हैं। तुम्हारा शरच्चन्द्रविनिंदक मुख निर्निमेष देखते हुए जीवन का ताप-त्रास दूर कर सकूं, यही कामना शेष है।

बहू—ननदजी ! ऐसे विद्वान, ऐसे प्रतिभाशाली, ऐसे सदाचारी और ऐसे परम रूप-यौवन-सम्पन्न और ऐसे अनन्य प्रेम-परायण पति को तुमने न मालूम कितने जन्मों के संचित पुण्य से पाया है। तुम्हारे भाग्य पर स्वर्ग की अप्सराओं को भी ईर्ष्या होती होगी। फिर भी तुमने उनके इस प्रेम का तिरस्कार किया।

यमुना—भाभी ! मैं भी उन्हें पाकर अपने को परम भाग्यवती मानती थी। उनकी दुग्धकुल्या जैसी परम पवित्र दृष्टि के अभिषेक से मेरे तन, मन, प्राण सब शीतल हो जाते थे। इच्छा होती थी, उनकी इस मुग्ध-लुब्ध निर्निमेष दृष्टि का प्रसाद जन्म-जन्मातर तक पाती रहूं।

बहू—फिर भी तुमने उन्हें हठात् क्यों लौटा दिया ?

यमुना—मैंने उन्हें हृदय पर पत्थर रखकर लौटाया था, भाभी !

बहू—ऐसा क्यों किया तुमने बहिन ?

यमुना—(दीर्घ निःश्वास लेकर) भाभी ! जब मैंने उन्हें पहले-पहल देखा तो मुझे लगा जैसे अनेक जन्मों की साधित शुचिता उनमें मूर्तिमती हो उठी है। दृष्टि ऐसी मानों सभी रूपों, आकारों और सीमाओं को भेद कर किसी निखिल अरूप, निराकार एवं निःसीम को अपने लक्ष्य में बाँधने के लिए सिरजी गई हो। उनके चारों ओर प्रतिभा का ऐसा प्रभा-मण्डल था, प्रथम दर्शन में ही मैंने संकल्प किया कि अपनी

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

आसक्ति में मैं इन्हें विपथ और आत्मविस्मृत नहीं होने दूंगी।

बहू—प्रियतम के ऐसे उच्छ्वसित प्रेम का अवरोध करने का संकल्प तुमने कैसे किया? जब उन्हें तुम्हारे प्रेम का प्रतिदान इष्ट था, तब तुमने उन्हें निराश करने का व्रत लिया।

यमुना—भाभी, प्रिय के परम कल्याण के लिए अपनी सुख-स्पृहा का आत्यंतिक विसर्जन ही प्रेम है। वही मैंने किया है। उन्हें अपने रूप और देह की आसक्ति में बाँधकर मैंने अपने सुख की वांछा नहीं की।

बहू—हाय! इसके लिए तुम्हें जीवन भर पल-पल तिल-तिल जलते रहना होगा। सती एक बार में ही अपना शरीर अग्नि को अर्पित कर देती है। उसका दाह एक-दो क्षणों का है, पर तुमने तो जीवन भर दग्ध होते रहने का यह विरह-व्रत अंगीकार किया है।

यमुना—यह जलना ही अब मेरा जीवन है भाभी! मैं तब तक दीप-शिखा की तरह जलती रहूंगी, जब तक उनके जीवन में परम सिद्धि का प्रभात अवतरित नहीं होता। उसके बाद……!

बहू—(शीघ्रता से) उसके बाद क्या होगा, बहिन ?

(यमुना की माता का प्रवेश)

यमुना की माँ—आ बेटी! मेरे हृदय से लग जा! (यमुना को हृदय से लगा लेती है) तेरे पिता श्रीवर जी की खोज में उनके मित्रों और आत्मीयों को चारों ओर भेज रहे हैं।

(दीनबंधु का प्रवेश)

दीनबंधु—बहू! काशीनाथ, कैलाश, समर सिंह, रामू आदि कई युवक श्रीवर जी की खोज में निकले हैं। उन्होंने प्रतिज्ञा की है कि वे उन्हें अवश्य खोज निकालेंगे। तू मेरे लिए स्नान की व्यवस्था कर दे, पूजा-गृह में पुष्प-नैवेद्य आदि रख दे।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

मैं श्रीमद्भागवत का नवाह पारायण करूँगा और भगवान यशोदानंदन से श्रीवर जी के कल्याण की भीख माँगूंगा।

[पटाक्षेप]

तृतीय दृश्य

[समय— अर्द्ध रात्रि। स्थान—चित्रकूट का मंदाकिनी तट। शारदीय पूर्णिमा की ज्योत्स्ना के ज्वार में नहाकर गिरि-कांतार सरि-सर धरती-आकाश, सब दुग्ध-धवल हो गये हैं। कामद-गिरि के चरण-प्रान्त में मंदाकिनी नदी धनुष की तरह घूम गई है। उसकी लहरों पर चाँदनी कभी ज्योति के पुष्प-गुच्छों के समान खिलती और कभी प्रकाश के कलमषोत्सार तीरों की तरह चारों ओर छूटकर फैलती है। मंदाकिनी तटवर्ती रामघाट पर कुछ साधु, कुछ सद्गृहस्थ और कुछ तीर्थयात्री यह कौमुदी-महोत्सव देखने के लिए समवेत हैं। कुछ लोग भगवन्नाम का जप कर रहे हैं। कतिपय भगवान् राम की चित्रकूट-लीलाओं की भाव-विभोर होकर चर्चा कर रहे हैं। इसी समय एक गीत के स्वर वातावरण में भर जाते है। सब लोग स्तब्ध होकर उसे सुनते-सुनते आत्मलीन हो जाते हैं :—

यह विनती रघुवीर गुसाईं।
और आस विश्वास-भरोसो, हरौ जीव-जड़ताई।।
चहौं न सुगति, सुमति, संपति कछु रिधि-सिधि विपुल बड़ाई
हेतु रहित अनुराग राम-पद बढ़ै अनुदिन अधिकाई।।
कुटिल करम लै जाइ मोंहि जहं-जहं अपनी बरिआई।
तहँ-तहँ जनि छिन छोह छाँड़ियो, कमठ अंड की नाईं।।
या जग में जहँ लगि या तनु की प्रीति-प्रतीति सगाई।
ते सब कहत दास प्रभु ही सों होंहि सिमिटि इक ठाईं।।]

एक यात्री—कैलाश भाई ! यह तो वही परिचित स्वर है जिसको

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

हम इतने वर्षों से खोज रहे हैं। वही ओज, वही तेज, वही औदात्य !

कैलाश—भाई समर सिंह ! ठीक कहते हो। प्राणों में सुधा उड़ेलने वाला वही दिव्य स्वर, वही अपूर्व माधुर्य, वही लोकोत्तर नृत्य ।

दूसरा यात्री—भाई ! आप लोग यह किसके स्वर की चर्चा कर रहे हैं। मैं भी यह गीत सुनकर भाव विभोर हो गया हूं। मैं तो संगीतकला की राजधानी वाराणसी का निवासी हूं। संगीतसम्राटों की साधना का धन वहाँ प्रतिदिन भगवान् विश्वनाथ के पाद-प्रान्त में अर्पित होता रहता है। पर ऐसा अलौकिक संगीत तो मैंने वहाँ भी कभी नहीं सुना।

तीसरा यात्री—यथार्थ है मित्र ! मैंने भी कुछ संगीत-साधना की है, पर यह स्वर तो अश्रुतपूर्व है। त्रिकाल के समष्टिगत आनन्द और वेदना दोनों इसमें समाहित हैं। अयुतायुत चातकों के विरह की पीर, कोटि-कोटि कोकिलाओं की काकली की मिठास इस रस-सिंधु के एक बिंदु के समान भी तो नहीं। कौन हैं ये लोकातीत गायक बंधु ?

दूसरा यात्री—यही मैं भी जानना चाहता हूं। (कैलाश की ओर इंगित करते हुए) संभव है, ये महानुभाव कुछ बता सकें।

कैलाश—असंदिग्ध रूप से मैं भी कुछ नहीं कह सकता। हमारे एक मित्र लगभग चौदह वर्ष पूर्व घर छोड़कर विरक्त होकर चले गये थे। तीर्थों, देवपुरियों और भगवद्धामों में हम उनकी खोज यथाशक्ति करते रहे हैं, पर हमें आज तक सफलता नहीं मिल पाई। आज इस दिव्य संगीत में हमें उनके परिचित स्वर का आभास मिला है।

दूसरा यात्री—किसी स्थानीय जन से यह मालूम हो सकता है कि ये गायक कौन हैं ?

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

कैलाश—ठीक कहते हैं आप ! हाँ आप अपना परिचय तो देने की कृपा करें, सहृदय बंधु !

दूसरा यात्री—मैं काशी का निवासी हूं। वहाँ मुझे लोग मेघा भगत कहते हैं।

कैलाश—आपका दर्शन पाकर काशीपुरी के दर्शन का पुण्य मिल गया। (तीसरे यात्री की ओर देखते हुए) आप भी अपना परिचय दें सौम्य !

तीसरा यात्री—मैं उज्जयिनीदास नाम का गायक हूं। महाकाल की अमरपुरी विश्वविजयिनी उज्जयिनी मेरी जन्मभूमि है। भगवान् के धामों में घूम-घूम कर उनकी लीलाओं का गान करना मेरा जीवन-व्रत है।

कैलाश—मैं कैलाश नाम का कवि हूं और ये हैं मेरे मित्र ग्रामपति समर सिंह राजपूत। आप जैसे सज्जनों के समागम से हम लोगों को अपनी चित्रकूट-यात्रा की सफलता का आभास मिलने लगा है।

मेघा भगत—आप लोगों के दर्शन से मैं कृतकृत्य हूं। यह भगवान् विश्वनाथ की परम कृपा का ही फल है।

उज्जयिनीदास—मैं भी आप लोगों के साहचर्य को भगवान् की अहैतुकी कृपा का पुण्य प्रसाद मानता हूं। अब हम लोग मिलकर इन दिव्य गायक की खोज करें।

कैलाश—हम सब मिलकर यही करेंगे। देखिये न, वह गीत तो समाप्त हो गया, पर उसके स्वर की शिखाओं से दसों दिशायें अब भी दहक रही हैं, नक्षत्र द्विगुण दीप्तिमान प्रतीत होते हैं, ज्योत्स्ना के मेघों से अमृत की धारासार वर्षा अभी भी हो रही है।

समर सिंह—उधर कुछ लोग भगवच्चर्चा कर रहे हैं। हम लोग चलकर उनसे पूछें।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

(सब लोग कुछ दूर बैठी एक भक्त-मण्डली के पास जाते हैं।)

मेघा भगत--संतजनो ! हम लोग एक कष्ट देना चाहते हैं। अभी-अभी एक गीत के स्वर चारों दिशाओं में छाये हुए थे। अनाहत-जैसा ऐसा स्वर हम लोगों ने जीवन में कभी नहीं सुना था। क्या आप बता सकते हैं, इस गीत के गायक कौन हैं और उनके दर्शन कहाँ हो सकते हैं ?

एक भक्त—भाई ! लगभग छः मास पूर्व एक तरुण तपस्वी चित्रकूट आये हैं। वे घने वन में गुफा में निवास करते हैं। उषःकाल अथवा मध्य रात्रि में वे कामद गिरि की परिक्रमा करने अथवा देवदर्शन के लिए निकलते हैं। तभी वे भाव-विभोर होकर भगवान् के भजन गाते रहते हैं। आज भी पूर्णिमा की इस रात्रि में वे इधर से निकल गये हैं।

कैलाश--भक्तराज ! उनके नाम, ग्राम, कुल-शील आदि की कुछ जानकारी आप दे सकते हैं ?

दूसरा भक्त—नहीं भैया ! विरले ही किसी भाग्यशाली को उनके दर्शन हुए होंगे। यहाँ के कुछ वयोवृद्ध संतों से मालूम हुआ है कि वे केवल पयस्विनी का जल पीते हैं और अखण्ड राम-नाम का जप करते हैं। किसी से मिलते-जुलते, बोलते-चालते भी नहीं। इतने दिनों में चित्रकूटवासी केवल उनके कंठ-स्वर से परिचित हो पाये हैं।

उज्जयिनीदास—उनकी गुफा कहाँ है, क्या आप अनुमान से कुछ बता सकते हैं ?

दूसरा भक्त—ठीक-ठीक कुछ कह सकना कठिन है। संतों की एकान्त साधना भूमियों में जाकर उनकी शान्ति-भंग करना भी तो ठीक नहीं होता।

कैलाश—आपका कथन समीचीन है। फिर भी ऐसे महान संतों

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

की तपस्यास्थलियों के सम्बन्ध में श्रद्धावानों की जिज्ञासा स्वाभाविक है।

पहला भक्त—यथार्थ है, भैया ! इन तपस्वी के सम्बन्ध में यह सुना गया है कि उनकी वय अधिक नहीं है और वे बड़े तेजस्वी हैं। कुछ लोगों का कहना है कि वे जयंत पर्वत के ठीक सामने स्फटिक शिला के पास घने वन में पर्वत-शिखर पर गुफा में रहते हैं। कुछ अन्य लोगों का कहना है कि उन्हें अनुसूया जी के निकट किसी गुफा से निकलते हुए देखा गया है।

तीसरा भक्त—भाई ! मैं रीवाँ की ओर से आ रहा था। प्रभात काल था, वन शेफाली की सुगंध से भर गया था। मैंने उस दिन यही स्वर शरभंग आश्रम के निकट सुना था। उसमें जड़ को चेतन, चेतन को जड़, विक्षिप्त को समाधिस्थ और समाधिस्थ को विक्षिप्त बनाने की शक्ति है।

चौथा भक्त—मुझे ये तपस्वी महाभाव के अनन्य साधक प्रतीत होते हैं। वे चित्रकूट की इस चिन्मय भूमि में घूम-घूम कर अहर्निश अपने प्रभु के चरण-चिह्नों की खोज में लगे रहते हैं। तीन दिन पूर्व मैं हनुमान जी के दर्शन के लिए हनुमद्धारा गया था। वहां के एक नैष्ठिक उपासक ने मुझे बताया कि वे उसी स्थान के आस-पास किसी गुफा में निवास करते हैं।

मेघा भगत—उन उपासक से उनके विषय में कुछ और जानकारी मिली ?

चौथा भक्त—वे कहते थे, उन्होंने छः मास तक निराहार रहकर अखंड राम-नाम जप करने का व्रत लिया है। वे केवल पयस्विनी अथवा हनुमद्धारा का जल पीते हैं, आहार के रूप में दूध या फल भी नहीं ग्रहण करते।

मेघा—उन्हें वहाँ रहते कितने दिन बीते हैं ?

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

चौथा भक्त—ठीक तो नहीं कह सकता, पर छे महीने से कम तो नहीं हुए होंगे।

कैलाश—तब तो उनका छे महीने वाला व्रत भी पूरा होने वाला होगा। हो सकता है, अब हम लोगों को उनके दर्शन सुलभ हो जाँय।

पहला भक्त—भगवान् के परम अनुग्रह से ही ऐसे भक्तों के दर्शन प्राप्त होते हैं।

समर सिंह—प्रतीत होता है, दीर्घकाल के बाद हमारा भाग्योदय होने वाला है। कैलाश भाई! हम लोग चलकर इन महापुरुष को खोज निकालें।

कैलाश—हम लोग अभी चल सकते हैं। भगवान् राम की कीर्ति की तरह यह चाँदनी आज निखिल भूमण्डल के कल्मष धो डालने के लिए कृतसंकल्प प्रतीत होती है।

मेघा—मैं भी आपके साथ रहूँगा।

उज्जयिनीदास—आप लोग मुझे अपने साहचर्य का अवलम्ब प्रदान करें। मैं भी उन तपोधन के दर्शन का अभिलाषी हूं।

कैलाश—अवश्य चलिए। हम लोग पहले वनदेवी के चरणों में प्रणाम करेंगे, फिर कामदगिरि की परिक्रमा करेंगे।

चौथा—वहाँ से जानकी कुण्ड, स्फटिक शिला होते हुए गुप्त गोदावरी, अनुसूया और शरभंग आश्रम का दर्शन कीजिए। उधर से लौटकर आप लोग जयंत पर्वत की पगडंडी पकड़ कर सीतारसोई होते हुए हनुमद्धारा जाइए। भगवान् अंजनीनंदन के चरण भक्तों के लिए कोटि-कोटि कल्पवृक्षों के समान हैं।

कैलाश—हम लोग ऐसा ही करेंगे, संत प्रवर।

(सब लोग भक्तों को हाथ जोड़कर चलते हैं। भक्तगण भगवन्नाम का कीर्तन करते हैं।)

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

पहला भक्त—ये लोग उन तपस्वी के सम्बन्धी या सुहृद प्रतीत होते हैं।

दूसरा भक्त—लगता तो ऐसा ही है।

तीसरा भक्त—यदि यह सत्य है कि उन्होंने निराहार रहकर छे मास का अखंड रामनाम जप का अनुष्ठान किया है, तो अब उनके दर्शन सुलभ हो जाने की संभावना है।

चौथा भक्त—ठीक ही है। यहाँ रहते हुए उन्हें लगभग छे महीने तो हो ही गए हैं।

पहला भक्त—यह अनुष्ठान उनकी वैयक्तिक साधना का अंग है अथवा देश पर आये हुए संकट के प्रतिकार के लिए किया गया है, यह कहना कठिन है।

चौथा भक्त—यह कैसे कहा जा सकता है। यह अवश्य है, बड़े-बड़े संत इस अवसर पर देश और धर्म के कल्याण के लिए तपस्या कर रहे हैं। हम लोग अधिक नहीं कर सकते, तो कम से कम उनके उद्देश्य को समझने का प्रयत्न ही शक्ति भर करें।

पहला भक्त—देश की स्वतंत्रता का सूर्य अस्त हो गया है, तीर्थ और देवालय ध्वस्त हो रहे हैं, और जन-जीवन नितान्त त्रस्त है। ऐसे कुसमय में धर्म की रक्षा ये संत ही कर रहे हैं। वे ही हमारे भीतर यह विश्वास जगा रहे हैं कि भगवान् हमारे निकट हैं।

दूसरा भक्त—ये संत जनता को निर्भय होकर जीने का संदेश दे रहे हैं। उनका कहना है, भगवान् प्रत्येक वस्तु और प्रत्येक व्यक्ति में विद्यमान हैं, हम उन्हीं में चलते-फिरते हैं और उन्हीं में निवास करते हैं।

तीसरा भक्त—भगवान् की सार्वत्रिक और सार्वकालिक उपस्थिति की चेतना निरंतर बनी रहे, इसके लिए संतजन नाम-जप

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

और कीर्तन पर सबसे अधिक बल देते हैं। उसी का अवलंब लें।

सब लोग—साधु ! साधु !

(सब मिलकर 'श्री राम जय राम सीताराम' का गान करते हैं। लगता है, चित्रकूट की वन्य एवं पार्वत्य प्रकृति द्रवीभूत होकर उस स्वर के साथ एक रस और एक रूप हो गई है। पर्दा गिर जाता है।)

चतुर्थ दृश्य

[स्थान—चित्रकूट के अन्तर्गत कामदगिरि का पादप्रान्त। तीन प्रहर रात्रि बीत गयी है। कैलाशनाथ, रामू, समरसिंह, मेघा भगत और उज्जयिनीदास कामदगिरि की परिक्रमा के मार्ग पर बैठे परस्पर वार्तालाप कर रहे हैं। चाँदनी में धरती और आकाश सब नहाये हुए हैं। शेफाली की गंध के परिप्लावन से समस्त प्रकृति आत्मलीन बनी हुई प्रतीत होती है।]

कैलाशनाथ—कई दिनों से हम लोग गहन वन के अंतराल में उन तपस्वी को खोज रहे हैं। अभी तक उनके आश्रम का कोई पता नहीं चल पाया है।

समर सिंह—शरद्पूर्णिमा को उनका कंठ-स्वर सुनकर हम भाव-विभोर हो गए थे। उसके पश्चात् वह भी नहीं सुनाई पड़ा।

मेघा भगत—अब एक ही उपाय है। हम लोग इसी प्रकार उपवास करते हुए निरन्तर कामदगिरि की परिक्रमा करते रहें। जब तक हमें उन तपस्वी के दर्शन नहीं होते, तब तक परिक्रमा का हमारा यह क्रम बराबर चलता रहेगा। कभी न कभी यहीं उनके दर्शन होंगे।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

रामू—आप ठीक कहते हैं। मुझे भी यही विश्वास है, इसी परिक्रमा में हमें उनके दर्शन होंगे। आज मेरी दाहिनी आँख भी फड़क रही है।

कैलाश—मेरे मन में भी आज अपूर्व उल्लास है। पौ फट रही है। लगता है, आज कोई नई उषा धरती पर उतरेगी।

(सहसा दूर से आती हुई किसी गीत की एक टेक वातावरण में गूंजने लगती है। सब मित्र हर्षोल्लास से भर जाते हैं।)

समर सिंह—रामू भाई ! यह तो वही परिचित स्वर है।

मेघा—निश्चय ही यह वही परिचित स्वर है जिसको हमने अंधकारमयी वर्षा की रात्रि में सुना था। यह स्वर धीरे-धीरे इसी ओर आ रहा है। लगता है, ये तपस्वी भगवान् का लीला-गान करते हुए इधर ही आ रहे हैं। हम लोग उनके मार्ग में दंडवत् प्रणत हो जाँय। उनकी कृपा हमें प्राप्त होगी।

(सभी लोग गीत के आने की दिशा का निर्धारण कर उसी ओर मुखकर साष्टांग प्रणाम की मुद्रा में परिक्रमा के मार्ग पर लेट जाते हैं। गीत निकट आ जाता है, पादुकाओं की ध्वनि भी सुनाई पड़ने लगती है। कृष्ण श्मश्रुओं से मंडित मुखमंडल वाले एक तपस्वी प्रवेश करते हैं। उनकी बड़ी-बड़ी आँखें, प्रशस्त पीन वक्षस्थल, आजानुविलंबित भुजायें और शाल जैसा लम्बा शरीर उनके व्यक्तित्व को ऐसी सात्विक आभा से मण्डित किये हुए है जिसके समक्ष प्रभात की प्रभा भी श्रीहीन प्रतीत होती है। वे चलते हुए उच्छ्वसित किन्तु मन्द ध्वनि में गा रहे हैं—

विनती भरत करत कर जोरे।
दीनबंधु दीनता दीन की कबहुं परै जनि मोरे।
तुमसे तुमहि नाथ मोको, मोसे जन तुमको बहुतेरे।
इहै जानि, पहिचानि प्रीति, छमिए अब औगुन मेरे।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

सामने दंडवत भूमिष्ठ लोगों को देखकर खड़े हो जाते हैं, गायन रुक जाता है।)

तपस्वी—भक्तजनों ! भगवान् राम आपका मंगल करें। कृपा कर बतलायें, आप लोग कौन हैं और परिक्रमा के मार्ग में इस प्रकार क्यों पड़े हैं ?

कैलाशनाथ, रामू और समर सिंह—(वाणी और आकृति से उन्हें पहचान कर दौड़कर चरणों में लिपट जाते हैं) श्रीवर जी ! हम लोग आपके आश्रित और आत्मीय कैलाशनाथ, रामू और समर सिंह हैं। हम लोग कई दिनों से गहन वन में आपको खोज रहे हैं, आज हमारा चिरकाल से सोया हुआ भाग्य जाग गया है।

(तपस्वी तीनों को उठाकर हृदय से लगा लेते हैं, स्नेह के आवेग के कारण कोई कुछ नहीं बोलता। मेघा भगत, उज्जयिनी दास भी दौड़कर उनके चरणों से लिपट जाते हैं।)

तपस्वी—(कैलाशनाथ से) मित्र ! ये दोनों महानुभाव कौन हैं ?

कैलाशनाथ—(मेघा भगत की ओर इंगित करते हुए) ये प्रौढ़ सज्जन काशी-निवासी भक्त प्रवर मेघा जी हैं, और वे उज्जयिनी के संगीतशास्त्रज्ञ उज्जयिनीदास हैं। हम लोग यहाँ आपको खोजने आये थे, यहीं इन सज्जनों से भेंट हुई।

मेघा भगत—मैं प्रभु के चरणों से अंकित इस चित्रकूट की भूमि के दर्शन के लिए आया था। उसी पुण्य के परिणामस्वरूप मुझे आज भक्ति के साकार विग्रहस्वरूप आपके दर्शन हुए।

तपस्वी—मेरी परिक्रमा अभी पूरी नहीं हुई है। (कुछ दूर स्थित एक शिला की ओर संकेत करते हुए) फिर भी हम लोग वहाँ चलकर कुछ देर बैठें और बातचीत करें।

(आगे-आगे तपस्वी तुलसीदास और उनके पीछे सब लोग जाते हैं।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

तुलसीदास जी के बैठ जाने के बाद सब लोग भूमि पर नीचे बैठ जाते हैं ।)

रामू—सघन जटाजूट और बढ़ी हुई दाढ़ी से आच्छादित होने पर भी आपकी तेजस्वी मुखाकृति हम लोगों से छिपी नहीं रह सकी । अनेक वर्षों से हम लोग तीर्थों और तपोवनों में आपकी खोज कर रहे हैं ।

समर सिंह—यदि आज यहाँ आपके दर्शन न हो जाते, तो हम लोग मेघा भगत जी के साथ काशी जाते और उनकी सहायता से दक्षिण भारत के पंचवटी, किष्किधा आदि क्षेत्रों के परिव्राजक महात्माओं से सम्बन्ध स्थापित करते ।

तुलसीदास—(मेघा भगत की ओर देखकर) भगत जी के नाम से मैं अपने विद्यार्थी-जीवन से ही परिचित हूं । जब मैं वाराणसी में अपने परम पूज्य आचार्य शेष सनातन की पाठशाला में ब्रह्मचर्य आश्रम में रहकर शिक्षा प्राप्त कर रहा था, उन दिनों भगत जी ने वाल्मीकि रामायण के आधार पर रामलीला के अभिनय का प्रवर्तन किया था । भक्तों और संतों को उस लीलाभिनय ने दृढ़ अवलम्ब प्रदान किया था । भगत जी भगवान् के महान् कार्य के निमित्त बनकर अवतरित हुए हैं । (सब लोग आदरपूर्वक मेघा भगत की ओर देखते हैं ।)

मेघा—तपोधन ! मुझ अज्ञात कुल-शील को आप बहुत बड़ा सम्मान दे रहे हैं । संतों का यही स्वभाव है । मैं इस योग्य नहीं । सनातन महाराज के दर्शन मैंने किये हैं । वे वेद, वेदाङ्ग और षड्दर्शन के अपने समय के आचार्य थे । उनकी पाठशाला भी मैंने देखी थी । पर मुझे यह आभास भी नहीं हो पाया था कि इस आकर में एक महारत्न पोषित हो रहा है ।

तुलसीदास—वे 'दिसायामोक्ख' कोटि के आचार्य थे । देश के कोने-

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

कोने से छात्र उनके पास अध्ययन के लिये आते थे। मैंने निगम, वेदांग, पुराणादि का अध्ययन उन्हीं के श्रीमुख से किया था।

रामू--आप तो आगमों के भी पंडित हैं, वे भी आपने उन्हीं आचार्य से पढ़े थे।

तुलसीदास—बंधु ! आगमों की दीक्षा मुझे मेरे वैष्णव गुरु नरहरि दास जी महाराज से मिली थी। वे सात्वत आगम में निष्णात थे। अन्य आगमों की शिक्षा भी उन्होंने ही मुझे योग्य गुरुओं से दिलवायी थी।

मेघा भगत—इन चौदह वर्षों में तो आपने निगम और आगम तत्व के अनेकानेक मर्मज्ञों और सिद्ध साधकों से भेंट की होगी।

तुलसीदास—जो हुआ सो गुरुरूपधारी शिव की कृपा से। उन्होंने मुझे केवल आध्यात्मिक साधना के महान् केन्द्रों का ही साक्षात्कार नहीं करवाया, अपितु देश, समाज और जनजीवन को अत्यन्त निकट से देखने का आदेश भी दिया। उन्होंने समसामयिक राजनीति और अर्थतंत्र को समझने की दृष्टि भी मुझे प्रदान की।

रामू—हम लोग समझते थे, आप इन दिनों तीर्थस्थानों और तपोवनों में ही साधना-निरत रहे होंगे। पर, आप………।

तुलसीदास— मैं कई वर्षों तक तीर्थ-स्थानों को छोड़कर गाँवों में भी घूमता रहा हूं, राजनीति और शासन के केन्द्रों को भी मैंने निकट से देखा है। देश के प्रतिक्षण बदलते हुए इतिहास के सार्थक स्पंदन भी मैंने बहुत निकट से सुने हैं।

मेघा भगत -- देश और समाज-दर्शन के अपने कुछ अनुभव आप हमें भी बतावें।

तुलसीदास—क्या कहूं भक्त प्रवर ! काल तोपची है, धरती उसकी तोप बन गयी है। भयंकर अनीति की बारूद भर-भरकर वह

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

पाप के पलीते से अत्याचारी राजाओं और शासकों के गोले चला रहा है। प्रजा का विनाश हो गया है। दरिद्रता के रावण ने देश को चारों ओर से दबा रखा है, जनता भूख की आग में जली जा रही है।

कैलाशनाथ—श्रीवर जी, हम समझ नहीं पा रहे ! आप इन दिनों आध्यात्मिक साधना कर रहे थे अथवा समाज-साधना।

तुलसीदास—दोनों में कोई अन्तर नहीं है, बंधु ! लोक की पीड़ा के आत्यंतिक शमन के लिए ही अहैतुकी करुणा की प्रेरणा से हमारे देश में आध्यात्मिक साधना की परम्परा चलायी गई थी। अध्यात्म के नाम पर जगत से उदासीनता और पलायन का उपदेश तथा साधना के नाम पर व्यक्तिगत मुक्ति का प्रयत्न, यह जीवन का बहुत ऊँचा उद्देश्य नहीं माना गया है। मेरे गुरुदेव ने आध्यात्मिक साधना की लोकसंतापहारिणी परम्परा की पुनर्प्रतिष्ठा का आदेश मुझे दिया है।

रामू—तभी भूख की ज्वाला में जलती हुई जनता के दुःख-दर्द का अनुभव आप कर सके हैं।

तुलसीदास—यह साधारण अनुभव नहीं है रामू ! यह आत्मदाह की यंत्रणा है। पेट की जिस आग में देश जल रहा है, वह बड़वाग्नि से भी अधिक दुःसह और दुरन्त है। मैंने इस देश की राजधानी दिल्ली के आसपास के क्षेत्र भी देखे हैं। लोग पेड़ों की पत्तियां और छाल खाकर अपना पेट भरते हैं। पेट की वह आग बुझाने के लिए वे अपने बेटे-बेटियों को भी बेच देते हैं।

मेघा भगत—दिल्ली में कुछ दिन पूर्व शासन का परिवर्तन हुआ है। सुना है, मुगलवंश के अकबर अब बादशाह हो गये हैं।

तुलसीदास—यह सत्य है ! शासन-परिवर्तन की यह घटना मैंने स्वयं देखी है। महावीर हेमू को पराजित कर अकबर ने

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

यह साम्राज्य पाया है। जिन दिनों पानीपत का यह निर्णायक युद्ध हुआ था, मैं निकट ही कुरुक्षेत्र में साधना कर रहा था। मैं हेमू से मिलना भी चाहता था, पर मुझे वह अवसर नहीं मिला।

मेघा भगत—सुना है, हेमू ने विधर्मियों के शासन को उखाड़ फेंकने का प्रयत्न किया था।

तुलसीदास—हेमू के आरम्भिक प्रयत्न बहुत सफल रहे। उन्होंने अपार सैन्य शक्ति संगठित कर टार्डीबेग खाँ को पराजित कर दिल्ली जीत ली।

समर सिंह—फिर भी हेमू की पराजय हुई। ऐसा क्यों हुआ ?

तुलसीदास—हेमू अप्रतिम वीर था। विधर्मियों और विदेशियों की पराधीनता से देश को मुक्त करने की उदात्त भावना भी उनके हृदय में थी। किंतु आरंभिक सफलताओं ने उनके विवेक और धैर्य को संतुलित नहीं रहने दिया। यदि दिल्ली जीत कर अविलम्ब उन्होंने अकबर के विरुद्ध अभियान किया होता, तो विजय उन्हें ही प्राप्त हुई होती।

मेघा भगत—सुना है, दिल्ली पर विजय प्राप्त कर हेमू ने विक्रमादित्य की उपाधि धारण की।

तुलसीदास—हेमू का यह कार्य बहुत विवेकपूर्ण नहीं था। उनके सहयोगी पठानों ने यह मान लिया कि वे हिंदू साम्राज्य स्थापित करने का स्वप्न देख रहे हैं, इसलिए उन्होंने हेमू का साथ छोड़ दिया।

मेघा भगत—राजपूत शासक हेमू का साथ दे सकते थे।

तुलसीदास—हमारे देश का यही दुर्भाग्य है। राजपूत राजा भी हेमू और विदेशी मुगलों के युद्ध में तटस्थ हो गये।

समर सिंह—राजपूतों ने ऐसा क्यों किया ?

तुलसीदास—इस देश के क्षत्रिय राजा पिछली कई शताब्दियों से

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

राजनीतिक विवेक से शून्य हैं। वस्तुतः इन क्षत्रिय-राजाओं के पारस्परिक युद्धों की ज्वाला में ही इस देश का भाग्य दग्ध हो गया है। वे विदेशी और विधर्मी शत्रुओं के विरुद्ध भी कभी एक नहीं हो पाते। हेमू के साथ सहयोग करने में उनके वर्ण की उच्चता का दंभ बाधक हो गया।

मेघा भगत—यह कैसे ?

तुलसीदास—हेमू वैश्य वर्ण का था। राजपूत नरेश विधर्मियों की पराधीनता स्वीकार कर सकते हैं, पर वैश्य या शूद्र को अपना शासक नहीं मान सकते। मैं समझता हूं इस वर्ण-दंभ के कारण ही उन्होंने हेमू के साथ सहयोग नहीं किया। यह प्रवृत्ति मेरी दृष्टि में देशद्रोह से कम नहीं है।

समरसिंह—क्या हेमू ने राजपूत राजाओं से सहायता माँगी थी ?

तुलसीदास—यह मैं नहीं कह सकता। यदि मैं हेमू से भेंट कर पाता, तो उनसे अनुरोध करता कि वह राष्ट्रहित की दृष्टि से राजपूत राजाओं से सहयोग की याचना करे।

समरसिंह—यदि हेमू ने सहायता ही नहीं मांगी हो, तो राजपूत राजाओं को देशद्रोह का अपराधी कैसे माना जा सकता है ?

तुलसीदास—देश और धर्म के हित की दृष्टि से राजपूत राजाओं को अनाहूत होने पर भी हेमू के साथ सहयोग करना चाहिए था। ऐसे धर्मयुद्धों के लिए ही क्षत्रिय-मातायें वीर पुत्रों को जन्म देती हैं। अकबर के सेनापति बैरम खां को आशंका थी कि हेमू के साथ राजपूत राजाओं की संधि हो सकती है। इसलिए उसने समय नहीं खोया। इधर हेमू ने दिल्ली पर अधिकार किया और उधर बैरम खां ने उस पर आक्रमण कर दिया। पठान और राजपूत किसी ने हेमू का साथ नहीं दिया।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

मेघा भगत—क्या केवल क्षत्रिय ही वर्ण की उच्चता के दंभ से पीड़ित हैं ?

तुलसीदास—ऐसा नहीं है। ब्राह्मणों में यह अभिमान और दंभ सबसे अधिक है। ऋत और अमृत जीविका से जीवन-यापन करने वाले ब्राह्मणों के वंशज आज वेद और शास्त्रों का व्यवसाय करते हैं। उनका अधःपतन ही दूसरे वर्णों के अधः-पतन का प्रमुख कारण है। चैतन्य महाप्रभु स्वयं अत्यन्त कुलीन ब्राह्मण कुल में उत्पन्न हुए थे। उन्होंने व्यवस्था दी है, जन्म से कोई ब्राह्मण नहीं होता। तपोमय जीवन और कर्म ही ब्राह्मणत्व की कसौटी हैं।

मेघा भगत—क्या आपकी दृष्टि में वर्ण-व्यवस्था की अब कोई उपयोगिता नहीं रह गयी है ?

तुलसीदास—संप्रति स्थिति तो ऐसी ही प्रतीत होती है। गुण और कर्म के प्रतीक के रूप में वर्ण-व्यवस्था की स्थापना हुई थी। अब वह विकृत होकर जाति की जड़ परंपरा के रूप में परिणत हो गयी है। इस जातीय अभिमान को ब्राह्मण वर्ग सबसे अधिक बढ़ावा दे रहा है। उन्होंने अपने समाज के एक बड़े वर्ग को अस्पृश्य बना दिया है। यह दलित वर्ग थोड़े से प्रलोभन से शासकों का धर्म स्वीकार कर लेता है।

मेघा भगत—तो फिर उपाय क्या है ?

तुलसीदास—बाहरी उपाय तो प्रायः सब असफल हो गये हैं। हेमू के कुछ वर्ष पूर्व चित्तौड़ के सूर्यवंशी महाराणा सांगा ने अकबर के बाबा बाबर के विरुद्ध प्रचण्ड अभियान किया था। आरम्भ में उन्हें भी सफलता मिली, पर अंत में खानवा के युद्ध में छल से बाबर ने विजय पाई। उस युद्ध में महाराणा सांगा के पचासी घाव लगे थे।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

समरसिंह—पचासी घाव ! उनका शौर्य भीष्म पितामह का स्मरण दिलाता है।

तुलसीदास—फिर भी महाराणा बाबर के साथ विजय-प्राप्ति तक युद्ध जारी रखना चाहते थे। पर उनके सरदारों ने ही उन्हें विष देकर मार डाला।

मेघा भगत—राष्ट्र की रक्षा का जिन पर दायित्व है, उनका ऐसा पतन !

तुलसीदास—इसीलिये मैं कहता हूं, बाह्य प्रयास विफल हो गये हैं। राष्ट्र के खड्ग की धार कुंठित हो गयी है। ब्राह्मणमेधा भी संकीर्ण और अश्मीभूत हो गयी है। राष्ट्र के पथ-प्रदर्शन की क्षमता उसमें नहीं है।

कैलाशनाथ—तो इसका अर्थ है कि अब हमारे देश और धर्म के लिए कोई आशा शेष नहीं।

तुलसीदास—ऐसा नहीं है बंधु ! मेरा कहना यह है कि हमारा सबसे दुर्द्धर्ष शत्रु हमारे भीतर निवास करता है। सबसे पहले उसे पहचानना होगा; फिर उसे पराजित और निर्जीव करना होगा। भीतर के शत्रु पर विजय प्राप्त किये बिना बाहर के शत्रु को जीत पाना असंभव है।

कैलाशनाथ—बात कुछ कुछ समझ में आ रही है। निश्चय ही हमारा सबसे बड़ा शत्रु हमारे भीतर है। उसी के कारण हम बाहरी शत्रुओं से बार बार पराजित और पददलित हो रहे हैं।

तुलसीदास—इसीलिए हमें पहले उसी के विरुद्ध संघर्ष छेड़ना है।

मेघा भगत—यह कैसे होगा ?

तुलसीदास—पूर्व और दक्षिण भारत से भक्ति के आन्दोलन का महाप्रवाह उत्तर की ओर आया है, आ रहा है। उसने जाति-पाँति और ऊँच-नीच के भेद-भाव पर प्रचंड प्रहार

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

किया है। समता की भूमि पर समाज के पुनर्गठन के लिए उसने एक मौलिक आधार खोज निकाला है। इस दिशा में और भी बहुत बड़े-बड़े प्रयत्न हो रहे हैं। समाज के जीवन को इस ऊर्ध्वमुखी विराट भागवत-चेतना के साथ जोड़ना होगा।

मेघा भगत—इसका बाह्य व्यावहारिक रूप क्या होगा ?

तुलसीदास—व्यक्ति और समाज दोनों के जीवन का पुनर्निर्माण करना होगा। अब समय नहीं है। मुझे आज ही चित्रकूट से दक्षिण भारत की यात्रा पर जाना है और भगवान् राम के वन-गमन के चरण-चिह्नों का अनुसरण करते हुए पंचवटी, पंपासर, किष्किधा आदि होते हुए रामेश्वर और कन्या कुमारी तक सम्पूर्ण देश का दर्शन करना है।

मेघा भगत—तो फिर आपके दर्शन कब होंगे ? क्या मैं इस यात्रा में आपके साथ चल सकता हूँ ?

तुलसीदास—यह यात्रा मुझे अकेले ही करनी है, गुरुदेव का ऐसा ही आदेश है। मैं लौटकर काशी में आपके दर्शन करूँगा। इस बीच आप अपनी रामलीला को पुनर्गठित कर उसके अधिकाधिक प्रचार का प्रयत्न करें। जन-जन में राम-चेतना जगा दें।

मेघा भगत—आपकी आज्ञा का शक्ति-भर पालन करूँगा।

तुलसीदास—(कैलाशनाथ, समर सिंह और रामू से) बंधुओ ! दक्षिण की यात्रा से लौटने पर आप लोगों के दर्शन का सौभाग्य भगवान् राम की कृपा से फिर मिल सकता है। इस समय आज्ञा चाहता हूं। सूर्योदय भी होनेवाला है। नित्य सेवा से निवृत्त होकर मुझे यात्रा प्रारम्भ करनी है(उठते हैं।)

कैलाश—आपने बहिन रत्नावली के लिए कोई संदेश नहीं दिया।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

उन पुण्यशीला ने भगवती सीता के आदर्श को अपने जीवन में उतारा है।

रामू—बहिन रत्ना के लिए आप संदेश नहीं अपना कोई स्मृति-चिह्न भेजिए।

तुलसीदास—तो आओ बंधुओ ! इधर भगवान् राम की लीलाओं का गायन करने के लिये जो कुछ लिखा है, अपनी वे नयी रचनाएँ मैं देवी के लिए भेजता हूं। आप लोग मेरे साथ आवें।

('विनती भरत करत कर जोरे' गाते हुए चल देते हैं। कैलाशनाथ, रामू और समर सिंह पीछे-पीछे जाते हैं।)

[पटाक्षेप]

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

द्वितीय अंक

प्रथम दृश्य

[स्थान—दीनबंधु पाठक के घर से संलग्न भगवान् राम का मंदिर। समय रात्रि का प्रथम प्रहर। मंदिर के प्रांगण में तुलसी-चत्वर के निकट दीपक जल रहा है, धूप की धूमलता और सुगन्ध चारों ओर छाई है। चत्वर के निकट अपनी प्रतिवेशिनियों और ग्रामवासिनियों से घिरी देवी रत्नावली और उनकी भाभी सरस्वती बैठी हैं। ढोलक बज रही है। सब मिलकर 'रामलला नहछू' का गान कर रही हैं। गायन समाप्त होने पर सब देवियाँ कुछ देर भावविभोर बनी मौन बैठी रहती हैं। कैलाशनाथ प्रवेश कर रत्नावली के चरण छूते हैं।]

रत्नावली--आयुष्मान् हो, भैया।

कैलाशनाथ—कल विवाह-पंचमी है, उसकी व्यवस्था के सम्बन्ध में कोई विशेष आदेश है, बहिन ?

रत्नावली—तुम्हारी व्यवस्था पूर्ण है, भैया। तुमने जो योजना बनाई है, मैं शक्ति भर नारी-समाज में उसे कार्यान्वित कर रही हूं।

सरस्वती—देवर ! जबसे आप बहनोई जी के लिखे हुऐ ग्रंथ ले आये हैं, ननद जी को बड़ा भारी अवलंब मिल गया है। अभी हम लोगों ने मिलकर 'राम लला नहछू' का गायन पूरा किया है।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

कैलाशनाथ—यह उचित ही है। 'राम लला नहछू' श्रीवर जी ने जनकपुरी में वहाँ के भावुक भक्तों के अनुरोध पर राम-विवाह के महोत्सव पर गाये जाने के लिए लिखा था। कल भगवान् राम के विवाह की परम मंगलमयी तिथि है, घर-घर 'जानकी-मंगल' का गान होना चाहिए।

एक स्त्री—क्या 'जानकी-मंगल' भी मिथिला में ही लिखा गया था ?

कैलाशनाथ—ऐसा ही है माता ! जब श्रीवर जी पशुपति नाथ के दर्शन करने गये, तो वहीं उन्होंने हिमालय की गोद में बैठकर हैंमवती गिरिजा की आराधना की और 'पार्वती-मंगल' लिखा।

सरस्वती—मिथिला में राम-विवाह का महोत्सव किस प्रकार मनाया जाता है ?

कैलाशनाथ—वैष्णव उपासना में भगवान् की लीलाओं का अभिनय प्रेमा भक्ति प्राप्त करने का प्रमुख साधन है। मिथिला में अगहन के शुक्ल पक्ष की पंचमी को राम विवाह का पर्व बड़े समारोह से मनाया जाता है। जनकपुर धाम उसका केन्द्र बन जाता है।

सरस्वती—जनकपुर के इस उत्सव की क्या विशेषता है ?

कैलाशनाथ—सम्पूर्ण मिथिला में जानकी जी बेटी मानी जाती हैं। मिथिला की स्त्रियां उस दिन निर्जल और निराहार व्रत रखकर संध्या समय किशोरी जी और दूल्हा सरकार के स्वरूपों की विवाह-विधि संपन्न करती हैं। श्रीवर जी ने मुझे बताया है कि संपूर्ण जनकपुर धाम उस दिन राम जानकी के मनमोहन रूप की भावना से प्राणवंत हो उठता है, वस्तुतः 'दूल्हा सरकार' और 'किशोरी जू' ही जनमानस में अवतरित हो जाते हैं।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

सरस्वती—मुझे लगता है, इसी महोत्सव की प्रेरणा से 'जानकी मंगल' लिखा गया है।

कैलाशनाथ—अपने गुरु से आज्ञा पाकर श्रीवर जी जनकपुर गये थे। जानकी मंदिर में रहते हुए वहीं उन्होंने 'जानकी-मंगल' लिखा।

रत्नावली—हम लोग भी कल निर्जल व्रत रखकर राम-विवाह का महोत्सव मनायेंगे।

कैलाशनाथ—बहिन ! कार्तिक की पूर्णिमा को तुमने चान्द्रायण व्रत पूरा किया है। इतनी जल्दी इतने कठोर व्रत का विधान मुझे उचित नहीं प्रतीत होता।

रत्नावली—मेरा यही धर्म है, भैया !

सरस्वती—तो हम लोग भी आपके साथ वैसा ही निर्जल निराहार व्रत करेंगी।

कैलाशनाथ—हमारे मंडल का संपूर्ण ग्राम-समाज और हमारे ग्राम के आबाल-वृद्ध भी इसी विधि से विवाह महोत्सव मनायेंगे। श्रीवर जी की जो रचनाएं मैं अपने साथ लाया हूं, गाँव-गाँव उनका सामूहिक वाचन और गायन होगा। उनकी वाणी में लोक के पापों को धो डालने की क्षमता है।

एक वृद्धा—मैं पड़ोस के गाँव से रत्नावली बेटी को देखने आई थी। इनके तप और शील की सुगंध चारों ओर फैल रही है। हम लोग भी जमाई जी की वाणी सुनकर अपना जन्म सफल करना चाहती हैं।

कैलाशनाथ—उसकी व्यवस्था हो गयी है, माता ! गाँव-गाँव में उनकी वाणी के गायक पहुंच रहे हैं। जहाँ कहीं इस वाणी की गूँज जाती है, वहाँ राम और सीता के चरित्र की चेतना जग जाती है।

सरस्वती—देवर ! आपने मुझे जो कुछ बताया है, उससे लगता है

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

बहनोई जी की वाणी और व्यक्तित्व को निमित्त बताकर जनता के जीवन का स्वरूप बदल देने वाली महाशक्ति आविर्भूत हो रही है। वैष्णव साधना की समस्त शक्ति मानों उनकी वाणी बनकर अवतरित होनेवाली है।

कैलाशनाथ—यह सत्य है भाभी ! श्रीवर जी का विश्वास है, संपूर्ण वेदों, पुराणों, आगमों तथा शास्त्रों के प्राण प्रणवरूपी नादामृत ने ही भगवान् राम के नाम के रूप में अवतार लिया था। मेरा विश्वास है, श्रीवर जी की वाणी उसी नादामृत से आप्लावित है।

(नेपथ्य में सामूहिक गान सुनाई पड़ता है। गान के स्वर भक्ति-भावना एवं दिव्य संगीत के सर्वोच्च शिखर को स्पर्श करते प्रतीत होते हैं—

देस सुहावन पावन वेद बखानिय !
भूमि तिलक सम तिरहुत त्रिभुवन जानिय !!
तहँ बस नगर जनकपुर परम उजागर !
सीय लच्छि जहँ प्रगटी सब सुख सागर !!
जनक नाम तेहि नगर बसै नरनायक !
सब गुन अवधि न दूसर पटतर लायक !!
भयउ न होइहि है न, जनक सम नरवइ !
सीय सुता भै जासु सकल मंगल मइ !!
नृप लखि कुँवर सयानि बोलि गुरु परिजन !
करि मत रचेउ स्वयंबर सिव धनु धरि पन !!)

सरस्वती—ये कौन लोग हैं जो गायन करते हुए इधर ही आ रहे हैं ?

कैलाशनाथ—भाभी ! आप जानती ही हैं, उज्जयिनी दास चित्रकूट से हम लोगों के साथ इधर ही आ गये थे। उन्होंने ही हमारे ग्राम के कुछ प्रतिभाशाली जनों को संगीत की

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

शिक्षा दी है। वे मंडली के साथ रत्नावली बहिन को 'जानकी मंगल' सुनाने आ रहे हैं।

(गायकों की मण्डली गायन करती हुई मंदिर के प्रांगण में प्रवेश करती है, उज्जयिनी दास सबसे आगे हैं। गायन चल रहा है :—

पन धरेउ सिव धनु रचि स्वयंबर अति रुचिर रचना बनी।
जनु प्रगटि चतुरानन देखाई चतुरता सब आपनी॥
पुनि देस-देस सदेस पठयउ भूप सुनि सुख पावहीं।
सब साजि-साजि समाज राजा जनक नगरहिं आवहीं॥

गायकों की मंडली तुलसी-चत्वर के निकट पहुंचती है। गायन रुक जाता हैं। सब लोग पहले भगवान की मूर्ति के समक्ष प्रणत होते हैं और फिर रत्नावली देवी को प्रणाम करते हैं।)

रत्नावली—भगवान् राम तुम्हारा कल्याण करें, भाई। (उज्जयिनी दास से) आपके स्वर में 'जानकी मंगल' साकार हो उठा है। आपका संगीत राम-जानकी का सामीप्य प्राप्त कराने वाला राजपथ है।

उज्जयिनी दास—यह सब आपके दिव्य शील का प्रताप है, देवी !

कैलाश नाथ—आप बहिन को वह गीत आज अवश्य सुना दें जो श्रीवर जी ने राम-विवाह के पर्व पर जनकपुर में लिखा और गाया था।

उज्जयिनी दास—आप जो सामग्री चित्रकूट से लाये हैं उसी में वह गीत भी है। देवी से अधिक उसके सुनने का अधिकारी और कौन है। मैं उसे अवश्य सुनाऊँगा।

(उज्जयिनी दास संकेत करते हैं, मृदंग, झांझ, करताल आदि बजने लगते हैं, गायन आरम्भ होता है :—

दूलह राय, सीय दुलही री !
घन दामिनि बर बरन हरन-मन सुंदरता नख सिख निबही री।
ब्याह-बिभूषन-बसन-बिभूषित, सखि, अवली लखि ठगि सी रही री॥
जीवन-जनम-लाहु लोचन-फल है इतनोइ, लह्यो आजु सही री।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

सुषमा-सुरभि सिंगार-छीर दुहि मयन अमिय-मय कियो है दही री।
मथि माखन सिय राम संवारे, सकल भुवन-छवि मनहुं मही री ।)

सरस्वती—कैसी अनूठी उद्भावना है । रूप की राशि हैं सीता और राम । काम और रति को तो केवल 'सीला' और 'लवनी' मिली है ।

कैलाशनाथ—मुझे लगता है, श्रीवर जी की वाणी में स्वयं राम का अवतार होनेवाला है ।

उज्जयिनीदास—आपका अनुमान सत्य है । वे लोकोत्तर महाकवि हैं । वे अपनी वाणी द्वारा ऐसी अदम्य महाशक्ति का आह्वान करते हुए प्रतीत होते हैं जिसका अवलंब लेकर हमारा समाज अपनी पराजय और परवशता के पार जा सकता है ।

(श्यामू केवट का प्रवेश । वह धरती पर सिर टेककर रत्नावली देवी को प्रणाम करता है । अन्य उपस्थित जनों को हाथ जोड़कर अभिवादन करता है । रत्नावली हाथ उठाकर आशीर्वाद देती हैं ।)

कैलाशनाथ—आज नाव लेकर कुछ जल्दी ही इस पार आ गये, श्यामू भाई ।

श्यामू—दादा ! आज उस पर एक बड़े महात्मा आ गये । संभवतः वे बहनोई जी के परिचितों में हैं । सरयू की परिक्रमा, जनकपुरी की यात्रा आदि में वे उनके साथ थे । दक्षिण भारत की यात्रा में भी वे पंचवटी तक उनके साथ गये थे । उन्हें लेकर जल्दी ही इस ओर आना पड़ा ।

उज्जयिनीदास—ऐसे महात्मा इस ग्राम में पधारे, यह बड़े सौभाग्य का विषय है ।

कैलाशनाथ—क्या नाम है उन महात्मा का ?

श्यामू—उनका नाम है बाबा बेनीमाधव दास । वे विशेष रूप से बहिन रत्नावली के दर्शन करने के लिए आये हैं । कहते हैं, जिनकी प्रेरणा से गोसाईं जी को महान् सिद्धि प्राप्त हुई है,

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

मैं उनका आशीर्वाद प्राप्त कर अपना जीवन सफल बनाना चाहता हूं।

रत्नावली—मैं किस योग्य हूं, भैया ? स्वामी के सम्मान का भार मैं नहीं उठा सकती। मैं ग्लानि में गली जा रही हूं।

कैलाशनाथ—बहिन, आप प्रकृतिस्थ हों, मैं उन महात्मा से जाकर मिलता हूं। वे इस समय कहाँ है, श्यामू ?

श्यामू—वे बाहर बैठक में पाठक बाबा के साथ बैठे हैं।

(कैलाशनाथ बाहर जाने लगते हैं। उसी समय दीनबंधु पाठक के साथ बाबा वेनीमाधव दास प्रवेश करते हैं।)

दीनबंधु—देखो बहू ! ये महात्मा दक्षिण के तीर्थों की यात्रा कर यहाँ पधारे हैं। पंचवटी में जमाई जी से इनकी भेंट हुई थी। ये महाराजश्री उनके प्रामाणिक समाचार दे सकते हैं।

(सब लोग उठकर बाबा बेनीमाधव दास को प्रणाम करते हैं, और एक चौकी पर उन्हें आसन प्रदान करते हैं। वे रत्नावली देवी को देखकर भक्तिपूर्वक हाथ जोड़कर प्रणाम करते हैं और चौकी पर आसन ग्रहण करते हैं। दीनबंधु पाठक भी उनके निकट भूमि पर बैठते हैं। सब लोग बैठ जाते हैं।)

कैलाशनाथ—आपने इस छोटे से ग्राम में पधारने की कृपा की। हम लोगों के जीवन के मरु में मानों कल्पतरु ही उग आया है।

बेनी माधव—आपका गाँव युग-युग तक इतिहास में प्रसिद्ध रहेगा। जिस ग्राम में इस युग के सबसे बड़े तपस्वी और भक्त के हृदय में विवेक के महासूर्य का उदय हुआ, जो ग्राम संसार की इस युग की महान् विभूति रत्नावली के जन्म से शत-शत तीर्थों के समान पवित्र हो गया है, उस ग्राम के दर्शन से बढ़कर जीवधारी का पुण्य क्या हो सकता है। मैं धन्य हो गया हूं, पिताजी।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

रत्नावली—(नतशिर दीनबंधु पाठक से) पिताजी, मैं इस प्रशंसा की अधिकारिणी नहीं हूं। इससे मेरी रक्षा कीजिए।

दीनबंधु—पुत्री, तूने दोनों कुलों को पवित्र कर दिया है। जनजीवन की अंतश्चेतना तेरे तप और शील की सुगंध से आपूरित है। किसी के सहज प्रशंसा-भाव पर प्रतिबन्ध कैसे लगाया जा सकता है?

बेनीमाधव—ऐसी ही बात है, पिता जी!

कैलाशनाथ—महात्मन्, हम लोग आपसे बहनोई जी के तप और कार्यकलाप के विषय में सुनना चाहते हैं।

बेनीमाधव—वही सुनाने मैं यहाँ आया हूं। वे मेरे पथ-प्रदर्शक गुरुदेव हैं। उनकी तपस्या अनुपम और शील अनन्य साधारण है। उनकी वाणी परम आश्चर्यमयी है। उसके अर्थ और पद दोनों ही विचित्र हैं। यह अगाध संदेह के समुद्र में डूबते हुओं को पार करने वाली नौका है। मैं कुछ कहने के पहले उसी की वंदना करता हूं।

सरस्वती—महात्मन्, हम लोग जानना चाहते हैं कि आपके गुरुदेव इस समय कहाँ हैं?

बेनीमाधव—चित्रकूट से पंचवटी तक मैं उनके साथ लगा चला गया था। वहाँ से उन्होंने मुझे आदेश देकर लौटा दिया, और स्वयं किष्किंधा एवं पंपासर की ओर बढ़ गये।

सरस्वती—इस समय वे कहाँ होंगे?

बेनीमाधव—यह कहना कठिन है। कारण, वे तीर्थों में जाकर शास्त्र-विधि का पालन करते हैं। जिस तीर्थ में जितना जप-तप विहित है, उतना कर लेने के बाद ही वे आगे बढ़ते हैं। यह यात्रा भी अत्यन्त दुर्गम है।

सरस्वती—जप-तप के अतिरिक्त क्या उनका कोई और कार्यक्रम भी रहता है?

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

बेनी माधव—अवश्य देवी ! वे तीर्थों और तपोवनों के निकटवर्ती ग्रामों में जाते हैं। ग्राम में जाकर वे सबसे निर्धन व्यक्ति की कुटिया में निवास करते हैं। इस प्रकार वे दरिद्रता के दावानल से जले हुए समाज को देखते हुए देश की सेवा के लिए अपना कार्यक्रम निर्धारित करते हुए चल रहे हैं।

सरस्वती—आह ! माता-पिता के आश्रय से वंचित होने के कारण उनकी बाल्यावस्था जिस प्रकार बीती, यौवन भी अब उसी तरह बीत रहा है। (साश्रु हो जाती है, रत्नावली के नेत्रों से भी आँसू टपकने लगते हैं।)

बेनीमाधव—प्रवजन करते हुए वे सिद्ध संतों और सर्वस्व त्यागी प्रेममूर्ति भक्तों का साक्षात्कार करते हैं, बड़े-बड़े शास्त्रज्ञ पंडितों और मनीषी दार्शनिकों से मिलते हैं और उनके साथ देश, धर्म और समाज की विषम समस्याओं पर विचार-विमर्श करते हैं।

सरस्वती—इन समस्याओं के समाधान के संबंध में उन्होंने अन्तिम रूप से कोई निर्णय लिया है ?

बेनी माधव—उन्होंने मुझसे कुछ कहा तो नहीं है, पर लगता है, उनके अन्तःकरण में कोई योजना उद्‌भासित अवश्य हो उठी है। संभवतः वे इस यात्रा से लौटकर उसे कार्यान्वित करेंगे।

दीनबंधु—संतवर ! हम यह जानना चाहते हैं कि वे लौटेंगे कब और हमें उनके दर्शन कब होंगे ?

बेनीमाधव—उनके साथ गंगाजल है। वे रामेश्वर तक जाकर उस पवित्र जल से भगवान् शंकर का अभिषेक सम्पन्न कर लौट पड़ेंगे। उनसे आपकी भेंट अवश्य होगी। काशी और अयोध्या का क्षेत्र ही उनका प्रधान कर्म-स्थल होगा।

दीनबंधु—आप उनसे कहाँ मिल सकेंगे ? क्या इस संबध में उन्होंने आपको कोई आदेश दिया है ?

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

बेनीमाधव—इस सम्बन्ध में उन्होंने मुझसे स्पष्ट रूप से कुछ नहीं कहा है। पर उन्होंने मुझे संवत् १६३१ की रामनवमी को अयोध्या में रहने का आदेश अवश्य दिया है।

दीनबंधु—अभी तो संवत् पचीस ही है। लगता है वे छे वर्ष के बाद ही लौटेंगे। (गहरी साँस लेकर) तब तक यह शरीर रहे न रहे।

बेनी माधव—शरीर अवश्य रहेगा तब तक बाबा! आप निराश न हों।

उज्जयिनीदास—उनकी कर्म-योजना का कुछ आभास तो आपको अवश्य मिला होगा, आप बहुत दिनों से उनके साथ हैं।

बेनी माधव—उनकी कर्म-योजना का स्वरूप-दर्शन तो मुझे थोड़ा बहुत अवश्य होता रहा है।

सरस्वती—हम लोग वही जानना चाहते हैं, महात्मन!

बेनी माधव—मुझे लगता है, उन्होंने राष्ट्र की पराधीनता और दुरवस्था का निदान खोज लिया है। वे उसके निराकरण के लिए कठोर तपस्या में लीन हैं। इतनी कठोर तपस्या करते हुए और दुर्गम अरण्यों में निवास करते हुए भी वे लोकपरांमुख नहीं हैं। जीवनव्यापी कृच्छ्तम अखण्ड तपस्या से उपलब्ध अमृत-तत्व को वे लोक-मंगल के लिए अर्पित कर देना चाहते हैं।

कैलाशनाथ—ऐसा वे किस प्रकार करेंगे? संप्रति देश की अवस्था बड़ी दारुण है। आपने दूर-दूर तक घूम कर उसे अपनी आँखों से देखा है।

उज्जयिनीदास—(बेनी माधव से) बर्बर आक्रमणकारियों के उच्छृङ्खल धर्मोन्माद तथा विधर्मियों के क्रूर और अत्याचारी शासन ने जन-मानस को आंतक, त्रास और गहन निराशा से क्षत-विक्षत कर दिया है। लोक-जीवन विघटित और

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

विमूर्च्छित है। ऐसे में आप जिस साधना की बात करते हैं वह लोक-कल्याण कैसे कर पायेगी ?

कैलाशनाथ--यही तो मैं भी कहता हूं भाई। इस अवस्था का प्रतिकार तो राष्ट्र का संगठित शस्त्रबल ही कर सकता था। वह कुंठित और पराजित है।

बेनीमाधव--आप लोगों का कथन यथार्थ है, पर हमारे गुरुदेव को परिस्थिति की इस विषमता का सम्यक् ज्ञान है। मैंने उन्हें इस विषय पर विचार-विमर्श करते हुए सुना है। शस्त्र-बल के अभाव में किस शक्ति से राष्ट्र को विजयाभियान के पथ पर प्रेरित किया जा सकता है, उसी की खोज में वे लगे हैं। इसलिए भगवान् राम की तरह वे अयोध्या से रामेश्वर की ओर गये हैं। भगवान् कृष्ण की तरह उन्होंने राष्ट्र के सौराष्ट्र तक के पश्चिमी छोरों की यात्रा संपन्न कर लीं है।

कैलाशनाथ--नगाधिराज के दुर्गम क्षेत्रों में भी उन्होंने संचरण कर लिया है।

बेनी माधव--मर्यादा पुरुषोत्तम के जीवनादर्श के लोकमंगलकारी घनत्व और लीला बिहारी योगेश्वर के जीवनादर्श के विराट् विस्तार को अपनी मनीषा में समहित करने के लिए ही उन्होंने यह सब किया है।

उज्जयिनीदास--महात्मन ! आप जो कह रहे हैं, वह अद्भुत और अश्रुत पूर्व है।

बेनीमाधव--मुझे भी लगता है, कुछ अद्भुत और अभूतपूर्व घटित होने वाला है। जिन दिनों वे पंचवटी में थे, खर-दूषण का वध-स्थान उनके दैनिक दर्शन और निदिध्यासन का केन्द्र था। वहाँ जाकर वे भाव-विभोर हो जाते थे।

सरस्वती--उस स्थान की उनकी अनुभूति के विषय में आपको कोई जानकारी है ?

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

बेनीमाधव—एक दिन वे उस स्थान पर जाकर समाधिस्थ हो गये। व्युत्थान के बाद उन्होंने कहा था, 'यहाँ मुझे भगवान् राम के काल-कोदंडधारी स्वरूप के दर्शन होते हैं। मुझे शार्ङ्ग की अधर्म और अन्याय का ध्वंस करने वाली टंकार सुनाई पड़ने लगती है। देवी, मुझे विश्वास हो गया है, उनके माध्यम से शार्ङ्ग का विजय-रव किसी न किसी रूप में ध्वनित होने वाला है, धर्म का गतिहीन स्यंदन फिर विजय-पथ पर धावमान होने वाला है, जीवन के दौर्बल्य और क्लैव्य को उन्मूलित करने वाला पांचजन्य का विजय-घोष फिर जन-मन में गुंजित होगा। आप लोग संवत् १६३१ की रामनवमी तक प्रतीक्षा करें।

(सब लोग कुछ देर स्तब्ध रहते हैं।)

सरस्वती—हम लोग महाराजश्री से पुनः विस्तार से वार्ता करेंगे। इस समय कल के उत्सव की तैयारी पर विचार कर लेना आवश्यक है।

(नेपथ्य में गीत की ध्वनि गूंजती है—राजति राम जानकी-जोरी। पट परिवर्तन होता है।)

द्वितीय दृश्य

[समय—संध्या। स्थान—धनुष्कोटि के समुद्र तट पर एक प्रशस्त स्वच्छ पर्णकुटी। दृष्टि की सीमा के पार-दूर-दूर विस्तृत महोदधि असंख्य उत्तुंग तरंगों के अपने हाथ उठा-उठाकर निरवधि दिक् और काल की चेतना जगा रहा है। समुद्र का स्फीत ओजस्वी गर्जन जीवन और जगत् की समस्त जड़ता को विदीर्ण करता हुआ आकाश तक परिव्याप्त हो रहा है। पर्णकुटी में तुलसीदास सिद्धासन से बैठे हुए ज्वार से वर्द्धमान समुद्र को भाव-विभोर

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

होकर निर्निमेष देख रहे हैं। उनके निकट एक तरुण साधु बैठे हैं। उनकी श्रद्धाभरी दृष्टि तुलसीदास के भावपूर्ण तेजस्वी मुखमंडल पर केन्द्रित है।]

तुलसीदास—कैसा अद्भुत दृश्य है, वेंकटरमन! दिनमणि आकाश से उतरकर समुद्र की गर्जित स्वर्णारुण लहरों के सिंहासन पर समासीन हैं। उनकी मध्याह्नकालीन प्रखरता सायंतन कोमलता में द्रवीभूत हो रही है।

वेंकटरमन—गुरुदेव! प्रतिदिन यहाँ संध्या और प्रभात इस समुद्र पर अरुणिमा के सेतु का निर्माण करते हैं। नल-नील ने लंका पर आक्रमण करने के लिए यहीं सेतु बाँधा था। प्रभु जब इस पर चले होंगे, तो समुद्र इसी तरह उनके चरणों की लालिमा से अनुरंजित हो गया होगा। इसलिए भगवान् के चरण-स्पर्श से पवित्र इस समुद्र को दिवाकर दोनों संध्याओं में आकाश से उतर कर विनत प्रणाम अर्पित करते हैं।

तुलसीदास—सच्चे भक्त हो, वत्स! अभिनंदनीय है तुम्हारी यह भावभूमि। इस समुद्र के जलचर भी धन्य हैं जिनके पूर्वजों ने सेतु बाँधकर समुद्र के पार जाते हुए भगवान् राम के दर्शन किये थे।

वेंकटरमन—भक्ति की इस भावभूमि तक पहुंचाने का काम तो आपने किया है, गुरुदेव! आप भक्ति का जो अभिनव आदर्श अपने व्यवहार और वाणी द्वारा प्रस्तुत कर रहे हैं, वह उत्तर-दक्षिण के बीच तो सेतु का कार्य करेगा ही, वहीं सभी देशों और धर्मों के मनुष्यों के बीच भी युग-युग तक सेतु निर्माण करता रहेगा।

तुलसीदास—तुम्हारे प्राणों में भक्ति का निवास है, वत्स! तुम उस पवित्र पाणन जाति के हो जिसमें तिरुप्पाण आलवार मुनि-वाहन का जन्म हुआ था। अस्पृश्य मानी जाने वाली पाणन जाति मुनिवाहन के जन्म से ब्राह्मणों से भी अधिक पवित्र

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

हो गई। उनकी भक्ति-साधना का दाय तुम्हें वंश-परम्परा से प्राप्त है। तुम्हारी भक्ति स्वयंप्रकाशित है। मैं तुम्हें कुछ सिखा सकने का दंभ नहीं कर सकता।

वेंकट—इतना गौरव आप मुझे न दें, गुरुदेव! आप जैसा कुलीन वेदज्ञ ब्राह्मण मुझ जैसे अस्पृश्य को द्विजों के आचार की सब रूढ़ियां तोड़कर ऐसे वात्सल्य भाव से अपनाये, यह इस युग की एक असाधारण घटना है।

तुलसीदास—कुलीनता के गिरि-गह्वरों में विषधर सर्प पलते हैं। मानवता के सच्चे कल्याणकारी रूप के दर्शन तो उन्हीं के बीच होते हैं, जिन्हें समाज अछूत कहता आ रहा है।

अति ऊँचे भूधरनि पर भुजगनि के अस्थान।
तुलसी अति नीचे सुखद ऊख, धान अरु पान॥

इसके प्रमाण तुम हो वत्स!

वेंकट—आपने भगवान् की भक्ति को सामाजिक समता का पर्याय बना दिया है। जिस प्रकार कुछ समय पूर्व महापुरुष रामानन्द ने जाँति-पाँति का मेदभाव मिटाकर सबको समान रूप से भगवान् की प्रपत्ति का अधिकारी घोषित किया था, आज वही आप कर रहे हैं।

तुलसीदास—मैं कुछ नया नहीं कर रहा। महाप्रभु चैतन्य, रामानंद, महाप्रभु वल्लभाचार्य, निम्बार्काचार्य आदि ने इसी लक्ष्य की सिद्धि के लिए वैष्णव आन्दोलन का नव-प्रवर्तन किया था। उन लोगों ने जाति और जन्मगत वर्ण के बन्धन तोड़ दिये थे।

वेंकट—वैष्णव आन्दोलन का क्रान्तिकारी रूप आपकी वाणी में प्रकट हो रहा है। आपने मेरी माता के हाथ का बनाया प्रसाद ग्रहण कर वैष्णवत्त्व का आदर्श प्रतिष्ठित किया है। इस

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

प्रदेश के ब्राह्मण यदि सुनें, तो आपके शत्रु हो जायेंगे। इसके लिए वे आपको क्षमा नहीं करेंगे।

तुलसीदास—आपकी माता के रूप में मैंने भक्तिमूर्ति शबरी और देवी आण्डाल के दर्शन एक साथ किये। उनके हाथ का प्रसाद पाकर मैं धन्य हो गया। इसके लिए ब्राह्मण मेरा वध भी कर डालें, तो मुझे उसकी चिन्ता नहीं।

वेंकट—ब्राह्मणों की धर्मान्धता, रूढ़िवादिता और दंभ के कट्टर विरोधी होते हुए भी आप उनके प्रति कटु नहीं हैं, इस युग के निर्गुणपंथी संत उनके प्रति बहुत कटु हैं। इसका क्या कारण है ?

तुलसीदास—तुम्हारा प्रश्न अत्यन्त समीचीन है, वत्स ! तुम देख रहे हो, एक ओर तलवार के बल से मुसलमान शासक अपने धर्म का प्रसार कर रहे है, दूसरी ओर मुल्ला-मौलवी, पीर-औलिया अपने प्रचार द्वारा हमारे धर्म के श्रद्धा केन्द्रों पर प्रहार कर रहे हैं।

वेंकट—यह यथार्थ है, देव !

तुलसीदास—ऐसे विपरीत समय में ब्राह्मणों, देवताओं और तीर्थों के विरुद्ध प्रचार विधर्मी शासकों और मुल्ला-मौलवियों की धर्म-परिवर्तन की योजना में सहायक होगा। समसामयिक परिस्थितियों में निर्गुणमार्गी संतों की वाणी की खंडनात्मक कटुता युक्तियुक्त भले ही हो, विवेकसम्मत कदापि नहीं है।

वेंकट—आपकी दृष्टि बड़ी संतुलित है। ये निर्गुणमार्गी संत जाँति-पाँति के भेद-भाव का विरोध तो करते हैं पर समाज को दावानल की तरह जलानेवाली गरीबी और भूख की आग के विषय में कुछ नहीं कहते। आप ही एक ऐसे संत

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

हैं जो आर्थिक विषमता और सामाजिक विषमता दोनों का समान रूप से विरोध करते हैं।

तुलसीदास—इन विदेशी शासकों ने दुर्भिक्ष के भीषणकाल में भी जनता पर उत्पीड़क कर लगाकर उनको दाने-दाने का मुहताज बना दिया है। तुम ठीक कहते हो, वत्स ! निर्गुण-मार्गी संतों का ध्यान पेट की आग में जलती हुई जनता की ओर नहीं गया है। गरीबी की मार से नैतिकता और मानवता के सब संस्कार दग्ध हो जाते हैं।

वेंकट—गुरुदेव ! इस देश की जनता पशु से भी अधम जीवन बिताने को बाध्य हो रही है।

तुलसीदास—इसीलिए न्याय, विवेक और धर्म की शक्तियों को संगठित होकर धार्मिक पाखंड, सामाजिक विषमता और जनता की गरीबी तीनों के विरुद्ध संगठित होकर अभियान करना चाहिए।

वेंकट—आप युग-धर्म की दीक्षा देने के लिए ही अवतरित हुए हैं, देव ! आप बलात् धर्म-परिवर्तन की बाढ़ को भी रोक देंगे, ऐसा मेरा विश्वास है।

तुलसीदास—धर्म अपरिवर्तनीय है, वत्स ! आकाश, पवन, जल, अग्नि और पृथ्वी के धर्म को प्रलोभन या बल से 'क्या कोई बदल सकता है ? तो फिर इन्हीं पंचतत्वों से बने हुए शरीर वाले मानव के धर्म को कोई बल या प्रलोभन से कैसे बदल सकता है ? बल या प्रलोभन से धर्म का आरोपमात्र संभव है, जिससे स्वधर्म की विस्मृति हो सकती है।

वेंकट—एक नया प्रकाश मिल रहा है, देव ! तो क्या स्वधर्म की विस्मृति का यह आवरण भंग भी हो सकता है ?

तुलसीदास—अवश्य भंग होगा, वत्स ! काल निरवधि है। अंततः स्वधर्म का ही प्रकाश इस धरती पर फैलेगा। स्वार्थियों और

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

पाखंडियों के द्वारा मानव-मानव के बीच निर्मित देश, जाति, संप्रदाय, धर्म आदि के सब कृत्रिम व्यवधान भंग हो जायेंगे। सब प्राणी भगवान् के प्रेम के सिंधु में लहराने वाली तरंग बन जायेंगे।

(एक तेजस्वी युवक का प्रवेश। ललाट पर त्रिपुंड और गले में रुद्राक्ष की माला है। उभय बाहु और वक्ष भस्मचर्चित हैं। वेंकटरमण उठकर उनका स्वागत करते हैं।)

वेंकट—बंधु सोम ! मैं तुम्हारी प्रतीक्षा ही कर रहा था। तुम्हारे सामने भक्ति के पुण्यतम विग्रह गुरुओं के भी परम गुरु गोस्वामी तुलसीदास बैठे हैं। इन्हें प्रणाम करो।

(सोमशेखर गोस्वामी तुलसीदास के चरणों में साष्टांग प्रणाम करते हैं, वे बड़े प्रेम से उन्हें अपने निकट बैठाकर उनके मस्तक पर हाथ फेरते हैं।)

सोमेश्वर—भगवन् ! बंधु वेंकट ने मेरे हृदय में आपके दर्शन की उत्कट उत्कंठा जगा दी थी। वेंकट वैष्णव हैं और मैं शैव। वैष्णवों और शैवों में इस क्षेत्र में विशेष रूप से बड़ा द्वेष-भाव है। फिर भी हम दोनों अभिन्न मित्र हैं।

तुलसीदास—वत्स सोम ! जिस तरह विष्णु और शिव अभिन्न हैं, उसी तरह तुम दोनों मित्र भी अभिन्न हो ! तुम्हें देखकर मेरी आँखें शीतल हो गईं।

वेंकट—देव ! ये मेरे मित्र सोम कर्णाटक के रहने वाले कन्नड़ भाषी हैं। ये भी उस जाति के हैं जिसे ब्राह्मण वर्ग अछूत मानता है।

तुलसीदास—पतितपावन भगवान् शंकर का भक्त अछूत नहीं हो सकता, वेंकट ! वेद को बेचनेवाले और अपने क्षुद्र स्वार्थ के लिए धर्म का दोहन करनेवाले ये ब्रह्मबंधु समाज का अहित कर रहे हैं।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

सोम—मैं कर्णाटक के महान् संत बसवेश्वर के प्रमुख शिष्य मदार चन्नप्पा का वंशज हूं। वे चर्मकार थे, पर जगद्गुरु बसवेश्वर ने उन्हें अपना बना लिया था।

तुलसीदास—पंचवटी से मैं कर्णाटक प्रदेश से होता हुआ इधर आया हूं। वहाँ मैंने भगवान् शिव के मंदिरों में विश्वगुरु बसवेश्वर देव के वचन सुने हैं।

वेंकट—देव ! वे चार सौ वर्ष पूर्व हुए थे।

तुलसीदास—इससे क्या ! वे आज भी हमारे लिए प्रकाशस्तम्भ बने हुए हैं और आगे आने वाले हजारों वर्षों तक हमारे लिए प्रकाश-स्तम्भ बने रहेंगे।

सोम—धन्य हैं आप ! मैं यह कल्पना भी नहीं कर सकता था कि आप वैष्णव होते हुए शैव तत्वदर्शन में भी निष्णात हैं।

तुलसीदास—वत्स ! मैं किसी तत्व-दर्शन में निष्णात नहीं हूं। अवश्य, कर्णाटक में मुझे भगवान् शंकर की भक्ति का जो प्रसाद मिला है, उसे मैं भगवान् राम की जन्मभूमि अवध के क्षेत्र और समस्त उत्तरापथ में वितरित करूँगा।

सोम—धन्य हैं, आप।

तुलसीदास—मैं कोई नई बात नहीं कह रहा, वत्स ! हरि-हर का अभेद शास्त्रसिद्ध है—'एकमूर्तिस्त्रयो देवा ब्रह्मविष्णु महेश्वरा।' एक कवि की बड़ी सुन्दर उक्ति है—

उभयोरेका प्रकृतिः प्रत्ययतो भिन्नवद्भाति।
कलयतु कंचन मूढ़ो हरिहर भेदं विना शास्त्रम्॥

(नेपथ्य में एक वृद्ध नारी-कंठ की 'सीताराम सीताराम की ध्वनि सुनाई पड़ती है। प्रतीत होता है जैसे कोई वृद्धा लाठी टेकती हुई चली आ रही है।)

तुलसीदास—वत्स वेंकट ! यह तो तुम्हारी माता का कंठ स्वर है।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

वेंकट—ऐसा ही है प्रभु ! वे आपके दर्शन के लिए ही यहाँ आ रही होंगी।

(एक वर्षीयसी श्वेतकेशा महिला का लाठी टेकते हुए प्रवेश। तुलसीदास के साथ सब लोग उठकर खड़े हो जाते हैं और हाथ जोड़कर अभिवादन करते हैं।)

तुलसीदास—माता ! आपने यहाँ आने का कष्ट क्यों किया ? मैं यहाँ से जाने के पूर्व आपके दर्शन अवश्य करता।

वृद्धा—आपके दर्शन पाकर मेरा बुढ़ापा सँवर गया है, भक्तराज ! मैं आपके लिए भगवान् का प्रसाद लेकर आई हूं।

तुलसीदास—माता, आप इस युग की शबरी हैं जिनके जूठे बेर खाकर भगवान् तृप्त हो गये थे। (आसन अर्पित करते हुए) माता, आप थक गई होंगी, बैठने की कृपा करें।

(वृद्धा के आसन पर बैठने पर सब लोग बैठ जाते हैं। वृद्धा प्रसाद की पोटली खोलती है, और गोस्वामी जी के सामने रख देती है। वे चावल का प्रसाद सबको बाँटकर स्वयं ग्रहण करने लगते हैं। उसी समय कुछ दंडधारी क्रुद्ध ब्राह्मण प्रवेश करते हैं।)

ब्राह्मणगण—(तुलसीदास से) सुना है, तुम उत्तर भारत के कुलीन ब्राह्मण हो।

तुलसीदास—मैं भगवान् राम का दासानुदास हूं। मैं वैष्णव हूं, वैष्णव की कोई जाति नहीं होती। वैष्णव केवल भगवान् के दास होते हैं। जो भगवान् का भक्त है, वही ब्राह्मण हो सकता है, जन्म से कोई ब्राह्मण नहीं होता।

ब्राह्मण—(क्रोध से) तुम इस शूद्रा के हाथ का भोजन करते हो। अनाचार फैलाते हो। मिथ्या सिद्धांतों का प्रचार करते हो !

तुलसीदास—सुनो ब्राह्मणो। ये शूद्रा नहीं जगन्माता की पतित पावनी कला हैं। इनके कारण यह क्षेत्र तीर्थ बन गया है।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

पर यदि आप लोगों ने अपना वर्ण-दंभ न छोड़ा तो धर्म और देश को शताब्दियों तक पराधीनता में जकड़े रहना होगा ।

[पटाक्षेप]

तृतीय दृश्य

[स्थान–वही धनुष्कोटि के समुद्र तट की पर्णकुटी । पर्णकुटी के बाहर सोमशेखर और वेंकटरमण खड़े हैं । वेंकटरमण की वृद्धा माता प्रवेश करती हैं ।]

वृद्धा—तुलसी महाराज के चले जाने से यह कुटी कितनी सूनी लगने लगी है ।

सोम शेखर—सच कहती हो, माँ ! पर्णकुटी ही सूनी नहीं लगती, यह महासमुद्र भी श्रीहीन प्रतीत होता है । लगता है, इस समुद्र की गंभीरता और विराट्ता दोनों उनके साथ चली गयी हैं ।

वेंकट—बंधु सोम ! मुझे तो गुरुदेव के चरणों में कुछ दिनों तक रहने के बाद ऐसा अनुभव होने लगा है कि इस महान् राष्ट्र के चिंतन, चरित्र, कर्म एवं अध्यात्म-साधना में जो सर्वोत्तम है, वह उनके मन, वाणी, व्यवहार और शील में सहज भाव से ओतप्रोत हो गया है । मुझे तो वे रामानंद जैसे युग-पुरुष प्रतीत होते हैं ।

सोमशेखर—बंधु, आप वैष्णव हैं और मैं शैव । वैष्णवों और शैवों में हमारे क्षेत्र में उग्र प्रतिस्पर्धा और वैमनस्य का भाव है । फिर भी मुझे ये परम वैष्णव तुलसी महाराज शिव के अनुग्रह के अवतार प्रतीत हुए । अपने अनुभव के आधार पर मैं कह

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

सकता हूं कि भगवान् शंकर किसी कला ने ही रामभक्त का जीवन बिताने के लिए उनके रूप में अवतार लिया है। मुझे विश्वगुरु बसवेश्वर का संकेत मिला है।

वृद्धा—बेटा, तुमने पहले मुझे यह नहीं बताया, अन्यथा मैं उनके साथ लगी चली जाती। मेरे शरीर में तो अब इतनी शक्ति भी नहीं रह गयी है कि मैं काशी या अयोध्या जाकर उनके दर्शन कर सकूँ।

सोम—माता, उनके साथ तो मैं भी जाना चाहता था। पर उन्होंने मुझे अपने प्रदेश में जाकर शिव और राम के संबंध में प्रचारित अविवेक-पूर्ण भेद-भावना उन्मूलित करने का आदेश दिया है। मैं जीवन भर यह कार्य करूँगा और राम की लीलाओं को लोकप्रिय बनाने के लिए भी आयोजन करूँगा।

वेंकट—राम की लीलाओं के प्रचार के लिए उनका काव्य हमारे लिए बड़ा उपयोगी होगा।

सोम—वही हमारा प्रमुख आधार होगा। उन्होंने इस सम्बन्ध में कुछ निर्देश भी दिये हैं।

वेंकट—उन्होंने हमें काशी और अयोध्या आने का निमन्त्रण भी तो दिया है। रामलीला की पाठ्य और गेय सामग्री हम लोग वहीं उनसे प्राप्त करेंगे।

सोमशेखर—वहाँ तो हम लोग चलेंगे ही। पर वहाँ के लिए प्रस्थान करने के पूर्व हम लोग अपने-अपने क्षेत्रों में राम-लीला का अभिनय किसी न किसी रूप में आरम्भ कर दें।

वेंकट—आपने बड़ा कल्याणकारी संकल्प किया है। स्वल्प भी धर्माचरण द्वारा अशेष लोकहित होता है।

सोमशेखर—मैं सोचता हूं यक्षगान आदि में रामकथा के प्रसंगों का उपयोग किया जा सकता है।

वेंकट—अवश्य! लोकशिक्षा का यह बहुत बड़ा साधन होगा।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

हम इसके द्वारा जातिगत ऊँच-नीच और छुआछूत की प्रवृत्तियों का भी उन्मूलन कर सकेंगे ।

सोम—वैष्णवों में ऐसा उदार मनीषी मुझे आज तक नहीं मिला। अछूत और अंत्यज समझे जाने वाले हम लोगों के प्रति उनके हृदय में कितनी ममता है।

वेंकट—उन्होंने श्रीमद्भागवत के आधार पर यह सिद्ध किया है कि शूद्र वर्ण के रूप में भगवान् की वात्सल्यमयी सेवावृत्ति आविर्भूत हुई है। भगवान् के चरणों से निकलने के कारण यह भी गंगा की तरह पतितपावन है।

सोम—उन्होंने तो यह भी कहा था कि वर्णों में शूद्र का वही स्थान होगा जो आश्रमों में संन्यासी का।

वेंकट—बंधु ! आवश्यकता तो इस बात की है कि हम उनके सिद्धान्तों को कार्यरूप में परिणत करें।

वृद्धा—बेटा ! तुलसी महाराज यहाँ से कहाँ गये हैं ?

सोम—माँ ! वे यहाँ से उड़ीसा की ओर गये हैं। वहाँ वे पुरी में जगन्नाथ जी के दर्शन करते हुए जगज्जननी के दर्शनार्थ कामाख्या जायेंगे। कामाख्या से वे अयोध्या की ओर लौटेंगे।

वेंकट—तो हम लोग भी आज से ही उनके पथ के पथिक बनें।
(सब लोग उठकर खड़े होते हैं।)

[पटाक्षेप]

चतुर्थ दृश्य

[स्थान—वाराणसी के गंगातट का असीघाट। घाट पर बने मंदिर के प्रांगण में मेघाभगत, बेनीमाधव और उज्जयिनी दास बैठे हुए विचार-विमर्श कर रहे हैं।]

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

बेनीमाधव दास—दक्षिण भारत के कुछ शैव सन्त विश्वनाथ भगवान् के दर्शन के लिए आये हैं। उन लोगों का कहना है कि केरल और कर्णाटक के क्षेत्रों में भी रामलीला का प्रचार हो रहा है।

उज्जयिनीदास—रामलीला का प्रचार वहाँ किसने किया है ?

बेनीमाधव दास—उन लोगों ने बताया है कि तुलसी महाराज नामक एक वैष्णव सन्त की प्रेरणा से वहाँ यह प्रचार हुआ। उन लोगों का कहना है कि उनको वहाँ शिव का अवतार माना जाता है।

मेघा भगत—इन तुलसी महाराज के विषय में आपने और कुछ जानकारी प्राप्त की ?

बेनीमाधव दास—मुझे जो सूचनायें मिली हैं, उनके आधार पर मैं यह कह सकता हूं कि वे हमारे गुरुदेव ही हैं।

मेघा भगत—मुझे भी ऐसा ही विश्वास है। राम-भक्ति के प्रचार के लिए वे अनेक प्रकार के उपाय कर रहे हैं। उसमें वे भक्ति के द्वारा मनुष्य के सब भावों और व्यवहारों का उदात्तीकरण करना चाहते हैं।

उज्जयिनी दास—इसीलिए वे राम चरित्र का आदर्श लोक में नाट्य और अभिनय द्वारा भी प्रतिष्ठित करना चाहते हैं। लोक-संग्रह का इससे श्रेष्ठ और कौन साधन है ?

मेघा भगत—आप ठीक कहते हैं। आज की लीला में आपके संगीत ने जनता को भाव-विभोर कर दिया।

उज्जयिनीदास—आप धन्य हैं, भगत जी ! भक्तराज तुलसी महाराज के स्वप्न को आपने सत्य कर दिया है। इसी असीघाट पर आपने रामलीला आरम्भ करवा दी। युग-युग तक आपकी कीर्ति का गान भावुक भक्त करेंगे।

मेघा भगत—मैं रामलीला को कोई निश्चित रूप नहीं दे पाया हूं,

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

केवल उसका ढांचा मात्र मैं खड़ा कर पाया हूं। उसमें प्राण प्रतिष्ठा तो भक्तप्रवर तुलसी महाराज ही आकर करेंगे।

बेनीमाधव दास—फिर भी आज की रामलीला देखकर लोग भाव-विभोर हो उठे। गंगासिंह ने अशोक वाटिका के प्रसंग का बड़ा मार्मिक अभिनय किया।

मेघा भगत—कल भी जटायु का प्रसंग बड़ी मार्मिकता के साथ प्रस्तुत किया गया था। उज्जयिनो दास जी ने आपके गुरु का पद 'राधो गीध गोद करि लीन्हों' गाकर तो मोहिनी सी डाल दी। दर्शकों के हृदय विगलित होकर आँसुओं में बह चले।

उज्जयिनीदास—भगत जी! गंगाराम पाठक तो समुद्र लाँघते और लंका जलाते हुए हनुमान जी के आवेशावतार ही प्रतीत हो रहे थे।

बेनीमाधव—आपका कथन यथार्थ है बंधु! मैंने भी ऐसा ही अनुभव किया।

(एकाएक बड़ी तेजी के साथ गंगासिंह का प्रवेश। उनका मुख मंडल आवेश से अरुण हो रहा है। वक्ष और भुजायें फड़क रही हैं।)

मेघा भगत—भाई गंगासिंह! क्या बात है? तुम बहुत उद्विग्न दिखाई पड़ रहे हो। आओ, बैठो।

बेनीमाधव—हम लोग अभी आपकी ही चर्चा कर रहे थे। आप तो हम लोगों को आज रामदूत के आवेशावतार जैसे लगे।

गंगासिंह—भगत जी! आज कुछ विधर्मियों ने आपकी लीला की हँसी उड़ाई। वे लोग कहते हैं, हनुमान सौ योजन समुद्र एक ही छलांग में पार कर गये। ये हनुमान छोटी वरुणा नदी ही पार करके दिखा दें, तो हम लोग भी लीला में कुछ विश्वास कर सकें। इस व्यंग्य ने मेरा अन्तर छेद डाला है।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

मेघा भगत—इसकी चिंता न करें, आप !

गंगासिंह—चिंता कैसे न करूँ भगत जी ! मैं अपने आराध्य पवन-पुत्र का अपमान नहीं होने दूँगा। मैं अभी-अभी एक ही छलांग में वरुणा की धारा पार करके दिखा दूँगा। आप लोग मेरे साथ आकर हनुमान जी का पराक्रम देखें।

(पैर पटकते हुए वेग से जाने लगते हैं। सब लोग उठकर खड़े हो जाते हैं और उन्हें रोकने का प्रयत्न करते हैं।)

मेघा भगत—नहीं-नहीं ! ऐसा न करो गंगासिंह ! रामलीला आंतर साधना की वस्तु है। किसी के व्यंग्य और परिहास मे विचलित होना उचित नहीं।

गंगासिंह—भगत जी, मैं अपने इष्टदेव का परिहास सहन नहीं कर सकता। आइए, देखिए ! मैं वरुणा की धारा गोपद की तरह एक ही छलांग में अनायास पार कर लूँगा।

(पैर पटकते हुए वेग से प्रस्थान, सब लोग उनके पीछे जाते हैं। पटाक्षेप होता है। नेपथ्य में 'पवन पुत्र की जय', 'राम दूत हनुमान की जय' का हर्षावेशपूर्ण कोलाहल सुनाई पड़ता है।)

[पटाक्षेप]

पंचम दृश्य

[स्थान—पुरी में जगन्नाथ जी के मंदिर का प्रांगण। एक पार्श्व में तुलसीदास ध्यानस्थ बैठे हैं। मन्दिर में मध्याह्न आरती का घंटा बजता है। तुलसीदास उठकर खड़े हो जाते हैं। उनके मुख से निर्झर की तरह आरती का पद स्फूर्जित हो उठता है।]

तुलसीदास—ऐसी आरती राम, रघुबीर की करहि मन।
हरन दुख-द्वंद गोविन्द आनन्दघन ॥

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

अचर चर रूप हरि सर्वगत सर्वदा बसत,
इति वासना-धूप दीजै ।
दीप निज बोध गत कोह-मद-मोह-तम-प्रौढ़
अभिमान-चित वृत्ति छीजै ॥
भाव अतिसय बिसद प्रवर नैवेद्य सुभ
श्रीरमन परम संतोषकारी ।
प्रेम-ताम्बूल गत सूल संसय सकल,
बिपुल भव-वासना बीजहारी ॥

(राघवानंद का प्रवेश । वे तन्मय होकर इस आरती गीत को सुनते हैं । भाव प्रेरित दोनों हाथ जोड़कर वहीं खड़े हो जाते हैं ।)

असुभ-सुभ कर्म घृत पूर्ण दस वर्तिका
त्याग पावक सतोगुन प्रकास ।
भक्ति - वैराग्य - विग्यान दीपावली
अर्पि निराजनं जग निवास ॥
विमल-हृदि-भवन कृत सांति-पर्यंक
सुभ सयन विश्राम श्रीराम राया ।
छमा-करुना प्रमुख तत्र परिचारिका,
यत्र हरि तत्र नहिं भेद माया ॥
एहि आरती-निरत सनकादि स्रुति सेष,
सिव देवरिषि अखिल मुनि तत्व दासी ।
करै सोइ तरै, परिहरै कामादि मल,
बदति इति अमल मतिदास तुलसी ॥

(आरती का शंख-घंटा वादन बंद होता है । तुलसीदास अपने भाव-निमीलित नेत्र खोलते हैं ।)

तुलसीदास—वत्स राघवानंद ! यहाँ कब आये ?

राघवानंद—आज यहाँ इस प्रांगण में संतों का भण्डारा है, उसी की व्यवस्था के लिए आया था। आपका आरती का पद

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

गायन सुनकर वीणा से आकृष्ट मृग की तरह यहाँ खड़ा हूं, देव !

तुलसीदास—बड़े संस्कारी संत हो, राघवानंद ! जिसको राम का भजन अच्छा लगने लगता है, उसके लिए संसार के सब रस फीके और विरस हो जाते हैं ।

राघवानंद—महाराज ! आप सरस्वती के वरदानी हैं । आपकी वाणी का निर्झर ज्ञान-विज्ञान की असंख्य धाराओं में प्रवाहित होने लगता है ।

तुलसीदास—नादमय विराट् पुरुष ये जगन्नाथ राम ही प्रेम की वंशी लेकर अगाध सागर जैसी उत्ताल तरंगे उठाते हुए हृदय-हृदय के आकाश को आच्छादित किये हुए हैं । उनके शाश्वत स्वर ही, जिस पर उनकी कृपा होती है, उसकी कविता बनकर प्रतिध्वनित होते हैं ।

राघवानंद—आपका दर्शन, साहचर्य और कृपा-प्रसाद प्राप्त कर मैं धन्य हो गया हूं ।

तुलसीदास—वत्स ! तुम यहाँ ऐसे मिले जैसे स्वयं राम ही मिल गये हों । मेरी पुरी की यात्रा तुम्हारे कारण कितनी सुखद हो गयी है । हाँ, तो भंडारा कब है ?

राघवानंद—संतगण आने लगे हैं । मंदिर से प्रसाद आयेगा । इसके अतिरिक्त एक अन्य सज्जन ने कुछ विशेष व्यवस्था की है ।

तुलसीदास—बड़ा सुखद संयोग है ।

राघवानंद—मैं तो आपको भी निमंत्रित करता । किंतु आप ब्राह्मण हैं और इस भंडारे में सभी वर्णों और जातियों के संत भोजन करेंगे । जाँति-पाँति का कोई भेद भाव नहीं रहेगा, इसलिए मुझे आपको निमंत्रित करने में संकोच हुआ ।

तुलसीदास— शान्तं पापम् । भगवान् जगन्नाथ के दरबार में और

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

प्रसाद में जाँति-पाँति का भेदभाव तो शास्त्रीय दृष्टि से भी अविहित है।

राघवानंद — है अवश्य ! पर आपकी अत्यन्त कठोर आचारनिष्ठा देखकर मैं संकोच में पड़ गया था।

तुलसीदास — आचार-निष्ठा तो व्यक्तिगत साधना की वस्तु है। समाज व्यक्ति से बड़ा है। उसके हित में जो कुछ किया जाता है, वह उच्चतर और अधिक व्यापक आचार और धर्म की मर्यादा का निर्माण करता है।

राघवानंद — धन्य हैं आप !

तुलसीदास — मेरा सिद्धान्त है—

तुलसी जाके बदन ते, धोखेहु निकसत राम।
ताके पग की पगतरी, मेरे तन को चाम ॥

मैं तो आपके साथ सन्तों की जूठन का दूना पवित्र प्रसाद ग्रहण करूँगा। चलो राघवानंद, सन्तगण आसन ग्रहण करने लगे हैं।

(मन्दिर के सामने सन्तगण पंक्तिबद्ध बैठे हैं, पत्तलें बिछी हैं। प्रसाद परोसा जा रहा है। राघवानंद के साथ तुलसीदास जाते हैं और एक सन्त का जूता हाथ में लेकर पंक्ति के पीछे बैठ जाते है। सन्त लोग उनकी ओर आश्चर्यभरी मुद्रा में देखते हैं।)

राघवानंद — महाराज यह क्या ?

तुलसीदास — राघवानंद ! मैं सन्तों की जूठन इसी में ग्रहण करूँगा। इससे पवित्र पात्र मेरी दृष्टि में और कोई नहीं।

राघवानंद — ऐसा महान् वैष्णव मैंने नहीं देखा। आपके दर्शन से हम सब धन्य हो गये हैं।

दूसरे संत — अरे यह तो मेरी पगतरी है महात्मन ! मैं श्वपच हूं, मुझे आप पाप का भागी बना रहे हैं।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

तुलसीदास —आप मुझे इसमें प्रसाद ग्रहण करने की अनुमति प्रदान करें। यह मेरे अनंत पुण्यों का उदय हैं।

दूसरे संत - ऐसा न कहें भक्तराज ! मैं नाभादास आपसे इसे लौटा देने की भीख माँगता हूं।

एक संत—कौन है ये भक्तराज ! संतों के प्रति ऐसी भक्ति, ऐसी उदारता, ऐसी निष्ठा मैंने कहीं नहीं देखी।

अनेक संत—यह सत्य है, यह निष्ठा अनुपम है। राघवानंद, बोल ये भक्तराज कौन हैं ? कहाँ से आये हैं ?

राघवानंद—ये परम वैष्णव तुलसीदास महाराज हैं। अयोध्या इनकी गुरुभूमि है और ये अयोध्या के निकटवर्ती सरयू और घाघरा के संगम पर स्थित सूकरखेत के महान् तपस्वी संत नरहरिदास के शिष्य हैं।

दूसरे संत—इनके रूप में हमने अयोध्या की महामहिमा के दर्शन किये हैं।

राघवानंद—ये महान् कवि हैं। इस समय ये रामेश्वर और कन्याकुमारी का दर्शन करते हुए इधर आये हैं। रामकथा और रामलीला का प्रचार इनका मुख्य उद्देश्य है।

अनेक संत – हम आपके दर्शन पाकर धन्य हो गये हैं। आप हमारा मार्ग-दर्शन करें। हम लोग भी रामकथा और रामलीला के प्रचार में आपके साथ सहयोग करेंगे।

तुलसीदास—यह भगवान् का कार्य है। आप लोग ही इसे कर सकते हैं। मैं तो आपके उपानहों की धूल मात्र हूं।

तीसरे संत—अब आप यह उपानह कृपा कर रख दें और हम लोगों के साथ पंक्ति में बैठकर प्रसाद ग्रहण करें।

(राघवानंद तुलसीदास को उठाकर सन्तों की पंक्ति में बैठाते हैं और उनके हाथ से उपानह लेने का प्रयत्न करते हैं।)

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

तुलसीदास— इसे रहने दो महात्मन् ! यह सुवर्ण पात्र से भी अधिक पवित्र है।

नाभादास—मुझे पाप का भागी न बनावें, मैं आपसे भीख माँगता हूं।

तुलसीदास—भगवान् जगन्नाथ के इस क्षेत्र में जाँति-पाँति, ऊँच-नीच, कुलीन-अकुलीन के लिए कोई स्थान नहीं। यही वह पुण्य क्षेत्र है जहाँ भगवान् चैतन्य महाप्रभु ने जाति, कुल, संप्रदाय आदि के बंधनों को मिथ्या घोषित किया था। भगवान् का भक्त श्वपच अथवा चाण्डाल जैसे किसी भी कुल में क्यों न जन्मा हो, वह कुलीन से कुलीन ब्राह्मण की अपेक्षा अधिक कुलीन और वंदनीय है। जन्मजात मुसलमान हरिदास ठाकुर को उन्होंने अपना परम सखा माना था।

[पटाक्षेप]

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

तृतीय अंक

प्रथम दृश्य

[ब्रह्मपुत्र के तट से कुछ दूर पर वारदोवा नामक ग्राम में एक सत्र। ब्रह्मपुत्र की बाढ़ उतर गई है। शरद की सुषमा चारों ओर छाई है। संध्या हो गई है। शेफाली खिलने लगी हैं। उसकी सुगंध का क्षीण कोमल सुकुमार प्रसार मन-प्राण को आमोदित कर रहा है। मंदिर में कोई मूर्ति नहीं है। वेदी पर गीता, श्रीमद्भागवत शंकरदेव कृत भक्तिप्रदीप आदि ग्रन्थ रखे हैं। उन पर स्वर्णखचित आवरण पड़ा है। मंदिर में संध्या-आरती की तैयारी हो रही है। मंदिर के अलिंद में एक गद्दी पर कौशेय वस्त्र बिछा है। पीठ के पीछे उपधान है। गद्दी पर किंचित श्यामवर्ण के उस मंदिर के तेजस्वी महंत विराजमान हैं। उनका ललाट वैष्णव तिलक से दीप्यमान है। वे उपधान का थोड़ा सहारा लिए बैठे हैं। गद्दी के नीचे कुछ और महात्मा बैठे हैं। सामने कुशासन पर कौशेय वस्त्र बिछा है। उस पर तुलसीदास विराजमान हैं। दोनों में वार्तालाप हो रहा है।]

महंत—पुण्यश्लोक महापुरुष शंकरदेव की इस जन्मभूमि में मैं आपका स्वागत करता हूं, महाराज! मुझे ज्ञात हुआ है आप उत्तर, पश्चिम और दक्षिण के सब तीर्थों की यात्रा करते हुए यहाँ पधारे हैं। आपके यहाँ आने के पूर्व ही आपकी कीर्ति-कथा का प्रचार हो गया था।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

तुलसीदास—यह कैसे प्रभु ! मैं अज्ञात कुलशील परिव्राजक हूं। आप अपनी ही महिमा से मुझे गौरवान्वित कर रहे हैं।

महंत—ऐसा नहीं है। आप जब पुरी में थे, तो आपने एक संत के उपानह में भोजन करने का आग्रह कर वैष्णव भक्ति के लोक-पावन स्वरूप का उद्घाटन किया था। यहाँ के कई भक्त उस समय पुरी में थे। वे लौटकर आये हैं। उन्हीं के मुख से मैंने आपकी महिमा का आख्यान सुना है।

तुलसीदास—आप युगपुरुष शंकरदेव की परम्परा के महान् गुरु हैं। मैं अत्यन्त क्षुद्रजन हूं—आपके चरणों की धूलि मात्र। ऐसा कुछ न कहें जिससे मुझे अभिमान हो जाय और मेरा धर्म-कर्म ही नष्ट हो जाय।

महंत—भगवान् के सच्चे भक्त को अभिमान स्पर्श भी नहीं कर सकता। पूज्य अतिथि ! विश्वगुरु शंकरदेव की भक्ति-पद्धति में जाँति-भेद, वर्णभेद आदि का कोई स्थान नहीं है। उनकी व्यवस्था में सत्राधिकारी महंत ही होता है, पर उसका ब्राह्मण होना आवश्यक नहीं।

तुलसीदास—क्या महाभागवत शंकरदेव ने शूद्र को भी महंत होने का अधिकार दिया है ?

महंत—अवश्य ! जन्मना शूद्र होने पर भी महंत ब्राह्मण को भी दीक्षा दे सकता है। इसी व्यापक दृष्टि के कारण हमारे देश के पूर्वांचल में भक्ति का प्रसार तीव्रता से हुआ है। विश्व गुरु शंकरदेव की इस भूमि में आप जैसे भक्त का आगमन हमारा परम सौभाग्य है।

तुलसीदास—मैं भक्त कहाँ बन पाया हूं, प्रभु ! मैं तो भक्ति के रससीकर की खोज में भटक रहा हूं।

महंत—आप पुरी से सीधे नवद्वीप गये थे जो चैतन्य महाप्रभु का नित्य लीलाधाम है। वहाँ आपने प्रच्छन्न रहने का प्रयत्न

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

किया। देखिए, ये गौरगणदास जी वहीं से आये हैं। इन्होंने आपको वहाँ पहचान लिया था।

तुलसीदास—(ध्यान से देखकर) अवश्य, ये महात्मा पुरी में थे और नवद्वीप में भी मैंने आपके दर्शन दूर से किये थे।

गौरगणदास—महाराज ! मैंने आपसे पूछा भी था कि क्या आप अयोध्या के महान् भक्त और कवि तुलसीदास हैं।

तुलसीदास—सत्य है, महाराज ! पर नवद्वीप तो वह पुण्य धाम है जहां भगवान् स्वयं अपनी सर्वज्ञता और सर्वशक्तिमत्ता भुलाकर भक्त के रूप में अवतीर्ण हुए थे। वहाँ भक्त होने की मेरी अस्मिता ही लुप्त हो गयी थी। मैं उस धरती की रज में लोट-लोट कर गोपीभाव का अनुभव करने का प्रयत्न कर रहा था।

गौरगणदास—धन्य हैं आप !

तुलसीदास—(महंत जी से) प्रभु ! मैं तो महापुरुष शंकरदेव और उनके महान् शिष्य माधवदेव के भक्तिरस और सेवा-भाव की भीख माँगने के लिए आपके श्रीचरणों में उपस्थित हुआ हूं।

महंत—आपके शील और संकल्प दोनों महान् हैं। महाप्रभु शंकर देव ने विपन्न और विघटित हुए देश और समाज को भक्ति के भावसूत्र में पिरोने का बड़ा विराट् प्रयत्न किया था। माधवदेव ने भी अपने उन महान् गुरु के द्वारा अनुष्ठित कार्यों को पूर्ण करने का प्रयत्न किया। मैं उन्हीं की शिष्य-परम्परा में हूं।

तुलसीदास—आपका दर्शन पाकर मैं कृतकृत्य हो गया हूं। कृपया आप मुझे उन महापुरुषों की अन्य लोककल्याणकारी योजनाओं के विषय में बतलायें जिनका अनुकरण और अनुसरण लोक-हित-साधन कर सके।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

महंत—महापुरुष शंकरदेव की आज्ञा से आचार्यप्रवर माधवदास महाराज ने रामजात्रा की परम्परा का प्रवर्तन किया था। इसमें भगवान् राम की ललित लीलाओं के अभिनयात्मक खंड दृश्य प्रस्तुत किये जाते थे। जनजीवन और लोक-व्यवहार के परिशोधन का यह अमोघ साधन है।

तुलसीदास—मैं इसके अनुष्ठान की विधि और पद्धति आप से जान लेना चाहता हूं प्रभु !

महंत—महाप्रभु शंकर देव ने अपने महान् शिष्य परमाचार्य माधव दास के साथ मिलकर 'भाओना' नाम का भक्तिमूलक नाटक लिखा था। उसका अभिनय भी हमारे सब सत्रों में आश्विन शुक्ल दशमी को शंकरदेव महाराज के जन्म दिन के अवसर पर होता है।

तुलसीदास—लगता है, शंकर देव महाराज ने भक्ति-प्रचार के कार्य में नाट्याभिनय को बहुत महत्वपूर्ण स्थान दिया।

महंत—मैं समझता हूं, सभी वैष्णव आचार्यों ने भक्ति के प्रचार के लिए नाट्याभिनय को बहुत महत्वपूर्ण माना है। विदेशी आक्रमणकारियों के द्वारा खंडित हमारी प्राचीन नाट्य परम्परा लीला नाटकों के रूप में नया रूप ग्रहण करती प्रतीत होती है।

तुलसीदास—महाराज शंकरदेव ने और क्या-क्या किया ?

महंत—उनका प्रयत्न यह था कि सब जगह सत्र और नामघर स्थापित किये जायँ। धर्मगुरुओं या महंतों के आश्रम को सत्र कहते हैं। हर सत्र में एक विशाल कीर्तनघर होता है जहाँ कीर्तन के साथ-साथ 'भाओना' और 'रामजात्रा' के अभिनय होते हैं। महंतों के चुनाव में गणतांत्रिक प्रणाली भी अपनायी जाती है। महापुरुष शंकरदेव ने हर ग्राम में नामघर की स्थापना का लक्ष्य सामने रखा था।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

तुलसीदास—अत्यन्त पूर्ण योजना थी यह लोक के उद्धार की। नाट्याभिनय का लोक-हृदय पर गहरा प्रभाव पड़ा होगा।

महंत—अवश्य ! हम आपकी सेवा में नाट्याभिनय प्रस्तुत करेंगे भक्तराज। आरती का समय हो गया है। आरती के पश्चात् हमारे लीलारसिक भक्त आपके सामने रामजात्रा के कुछ दृश्य प्रस्तुत करेंगे। नवरात्र में यहाँ रामजात्रा का अभिनय और झाँकियां नित्य ही देखी जा सकती थीं।

तुलसीदास—आपकी बड़ी कृपा है, प्रभु ! मुझे नवद्वीप में कृष्ण जात्रा देखने का सौभाग्य मिला था। नवरात्र में मैं वहीं था।

महंत—भगवान् चैतन्य महाप्रभु तो परम चरम लीलारसिक थे। 'रुक्मिणी हरण' नाटक में उन्होंने स्वयं रुक्मिणी का अभिनय किया था।

तुलसीदास—उन लीलाओं में महाप्रभु ने जो रस-संचार किया था, उसका आस्वादन आज भी वहाँ किया जा सकता है।

महंत—इसमें क्या सन्देह ! तो फिर आइए, पहले आरती हो जाय, तत्पश्चात् लीला का दर्शन कीजिए। महात्मन, आप महाकवि हैं। आरती आरम्भ हो रही है। आप नीराजना के पद का गान कीजिए।

तुलसीदास- जो आज्ञा।

(मंदिर में शंख, घंटा, घड़ियाल, नरसिंहा, तुरही आदि वाद्य बजने लगते हैं। सब लोग हाथ जोड़कर खड़े हो जाते हैं। पुजारी के हाथ में मंडल बाँधती हुई आरती तुलसीदास को भाव-विभोर कर देती है। वे उच्छ्वसित कंठ से गा उठते हैं।)

तुलसीदास—हरति सब आरतै आरती राम की।
दहन दुख दोष निर्मूलिनी काम की।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

सुभग सौरभ धूप-दीप बर मालिका,
उड़त अघ-विहँग सुनि ताल कर तालिका।
भक्त हृदि भवन अग्यान तम हारिनी,
विमल विग्यान मय तेज विस्तारिनी।
मोह मद कोह कलि कंज हिम जामिनी,
मुकुति की दूतिका देह दुति दामिनी।
प्रणत जन, कुमुदवन इंदु कर जालिका,
तुलसि अभिमान महिषेस कहँ कालिका।

(आरती सम्पन्न होती है। पुजारी नीरजना का जल छिड़कता है। लोग तुलसीदास का गायन सुन आत्मविस्मृति की अवस्था में थे। नीरजना के जलबिंदु उन्हें सचेत करते हैं। सब धन्य-धन्य कह उठते हैं।)

महंत—महाराज ! आपके कंठ में अमृत है। आपने आरती का जो पद सुनाया, उसके भाव और भाषा का लालित्य अनुपम है। उसे सुनकर मेरे हृदय में विराजित युगल सरकार के मुख पर प्रसन्नता छा गयी। वंदनीय है आपकी यह वाणी।

तुलसीदास—मेरी वाणी ! ......मेरा क्या है इसमें ! प्रभु का गुणगान करना चाहता हूं, तो सरस्वती देवी कृपा करती हैं। मैं तो काव्य-शक्ति और विवेक दोनों से वंचित हूं।

महंत—भक्त महाकवि ! आप गुरुपाद आचार्यचक्रचूड़ामणि महाराज माधवदास के द्वारा प्रवर्तित रामजात्रा का लोकरंजक और लोकशिक्षक रूप देखें। लीलासाधक आपके सामने पंचवटी प्रसंग प्रस्तुत कर रहे हैं।

(मंदिर के प्रांगण में आस्तरण बिछा दिया जाता है। पश्चिम की ओर ऊंचा लकड़ी का तख्त पड़ा है। उस पर मखमली कालीन बिछा दिया जाते हैं। उसके ऊपर स्फटिक शिला का आभास देने वाली

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

आसंदियाँ रख दी जाती हैं। उन पर राम, सीता और लक्ष्मण के स्वरूप आकर बैठ जाते हैं। सब उठकर खड़े हो जाते हैं और जयजयकार तथा पुष्प वर्षा करते हैं। एक ओर से शूर्पणखा प्रवेश करती है। प्रलंब ओष्ठ, विशाल नुकीले नख, स्थूल उदर, विकराल मुख। देखने से ढली हुई वयस की लगती है। लाल वस्त्र पहने है, ऊपर काला उत्तरीय है।)

शूर्पणखा—मैं त्रिलोकविजयिनी सुन्दरी हूं। राक्षसों के देश में ऐसा कौन था जो मेरे रूप को देखकर मुग्ध न हुआ हो। मेरी यौवनश्री अनंत है।...... मेरा भृकुटि-भंग देखकर काम का शरासन दीन-हीन हो जाता है। पति की मृत्यु के बाद मैंने कितने ही प्रणयियों की याचनायें ठुकरा दीं।..... पर आज इस श्यामवर्ण के युवक को देखकर मेरा मन उन्मथित हो गया है।...... मैं इसी के साथ विवाह करूँगी।...... बड़ा सुन्दर है यह! मुझे देखकर रीझेगा अवश्य।...... वह गौरवर्णवाला भी तो कम नहीं।...... उसका वरण भी मैं कर सकती हूं।...... हः हः हः। कहीं मुझे देखकर दोनों आपस में ही न लड़ने लगें।...... इनके साथ एक तरुणी भी है।..... सुन्दरता में वह मेरे सामने नितान्त तुच्छ है...... हः हः हः! वह मुझसे कम वय की अवश्य है।..... हः हः हः! इससे क्या होता है!...... हमारे राक्षसों के देश में ऐसे-ऐसे सौन्दर्य-प्रतिष्ठान खुले हैं, जहां फूँक मारते ही सौन्दर्य प्रसाधिकायें वृद्धाओं को तरुणी बना देती हैं।... मैं क्षण भर में तरुणी बनकर आती हूं और देखती हूँ कि इन दोनों में कितना दम है। हः हः हः! पितामह ब्रह्मा तो हम राक्षसों के कल्पवृक्ष हैं।... उन्होंने मुझे यह कहकर वरदान दिया था—'देख, शूर्पणखा! तेरा युग आनेवाला है। सारे संसार की नारियाँ तेरे शील

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

और आचार का अनुकरण करेंगी। तू उन सबकी परमाराध्या बनेगी। तेरी संस्कृति ही विश्वनारी की संस्कृति बनेगी। ····· जा, वृद्धाओं को तरुणी बनाने वाली सौंदर्य प्रसाधिकायें तैयार कर······! आती हूं अभी······।

(कहती-कहती अन्तर्धान हो जाती है।)

[पटाक्षेप]

द्वितीय दृश्य

[देश के पूर्वांचल के घने वन के बीच की पगडंडी की अपेक्षा कुछ अधिक चौड़ा एक मार्ग। यह मार्ग कामाख्या देवी के मन्दिर की ओर जाता है। कुछ यात्री भगवती के दर्शन कर लौट रहे हैं, कुछ दर्शन करने जा रहे हैं। मार्ग में भीड़ नहीं है। जंगल घना है। प्रायः कई यात्री एक साथ मिलकर चलते हैं। कभी-कभी सिंह-व्याघ्रों का गर्जन और हाथियों की चिग्घाड़ भी सुनाई पड़ जाती है। अनेक प्रकार के शारदीय वन्य पुष्पों का सौरभ वहन करता हुआ तापहारी शीतल पवन चल रहा है। कोकिल की काकली, मयूरों का केकारव, पपीहों की पीहा, बुलबुलों का कलस्वन ओर चटकाओं की चींव-चींव सुनाई पड़ रही है। ऐसे में इस मार्ग पर तुलसीदास अकेले चले जा रहे हैं। उनकी मुद्रा बड़ी गम्भीर है। कभी-कभी नेत्र उठाकर मार्ग के दोनों ओर की प्रकृति का सौंदर्य निहार लेते हैं और फिर अन्तर्लीन हो जाते हैं। कभी-कभी ललाट पर पसीने के बूंद छलक आते हैं। उनके पोंछने का भी उन्हें ध्यान नहीं। कभी-कभी शीतल पवन का झोंका सहलाकर उन्हें सुखा देता है।]

तुलसीदास—(मुग्ध भाव से वन्य प्रकृति के सौंदर्य को देखते हुए) कितनी मनोहारिणी है, अपने देश के पूर्वांचल की यह

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

प्रकृति।.........पर कब से चल रहा हूं इस मार्ग पर, कोई अंत नहीं। कब होंगे जगज्जननी के दर्शन ? कोई बताने वाला नहीं।

(एक श्याम वर्ण का ऊंचा तगड़ा व्यक्ति, जंगल से बाहर निकलता है। उसके शिर पर बड़े-बड़े केश हैं, मस्तक पर रक्त चंदन की खौर। केवल अधोवस्त्र पहने है, शरीर पर अन्य कोई आच्छादन नहीं। वक्ष चौड़ा और उभरा हुआ है। नेत्र मदघूर्णित-से। वयस् युवा तो नहीं है, पर वृद्ध भी नहीं लगता। हाथ में खप्पर है।)

आगन्तुक व्यक्ति—क्या थक गये हो, तुलसीदास ? अब माता का मंदिर बहुत दूर नहीं है।

तुलसीदास—(साश्चर्य उसे ऊपर से नीचे तक निहारते हुए) आप कौन हैं, भगवन् ? आपने मेरा नाम कैसे जाना ? आप भाषा भी हमारे क्षेत्र की बोल रहे हैं। क्या आप अवध के हैं ?

आगंतुक—मैं तो माता कामाख्या का सेवक हूं, यहीं पैदा हुआ। यह क्षेत्र छोड़कर कभी कहीं गया नहीं। जाना भी कहीं नहीं।

तुलसीदास—तब फिर आप मुझे कैसे जानते हैं, महानुभाव !

आगंतुक—(मद घूर्णित नेत्रों में विनोद का भाव भरकर अट्टहास करते हुए) हः हः हः। कैसे भक्त हो तुलसीदास ! तुम माता के दर्शन करने जा रहे हो और उनकी महिमा का इतना बोध तुमको नहीं। मैं तुमको बहुत दिनों से जानता हूं।

तुलसीदास—बहुत दिनों से ? कब से ?

आगंतुक—जब तुम शेष सनातन की पाठशाला में पढ़ते थे। याद हैं वे दिन ?

तुलसीदास—क्यों नहीं याद हैं।

आगंतुक—याद है, तो बताओ। तुम कैसे किसी के कहने से शौच का अवशिष्ट जल एक बबूल के पेड़ पर चढ़ाया करते थे।

तुलसीदास—(चौंककर) यह सब तुम कैसे जानते हो ? मेरे बचपन

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

की वह घटना। मैं तब अनुपनीत था। शौच जा रहा था, मार्ग में बबूल के एक वृक्ष के नीचे एक अघोरी साधु बैठे थे।

आगंतुक -हः हः हः। अघोरी साधु बैठे थे! घूम आया सारा देश! जानता कुछ नहीं! हः।

तुलसीदास—मैं सचमुच कुछ नहीं जानता, महाराज! उन अघोरी साधु ने मुझे अपने पास बुलाया। डरा नहीं, चला गया। उन्होंने कहा, 'शौच से लौटकर लोटे का बचा हुआ जल इस बबूल पर चढ़ाया कर।' मैं चढ़ाने लगा।

आगंतुक—हः हः हः। तू चढ़ाने लगा! मैं बताऊँ फिर क्या हुआ?

तुलसीदास—बताइए, महाराज!

आगंतुक—हः हः हः। मैं बताऊँ। तो सुन। तुझे मिला था न एक कृष्ण वर्ण का भयानक प्राणी! बोल ठीक है!

तुलसीदास—ठीक है, महाराज।

आगंतुक—उसे देखकर तू डरा नहीं था।

तुलसीदास -नहीं डरा था, महाराज! संपूर्ण जीवन भयानक से भयानक परिस्थितियों में बीता था। भय हृदय से निकल गया था।

आगंतुक—वह सब मैं जानता हूं। उस काले-कलूटे प्राणी ने तुझसे कहा था, 'मैं तुमसे प्रसन्न हूं। कुछ मांग, अपने मन की मुराद पूरी कर लें।'

तुलसीदास—अक्षरशः सत्य है, महाराज!

आगन्तुक—बड़ी संस्कृत बूझने लगा है। मैं तो अपने घर की बोली जानता हूं और कुछ नहीं। पर तू था बहुत अच्छा बालक! तूने उसे संकट में डाल दिया।

तुलसीदास—आप तो मेरा पूरा अतीत जानते हैं, कौन हैं आप?

आगंतुक—तूने जो माँगा था, वह मैं जानता हूं। इसीलिए मैं प्रसन्न हूँ और तुझसे मिलने आ गया हूं।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

तुलसीदास—आप आश्चर्य-पुरुष हैं, भगवन् ।

अगंतुक—आश्चर्य-पुरुष क्या होता है रे ! तू मेरे सामने आज भी बालक है, जैसा तब था । जानता है, मैं तुझसे कम से कम सौ वर्ष बड़ा हूं ।

तुलसीदास—अहोभाग्य ! आपके दर्शन हुए ।

आगंतुक—अहोभाग्य क्या होता है रे ! कवि है, इसलिए बातें बनानी आती हैं ।

तुलसीदास—अविनय क्षमा हो, महाराज !

आगंतुक—हः हः हः । (खप्पर ऊपर उठाकर नृत्य करते हुए) मैं प्रसन्न हूं । तू ने उस प्राणी से कहा था, 'मुझे राम के दर्शन करा दीजिए ।'

तुलसीदास— ठीक है, महाराज !

आगंतुक—तूने उसे हतप्रभ कर दिया था । कैसा विचित्र बालक था तू ! वह बेचारा प्रेत राम के दर्शन कैसे कराता रे ! किसी से कुछ माँगा जाता है, तो उसकी शक्ति देखकर । तू भिखारी से लक्ष-लक्ष स्वर्ण मुद्रायें माँग रहा था । (खप्पर उठाकर फिर हर्षोन्मत्त नृत्य करते हैं ।)

तुलसीदास—भगवन् ! मुझ पर कृपा कर अपना परिचय दीजिए ।

आगंतुक—मेरा परिचय लेकर क्या करेगा । मैं तो पागल हूं, पागल ! ...... मद्यप ! अघोरी ! (फिर उद्दाम नृत्य)

तुलसीदास—महाराज ! अपना परिचय नहीं देंगे, तो मैं दुःखी रहूंगा ।

आगंतुक—कैसा पागल है रे ! राम का भक्त होकर भी दुःखी रहेगा । पत्नी को छोड़ा था, तब दुःखी हुआ था ! बबूल पर रहने वाले काले आदमी की तरह तू मुझे भी संकट में डाल रहा है । बता, जिस मार्ग पर तू चल रहा है, उसका

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

क्या परिचय है ? जानता है इसका नाम-ग्राम ? अच्छा, बता उस बबूल के पेड़ वाले ने तुझसे क्या कहा था ?

तुलसीदास—राम का दर्शन करवा पाना मेरे वश में नहीं, पर एक स्थान पर रामकथा होती है। वहाँ हनुमान जी छद्म-वेश में जाते हैं, उनसे मिलने के लिए मुझसे कहा था और बतलाया था कि वे ही राम का दर्शन करवा सकते हैं।

आगंतुक—तू मिला तो था, उनसे !

तुलसीदास—मिला था महाराज। वे कोढ़ी के वेश में थे। उन्होंने मुझे आश्वस्त किया था कि तुझे राम के दर्शन होंगे।

आगंतुक—जानता है, हनुमान जी तेरे साथ चल रहे हैं। ऐसा न होता, तो इस कामरूप में तू भेड़-बकरा बना दिया जाता। मैं देख रहा हूं, हनुमान जी तेरे साथ-साथ चल रहे हैं।

तुलसीदास—मेरे इष्टदेव मेरे कारण इतना कष्ट कर रहे हैं।

आगंतुक—दूसरों को कष्ट देना और स्वयं कष्ट भोगना, यही तो तेरा काम है। चला है, हमारी पराम्बा भगवती को वैष्णवी बनाने ! क्या करूँ ? स्वयं जगदम्बा तुझसे प्रसन्न हैं, तो मैं क्या कर सकता हूं ?

तुलसीदास—वे परम करुणामयी जगदम्बा स्वरूपस्थिति की दृष्टि से वैष्णवी-नारायणी तो हैं ही। आपके शास्त्र ही बार-बार ऐसा कहते हैं—"नारायणि नमोऽस्तुते।"

आगंतुक—जा रे जा ! तू भी पागल, मैं भी पागल ! ना, अम्बा तेरी बाट जोह रही हैं, उनका हृदय तेरे लिए वात्सल्य भाव से भरा हुआ है। तब फिर मैं क्या करूँ ? तू माता से जाकर कहेगा—'मैया ! बलि बंद करवाओ और मद्य न चलाओ।' इच्छा होती है, तेरी मरम्मत कर दूं। पर जब माँ का तुझ पर इतना अनुराग है, तो मैं क्या करूँ ? ले

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

देख, ऊपर देख ! मैया के मंदिर का कलश वह दिखायी दे रहा है। जा दर्शन कर ! माँ स्वयं तुझसे मिलने के लिए आकुल-व्याकुल है तो मैं क्या करूँ ? अन्यथा खिचड़ी और बाटी खाने वाले वैष्णव का यहाँ क्या काम ? उन्होंने ही मुझे आदेश दिया—'भक्त तुलसीदास को मेरे पास ले आ।' तो ले आया हूं तुझे अपनी परम करुणामयी माता के द्वार पर। देख, सामने। (यह कहकर वह पुरुष अन्तर्धान हो जाता है। तुलसीदास कामाख्या भगवती के मंदिर के द्वार पर शिर टेक देते हैं। लाल रंग का तीव्र प्रकाश फैलता है। सामने भगवती की परमकरुणामयी मूर्ति है। तुलसीदास उच्छ्‌वसित कंठ से गा उठते हैं—)

दुसह-दोष-दुख-दलनि करु देवि ! दाया।
विश्वमूलासि, जन सानुकूलासि,
सर सूल धारिनि महामूल माया।।
तड़ित गर्भांग सर्वांग सुन्दर लसत,
दिव्य पट भव्य भूषन बिराजै।
बाल मृग मंजु-खंजन-बिलोचनि
चंद्रबदनि, लखि कोटि रतिमार लाजै।।
रूप-सुख-शील-सीमासि भीमासि
रामासि वामासि बरबुद्धि बानी।
छमुख हेरंब-अम्बासि जगदम्बिके।
शंभुजायासि जय जय भवानी।।
चंड-भुजदंड-खंडनि बिहंडिनि जननि,
महिषमद-भंग कर अंग तोरे।
सुम्भ निःसुम्भकुम्भीस रनकेसरिनि,
क्रोध बारिधि बैरिवृन्द बोरे।।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

निगम-आगम-अगम गुर्वि तव गुन
कथन उर्बिधर करै जेहि सहस जीहा।
देहि मा! मोहि प्रन प्रेम, यह नेम
निज राम घनश्याम तुलसी पपीहा ।।

[पटाक्षेप]

तृतीय दृश्य

[रत्नावली का गाँव। दीनबंधु पाठक के घर का राम मंदिर। मंदिर के जगमोहन में रत्नावली, उनकी माता और सरस्वती बैठी हैं। रत्नावली और सरस्वती दोनों के केशों में श्वेतता आने लगी है, किंतु रत्नावली के मुख पर विचित्र तेज और शान्ति है। जाड़े की ऋतु है। आँगन में धूप में दीनबंधु पाठक कम्बल ओढ़कर एक चारपाई पर लेटे हैं। वे अब अधिक अस्वस्थ रहने लगे हैं। बार-बार खाँसते हैं। कैलाशनाथ और रामू प्रवेश करते हैं।]

दीनबंधु—कौन आया है?

रत्नावली—भैया कैलाशनाथ और भैया रामू हैं, पिताजी!

दीनबंधु—ब त दिनों के बाद आये हैं। कहाँ गये थे ये लोग?

कैलाशनाथ—हम लोग वाराणसी गये थे, पिताजी!

दीनबंधु—(कष्ट के साथ उठकर) बहुत दिन लगा दिये वहाँ! क्या जमाई जी का कुछ पता लगा?

कैलाश नाथ—उनका यश तो देश में चारों ओर फैल रहा है। दक्षिण भारत के कुछ यात्री सुदूर कर्णाटक और कन्याकुमारी से वहाँ आये हुए हैं। उन्होंने श्रीवर जी के दर्शन वहाँ किये थे, वे उनके भक्त बन गये हैं।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

दीनबंधु—यह सब तो ठीक है, भैया ! पर वे हैं कहाँ ?

रामू—वहाँ से वे पुरी गये थे, यह तो आपको ज्ञात ही है। मेघा भगत कह रहे थे, उन्हें समाचार मिला है कि वे आगे कामरूप तक जाकर कामाख्या देवी के दर्शन कर आये हैं।

सरस्वती—कामरूप जादू-टोने का देश है। नाम सुनकर ही भय लगता है।

दीनबंधु—यह यात्रा वे अकेले ही कर रहे हैं ?

कैलाश—ऐसा ही है, पिताजी ! राघवानंद नाम के संत पुरी से वाराणसी आये हैं। उन्होंने उनके कई चमत्कारपूर्ण वृत्त सुनाये।

सरस्वती—बाबा बेनीमाधव दास भी तो वहाँ गये थे ?

कैलाश—गये थे अवश्य, पर उनके वहाँ पहुंचने के पूर्व ही श्रीवर जी साक्षी गोपाल का दर्शन कर कामाख्या शक्तिपीठ के लिए प्रस्थान कर चुके थे। राघवानंद ने बाबा बेनीमाधव दास को श्रीवर जी का यह संदेश दिया था कि वे रामनाम और रामलीला का प्रचार करते हुए वृन्दावन जाँय और वहाँ उनके पहुंचने की प्रतीक्षा करें।

सरस्वती—कामरूप से वे कहां जायेंगे ?

कैलाश—उन्हें ठीक-ठीक तो नहीं ज्ञात है। पर उनका अनुमान है कि वे कैलास, बद्रीनाथ, केदारनाथ आदि की दुर्गम यात्राएं पूरी कर हरद्वार से नीचे उतरेंगे और वहाँ से मथुरा-वृन्दावन जायेंगे।

(रत्नावली के नेत्र साश्रु हो जाते हैं। कुछ बोलती नहीं, केवल पादांगुष्ठ से धरती पर कुछ लिखती सी प्रतीत होती हैं।)

दीनबंधु—कितनी संकटपूर्ण हैं ये यात्रायें ! भगवान् मंगल करें।

रामू—भगवान् अवश्य मंगल करेंगे। दक्षिण और पूर्व से आये हुए जितने यात्रियों ने उनके दर्शन किये हैं, वे सब कहते हैं कि

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

वे भगवान् शंकर और हनुमानजी के अत्यन्त कृपापात्र हैं। उन्हें कहीं कोई भय नहीं।

दीनबंधु–(दीर्घ निःश्वास के साथ) एक बार मुझे भी उनके दर्शन हो जाते। (हाँफने और खांसने लगते हैं) ...पर अब इस जीवन की कोई आशा नहीं।

कैलाश–आशा क्यों नहीं पिताजी! आप निराश न हों। श्रीवर जी के लौटने का समय निकट आ रहा है।

(सहसा बड़ा कोलाहल होता है। अनेक प्रकार के वाद्यों की ध्वनि सुनाई पड़ती है, तूर्यनाद के साथ 'हर हर महादेव' का नाद और अनेक प्रकार की विचित्र हर्षध्वनि सुनाई पड़ती हैं।)

सरस्वती–यह कैसा कोलाहल है?

रामू–लगता है, समर भैया और उज्जयिनीदास पार्वती मंगल का पूर्वाभ्यास कर रहे हैं। शिवरात्रि निकट है। पूर्वाभ्यास के रूप में शिव बरात निकाली होगी।

रत्नावली—लगता है, वही है। वह देखिए शोभा-यात्रा आ रही है। (हंसती है)

(आगे वर-वेष धारण कर वृषभ पर सवार शिवजी चल रहे हैं। जटाओं का मुकुट है, शरीर पर सब सर्पों के ही आभूषण हैं। पीछे गधों, भैंसों, कुत्तों, बकरों आदि पर सवार प्रेतों की टोली चल रही है - किसी के एक मुख, किसी के अनेक, कोई एक नेत्र कोई अनेक नेत्र, कोई बहुत मोटा कोई बहुत कृश, किसी के पेट मे शिर कोई कबन्ध मात्र। ये सब बकरा, भेड़ा, भेड़िया, शृगाल आदि की बोलियां बोल रहे हैं। उज्जयिनीदास पीछे गायन करते चल रहे हैं।)

उज्जयिनीदास—मुदित सकल सिवदूत भूत गन गाजहिं।
सूकर महिष स्वान, खर वाहन साजहि॥
नाचहिं नाना रंग तरंग बढ़ावहि।
अज उलूक बक नाद गीत गन गावहि॥

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

बाजहिं निसान सुगान नभ चढ़ि बसह विधुभूषन चले।
बरसहिं सुमन जय जय करहिं सुर सगुन सुभ मंगल भले ।।
तुलसी बराती भूत प्रेत पिशाच पशुपति-सँग लसे ।
गज छाल व्याल कपाल माल बिलोकि बर सुर हरि हँसे।।
प्रमथनाथ के साथ प्रमथगन राजहिं ।
विविध भाँति मुख वाहन वेष विराजहिं ।।
कमठ खपर मढ़ि खाल निसान बजावहिं ।
नर कपाल जल भरि-भरि पियावहिं ।।

(बरात देखकर सभी हँस पड़ते हैं)

दीनबंधु—(उठकर बैठ जाते हैं और हँसते हैं ।) उज्जयिनीदास ने तो मुझे भी हँसा दिया। धन्य है इनका गायन और इनकी कला !

(उज्जयिनीदास का प्रवेश)

रत्नावली–(उज्जयिनीदास से) बड़ी अच्छी तैयारी की है आपने भैया !

रामू—(हँसकर) ये भुक्तभोगी हैं बहिन ! मुझे लगता है इनकी बरात ऐसी ही निकली होगी।

(सब लोग हँसते हैं)

[पटाक्षेप]

चतुर्थ दृश्य

[गोकुल में भगवान् नवनीत प्रिय जी के मंदिर में मंगला आरती हो रही है। आज नवनीत जी के प्राकट्य का दिन है। इसलिए सूरदास, कुंभनदास, चतुर्भुजदास, नंददास आदि अष्टसखा यहीं आ गये हैं। वे सब वृद्ध हैं। सूरदास वय में सबसे ज्येष्ठ हैं। सूरदास गौरवर्ण के हैं,

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

कुंभनदास का वर्ण कुछ साँवला है। आठों सखाओं के शरीर ऊँचे पर दुबले हैं। सब लोग स्वच्छ धोती पहने हैं, शरीर पर और कोई वस्त्र नहीं है। वे लोग मोटा स्वच्छ यज्ञोपवीत पहने हैं और गले में तुलसी के काष्ठ की दो मोटी स्वच्छ कंठियाँ है। सबके शिरों पर चौड़ी श्वेत शिखायें हैं और किसी किसी के मुख पर सफेद छोटी छोटी मूंछे। सूरदास जी गा रहे हैं।]

प्रभु जी की आरती बनी,
अति विचित्र रचना रचि राखी, परति न गिरा गनी।
कच्छप अध-आसन अनूप अति डाँड़ी सहसफनी॥
मही सराव, सप्त सागर घृत, बाती सैल घनी।
रवि-ससि जोति जगत परिपूरन हरत तिमिर रजनी॥
उड़त फूल उडगन नभ-अन्तर अंजन घटाधनी।
नारदादि सनकादि प्रजापति, सुर नर असुर अनी॥
काल, कर्म, गुन ओर अन्त नहिं प्रभु इच्छा रचनी।
यह प्रताप दीपक सुनिरंतर लोक-सकल भजनी।
सूरदास सब प्रकट ध्यान मैं, अति विचित्र सजनी॥

(आरती समाप्त होती है, सब लोग भगवान् की मूर्ति को साष्टांग प्रणाम करते हैं, और यथास्थान विराजते हैं।)

कुंभनदास—(परमानंद दास से) सुना है श्री अवध के कोई महात्मा तुलसीदास आजकल ब्रज में पधारे हैं। चारों ओर उनकी बड़ी चर्चा है, क्यों भाई ?

परमानंददास—सुना है, कल वह श्रीनाथ जी के दर्शन करने और महाभागवत सूरदास जी से भेंट करने श्रीगोवर्धन गये थे। पर सूरदास जी यहाँ आ गये थे।

सूरदास—श्रीनाथ जी के दर्शन करने श्रीगोवर्धन गये थे। वे मुझसे भी भेंट करना चाहते थे। मुझमें ऐसा क्या है, तात ?

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

कुंभनदास—तात ! आपके दर्शन से ही ब्रजभूमि की यात्रा सार्थक होती है। यह वे जानते होंगे।

सूरदास—क्या भगवान् श्रीराम के भक्त हैं वे महात्मा तुलसीदास ?

परमानंददास—हाँ तात ! बड़े प्रतापी हैं वे। उनकी ख्याति यहाँ सब ओर फैल गयी है।

चतुर्भुजदास—सखाओ ! मैने सुना है कि श्रीनाथ जी के मंदिर में उनके जाते ही अद्भुत चमत्कार घटित हुआ।

सब लोग—क्या हुआ ? क्या हुआ ?

चतुर्भुजदास—तात ! मंदिर में प्रवेश कर ज्यों ही वे भाव-विभोर हो भगवान् श्रीनाथ के समक्ष प्रणत हुए, वैसे ही श्रीनाथ जी का विग्रह दशवदननिधनकारी राम के रूप में परिवर्तित हो गया। श्रीनाथ जी ने मुरली छोड़कर धनुष उठा लिया।

सूरदास—हमारे श्रीनाथ जी ने मुरली छोड़कर धनुष-बाण उठा लिया ? धन्य हो भक्तवत्सल गोपाल ! धन्य तुलसीदास !

कुंभनदास—अभूतपूर्व है यह घटना ! निःसंदेह दर्शनीय हैं वे भक्त तुलसीदास !

सूरदास—हमारे मुरलीमनोहर ने महाभारत में भक्तप्रवर पितामह भीष्म के प्रण की रक्षा के लिए अपनी प्रतिज्ञा भंगकर शस्त्र उठा लिया था। यह तो कुछ वैसी ही घटना हुई।

चतुर्भुजदास—इस युग में ऐसी घटना ! लगता है, तुलसीदास कोई युगान्तरकारी पुरुष हैं। इस घटना में प्रभु का कोई अत्यन्त रहस्यमय संकेत निहित प्रतीत होता है।

सूरदास—मुझे भी ऐसा ही लगता है, तात !

(एक भक्त का प्रवेश)

भक्त—(कुंभनदास से) तात ! अवध के महात्मा तुलसीदास

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

नवनीतप्रिय जी के दर्शनार्थ आना चाहते हैं। वे द्वार पर आप लोगों की अनुमति की प्रतीक्षा में खड़े हैं।

सूरदास—तात कुम्भनदास ! सखा परमानंद ! आप लोग जाकर आदर पूर्वक तुलसीदास महाराज को ले आवें।

(सब लोग जाकर तुलसीदास के साथ लौटते हैं। तुलसीदास जी की अवस्था इस समय पचास-पचपन के ऊपर प्रतीत होती है। उनका शरीर तपःकृश होते हुए भी तेजोद्दीप्त है। रामनाम और भगवान् के धनुष-बाण की मुद्राओं से अंकित उनके आजानुविलंबित बाहु और प्रशस्त वक्षस्थल उनके व्यक्तित्व के प्रधान आकर्षण हैं। उनका श्मश्रुविहीन मुखमंडल बड़ा तेजस्वी है, आयत नेत्रद्वय प्रतिभा की किरणें विकीर्ण कर रहे हैं। लम्बी सौम्य नासिका और उन्नत ललाट पर रामानंदी तिलक शोभित है। उनके एक हाथ में तुलसी की माला और दूसरे में ताम्र का कमंडल जैसा जलपात्र है। वे आते ही नवनीत जी के समक्ष भाव-विभोर हो साष्टांग प्रणाम करते हैं, और फिर उसी प्रकार सूरदास जी और अन्य महात्माओं के समक्ष दंडवत् प्रणाम करते हैं। सूरदास जी उठकर उनकी ओर अपनी बाँहें फैला देते हैं। तुलसीदास दौड़कर उनके कंठ से लिपट जाते हैं।)

सूरदास—तात तुलसीदास ! कहाँ से पधारे हैं आप हम लोगों को अपने सत्संग से कृतार्थ करने ?

तुलसीदास—भक्तशिरोमणि ! कृतार्थ तो मैं हो रहा हूं, आपके दर्शन प्राप्त कर। ब्रजभूमि के अतीत और वर्तमान का समग्र भाव-वैभव और रस-वैभव आपके रूप में मूर्तिमान है।

सूरदास—तात तुलसीदास ! दुबिध- आँधरे सूर को आप जो गौरव दे रहे हैं, उसकी पहचान ही उसको नहीं। मैं तो महाप्रभु और गुसाईंजी का दासानुदास हूं।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

तुलसीदास—तात चरण ! आपके सातों सखाओं और आपकी वाणी की आठ वीणाओं ने समाज के हृदय को लोकोत्तर माधुर्य में निमज्जित कर दिया है। धर्म के रसरूप का आविर्भाव आपके कंठ से हुआ है। संप्रति हमारे धर्म की रक्षा इसी से हो रही है।

सूरदास—मैं यह कुछ नहीं जानता, तात ! महाप्रभु जी ने कीर्तन सेवा का मंडान मेरे लिए किया था। मैं उसी में लगा हूं। धन्य तो हैं आप जिनके लिए महाप्रभु जी के उपास्य श्रीनाथ जी ने अपना स्वरूप ही बदल डाला।

कुंभनदास—धन्य है आपकी भक्ति, महात्मा तुलसीदास !

तुलसीदास—व्याध और अजामिल से भी अधिक असाधु मुझ अधम पर कृपा करने वाले भगवान् की भक्त-वत्सलता की प्रशंसा कीजिए महाराज ! आप सब लोग व्रजचंद के अभिन्न लीला-सहचर हैं। मैं तो सारा देश घूमकर आप लोगों के चरणों में बैठकर मार्गदर्शन प्राप्त करने आया हूं।

परमानंददास—देश में आप कहाँ कहाँ घूमे और इस समय कहाँ से आ रहे हैं ?

तुलसीदास—इस समय तो मैं मारवाड़ देश के झीथड़ा स्थान से आ रहा हूं। वहाँ मेरे बड़े गुरुभाई की गद्दी है। वहाँ भगवान् जानराय के दर्शन कर यहाँ आया हूं। इसके पूर्व मैं सोलह से अधिक वर्षों तक अपने देश में पूर्व से पश्चिम तथा उत्तर से दक्षिण तक भ्रमण करता रहा हूं।

सूरदास—आपने निरन्तर सोलह वर्षों से भी अधिक समय तक परिव्राजक रहकर मातृभूमि की ममतामयी पुण्यमूर्ति के दर्शन किये हैं। बंदनीय हैं आप ! देश की क्या अवस्था है इस समय, तात ?

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

तुलसीदास—आप युग-युग के अद्वितीय महाकवि हैं, भक्तशिरोमणि। आपकी ऋतंभरा प्रज्ञा से छिपा ही क्या है ? अपना राष्ट्र शताब्दियों की सांध्य-घनमाला की अराल भृकुटी के नीचे निष्प्राण पड़ा है। उसका पूर्व गौरव ध्वस्त है, जातीय जीवन के महानद परकीय संस्कृति के समुद्र की ओर द्रुतगति से प्रवहमान हैं। चारों ओर अज्ञान, निराशा, कायरता और कामपरता का अन्धकार ही अन्धकार छाया हुआ है।

सूरदास—इस अन्धकार में व्रजचंद की चंद्रिका तो छिटकेगी ही प्यारे!

तुलसीदास—छिटकेगी अवश्य और प्रभात भी होगा, किंतु मार्ग में अनेक अंतराय हैं। अभी तो संस्कृति का सूर्य दीर्घकाल के लिए अस्तंगत दिखायी पड़ता है। देश में विजातीयों, विधर्मियों और विदेशियों का शासन है, दासता की भयावह तमिस्रा में दिशाकाश खो गये हैं। राष्ट्रीय चेतना के सूर्य को आत्म विस्मृति के राहु ने ग्रस लिया है। कुसंस्कारों का दुर्भेद्य आवरण जन जन के मन और प्राण को जड़ीभूत किये हुए है। देश असंख्य मत-मतांतरों, संप्रदायों और जाति-उपजातियों में बँटा हुआ है, वे सब निरंतर पारस्परिक संघर्ष में रत रहते हैं। वर्ण-व्यवस्था विश्रृंखल हो गयी है। ब्राह्मण वेद और पुराण बेंचकर अपना पेट पालने लगे हैं। सच्चे क्षत्रिय असंगठित होने के कारण युद्धों में वीरगति पा चुके अथवा पाते जा रहे हैं। जो बच रहे है, वे सूत और चारणों के समान विदेशी शासकों की चाटुकारिता करके गर्हित भोगपरायण जीवन बिता रहे हैं। शूद्रों को अपनी सेवा के बदले अपमान ही अपमान मिल रहा है।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

सूरदास—ठीक कहते हो, तात ! वैष्णव आचार्यों ने जातीय जीवन की जड़ता को दूर करने का प्रयत्न किया है। वर्ण-व्यवस्था को जन्मगत मान लेने के कारण कर्म की शुद्धता का महत्व ही नहीं रह गया है।

तुलसीदास- महान् वैष्णव आचार्यों ने यह भ्रान्ति दूर की है। देश भर में सर्वत्र उन्होंने सामाजिक विषमता मिटाकर साम्ययोग का शंखनाद किया है।

कुंभनदास—सब महान् भक्तों और आचार्यों ने एक स्वर से यह घोषित किया है कि भगवान् का भक्त किसी भी कुल में क्यों न उत्पन्न हुआ हो, वह बड़े से बड़े ब्राह्मण से भी बहुत बड़ा है।

तुलसीदास—ऊँचे वर्णों के लोग अपनी सामाजिक स्थिति को अपने निहित स्वार्थ का साधन बनाये हुए हैं। समाज की निरन्तर गिरती हुई स्थिति की ओर उनका ध्यान ही नहीं।

चतुर्भुजदास—तात ! सूरदास ने इसी स्थिति की व्यंजना करने वाला एक पद लिखा है—'श्रीधर बाभन करम कसाई।'

तुलसीदास—ठीक ही है महाराज ! आज भी हमारे शासक ब्राह्मण और क्षत्रियों का विशेष रूप से अपने ही भाइयों का गला काटने के लिए उपयोग कर रहे हैं।

कुंभनदास—मैंने तो सुना है, दिल्लीपति अपने एक ब्राह्मण मंत्री की सलाह से उन ब्राह्मणों को कुलीन घोषित कर रहा है जो उसके साथ हैं। अन्य लोग अकुलीन बना दिये गये हैं।

तुलसीदास—इस प्रकार हमारे धर्म का दुरुपयोग हमारे ही धर्म की जड़ें उखाड़ने और समाज के प्रत्येक वर्ग में फूट डालकर उसे दुर्बल बनाने के लिए किया जा रहा है। फूट डालो और शासन करो। हम इसी राजनीति के अधीन हैं। भूख से तड़पती प्रजा की ओर राजा का ध्यान नहीं।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

सूरदास—तात तुलसीदास ! सुना है, देश की अधिकांश प्रजा अकाल से पीड़ित है।

तुलसीदास—दरिद्रता के दशानन ने धरती को सब ओर से आक्रांत कर रखा है, लोग दाने-दाने को मुहताज हैं। बार बार अकाल पड़ते हैं और लक्ष-लक्ष जन पेड़ों की पत्तियां या वल्कल खाकर अथवा निराहार रहकर छुद्र कीट-पतंगों के समान तड़प तड़प कर प्राण त्याग रहे हैं। उनकी यह दुरवस्था देखी नहीं जाती, महात्मन् !

सूरदास—ठीक कहते हो, तात ! महाप्रभु की प्रेरणा से मुझे भी इस स्थिति का साक्षात्कार हुआ था।

तुलसीदास—महाप्रभु दिव्य दृष्टिसंपन्न थे। उन्होंने जातीय संस्कारों की धरती को असुरों से पददलित होते हुए देखकर ही आपको भगवान् की लोकमंगलविधायिनी लीलाओं के गान करने का उपदेश दिया था।

सूरदास—मेरे साथ ही मेरे अन्य सात बंधुओं को भी लीला गायन का उत्तरदायित्व सौंपा गया था। उनमें से कुछ को आप अपने सामने देख रहे हैं।

तुलसीदास—आप लोगों की उस महिमामयी साधना का अभीष्ट प्रभाव हुआ है। मरता हुआ देश आप लोगों के स्वरों की संजीवनी प्राप्त कर जीवित हो गया है। पुण्य के उखड़ते हुए पैर आपकी हाँक सुनकर जम गये हैं। अगणित कंठों में आपके स्वर मुखर हो उठे हैं, असंख्य हृदयों में आपके गीतों की प्रतिध्वनि हुई है।

सूरदास—सब महाप्रभु का प्रताप है, तात ! हम लोगों को तो उन्होंने अपना निमित्त बनाकर गौरव प्रदान किया।

कुंभनदास चतुर्भुजदास—सब उन्हीं का प्रताप है जो उन्होंने हम

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

मूकों को लीलारस का अनुभव करवाकर वावदूक बना दिया।

तुलसीदास–महाप्रभु आचार्य वल्लभदेव ने सारे संसार को भगवान् के प्रेम-बंधन में बाँध दिया और वात्सल्य रस के महासागर से धरती को परिप्लावित कर दिया।

कुंभनदास—हमारे हृदयों में लीलारस का प्राकट्य महाप्रभु ने ही किया।

तुलसीदास उन मनोहारी लीलाओं का गायन सुनकर जनता को कष्ट सहन करने की शक्ति और इस जातीय संकट के पार जाने की दृढ़ता प्राप्त हुई है। आपने शील और सौन्दर्य के जिन उदात्त आदर्शों की रागात्मक अभिव्यंजना की है, उन्होंने विजातीयों को भी अपनी ओर खींचा है। क्या यह कोई साधारण घटना है?

सूरदास—तात! आपने सारे देश में घूमकर और समाज की वर्तमान स्थिति देखकर क्या योजना बनायी है?

तुलसीदास—व्रजचंद के अभिन्न सहचर! आप तो ज्ञान और भक्ति के परमाचार्य श्री उद्धव के अवतार माने जाते हैं। मैं तो आपसे ही आशीर्वाद और पथ-प्रदर्शन प्राप्त करने के लिए यहाँ आया था। प्रतीत होता है, आपके ही अनुग्रह से आपके इष्टदेव ने मुझे मार्ग-निर्देश किया है।

सूरदास—मेरे इष्टदेव ने मार्ग-निर्देश किया, सो कैसे तात?

तुलसीदास—भगवान् श्रीनाथ जी ने मेरे प्रणत होते ही मुरली छोड़कर धनुष-बाण उठा लिया। विश्वविमोहनकारी कृष्ण का बाल-विग्रह रावण-रिपु राम के रूप में परिणत हो गया। तत्काल मुझे नवीन चेतना के उदय की आवश्यकता का संकेत मिला।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

कुंभनदास—आपको किस नवीन चेतना के उदय की आवश्यकता का संकेत मिला, बंधु !

तुलसीदास—मुझे विश्वास हो गया कि भगवान् को अब शील और सौन्दर्य के लोकरंजनकारी आदर्शों के साथ शक्ति के उदात्त लोकसंग्रहकारी आदर्शों का समन्वय अभीष्ट है। संप्रति समन्वय ही विभिन्न दिशाओं में विघटित होते हुए छिन्न-भिन्न समाज की सबसे बड़ी आवश्यकता है। भगवान् श्रीनाथ ने मुझे यह स्पष्ट बता दिया है कि उनके मर्यादा पुरुषोत्तम राम-स्वरूप में समन्वय का सर्वोच्च आदर्श निहित है।

सूरसदास—भगवान् श्रीनाथ के विग्रह-परिवर्तन का यह रहस्य, धन्य हो तात तुलसी ! त्रिकालदर्शी ऋषियों की सी आपकी यह प्रज्ञा देश का अशेष कल्याण करेगी।

तुलसीदास—आप मेरे आदरणीय अग्रज हैं। मैं तो आपका अनुगत मात्र हूं। पर मैं यह अनुभव करता हूं कि आज इस देश के संतों और कवियों पर ही देश की सांस्कृतिक स्वतंत्रता का आंदोलन चलाने का दायित्व है।

परमानंद—अपना आशय और स्पष्ट कीजिए, तात तुलसीदास !

तुलसीदास—भक्तप्रवर ! महाप्रभु वल्लभाचार्य ने अपने 'कृष्णाश्रय' नामक ग्रंथ में अपने समय की जिस विपरीत दिशा की ओर संकेत किया है उसी की बात मैं भी कह रहा हूँ। देश में विधर्मियों का साम्राज्य अच्छी तरह दृढ़ हो चुका है। सूफी पीर सूफी पद्धति की प्रेमलक्षणा भक्ति के माध्यम से अपने धर्म का प्रचार कर रहे हैं और निर्गुणमार्गी संत वेद-शास्त्र की मर्यादाओं पर से जनता की आस्था डिगाने में लगे हुए है। हम राजनीतिक और सांस्कृतिक दोनों दृष्टियों से पराधीन हैं — दुहरे पराधीन !

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

सूरदास—ठीक कहते हो तात ! देश को दोनों ही प्रकार की स्वतंत्रता अभीष्ट है। निर्गुणमार्गी संत यह नही समझ पाते कि वे विधर्मियों के धर्म प्रचार में सहायता कर रहे हैं।

तुलसीदास—राजनीतिक स्वतंत्रता का आंदोलन वीर सैनिकों द्वारा परिचालित होता है, और सांस्कृतिक स्वतंत्रता का आंदोलन संतों, कवियों और कलाकारों द्वारा। राजनीतिक स्वतंत्रता भौतिक होने के कारण अपेक्षाकृत बाह्य एवं अल्प-आयास-साध्य है, पर सांस्कृतिक स्वाधीनता का धरातल मानसिक और आध्यात्मिक है। इसलिए उसकी सुरक्षा और प्रगति के लिए जिन उपादानों की आवश्यकता है, उनका सर्जन और संवर्धन आध्यात्मिक शक्तिसंपन्न महापुरुषों के द्वारा ही संभव है।

सूरदास— आपने राष्ट्रीय जीवन की व्याधि का सही निदान किया है। तात ! हमारे धर्म और संस्कृति में हिंसा और पीड़न के लिए कोई स्थान नहीं, भूतदया उसका केन्द्रीय तत्व है। विश्व मानव के कल्याण के लिए इस धर्म और संस्कृति की रक्षा आवश्यक है। इस समय हम लोगों को अपनी संस्कृति की रक्षा के लिए भगवान् की कृपा का आवाहन करना चाहिए।

तुलसीदास—वस्तुतः सांस्कृतिक स्वाधीनता को खोकर कोई देश बहुत दिन तक जीवित नहीं रह सकता। सांस्कृतिक दृष्टि से पराधीन जातियों में मानसिक दासता बद्धमूल हो जाती है। ऐसी जातियाँ अपनी राजनीनिक स्वतंत्रता को भी स्थायी नहीं रख पातीं। वे उसे प्राप्त करके भी खो देती हैं। जिन देशों की सांस्कृतिक स्वतंत्रता सुरक्षित रहती है, उनमें राजनीतिक स्वाधीनता प्राप्त करने की क्षमता रखने वाले वीर भी यथासमय आविर्भूत होते हैं। सांस्कृतिक स्वाधीनता

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

की कल्पलता में राजनीतिक स्वतंत्रता का सुफल फलता ही है। अतएव आपके नेतृत्व में हम सबको राष्ट्र की सांस्कृतिक स्वाधीनता का विराट् आंदोलन प्रवर्तित करना है।

सूरदास—ठीक कहते हो तात ! जीवन में नया प्रवाह लाने की आवश्यकता है। सांस्कृतिक अपकर्ष से द्वंद्वयुद्ध करने के लिए देश को सन्नद्ध करना है। पर प्रिय तुलसी ! मेरे जीवन की तो संध्या आ गई है, यह सब होगा और तुम्हारे द्वारा होगा। मैं अपने हृदय के अंतस्तल से तुमको आशीर्वाद देता हूं कि तुम वाल्मीकि, व्यास और कालिदास से भी बढ़ कर यश प्राप्त करो।

तुलसी—देव, आपने अपनी महिमामयी साधना से आध्यात्मिकता के जिस रसार्णव की सृष्टि की है, जातीय जीवन के प्रवाह को उधर उन्मुख करना है, पर उसके मार्ग में अनेक जड़ प्रतिबंध हैं, उनको मैं आपके आशीर्वाद से राम-कथा की कल्मषविध्वंसिनी चेतनोर्मियों से दूर करने का प्रयत्न करूँगा। मुझे आपका आशीर्वाद सफल करने की शक्ति प्राप्त हो, यही कामना है।

सूरदास—अच्छा तात ! यहाँ समवेत भक्तमंडली तुम्हारे मुख से कुछ सुनना चाहती है।

(नेपथ्य में लाठी की धरती पर पटकने की आवाज सुनायी पड़ती है। 'माखन मिश्री का मेरा भाग कहाँ है' यह कहता हुआ एक युवक प्रवेश करता है। वह शरीर पर फटे हुए चीर लपेटे हुए है। माथे पर चीरों की पगड़ी है जिसमें मयूरपंख लगे हुए हैं। लाल रंग का अधोवस्त्र पहने हुए है। भगवान् की मूर्ति के सामने लाठी पटकता हुआ खड़ा हो जाता है।)

सूरदास—तुम आ गये, मनसुखा जी !

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

मनसुखा—आता क्यों नहीं ? रोज ही आप मेरे हिस्से का माखन खा जाते हैं। बड़े भाई होकर आप मुझ पर इतना अत्याचार करते हैं।

सूरदास—तुमने आने में देर कर दी, भोग का माखन तो आज भी हम सब सखा खा गये। तुमने देर क्यों की ?

मनसुखा—आप नित याही छल मेरे साथ करैं हैं। आज तो मैं बहुत सकारे आ गया हूं, अबार कहाँ हुई है ?

सूरदास—मोको तो दृष्टि ही नहीं है, अबार-सबार का जानूं ! ठाकुर जी को भोग समर्प्यो गयो, जो प्रसाद मिल्यौ सो मैंने आरोग लियौ। और काहू सखा के पास माखन मिश्री होय तौ मांगौ।

मनसुखा—मैं काहू सो मांगूगो नहीं। आज या लाठी के बल पै प्यारे नवनीत जू सों ही अपनो भाग लियौंगो।

(यह कहकर जोर-जोर से धरती पर लाठी पटकने लगता है।)

सूरदास—देखो मनसुखा ! यहाँ अवध के महात्मा तुलसीदास पाँव धारे हैं, सो कितनेक वर्ष सारे देश को भ्रमण करके इतै आये हैं। महान् भगवदीय और कवि हैं। आज यहां उपद्रव मत करना।

मनसुखा—अवध के तुलसीदास जिन्होंने श्रीनाथ जी को धनुष-बाण गहा दियो ?

सूरदास—हाँ, वे ही।

मनसुखा—(तुलसीदास के सामने प्रणत होकर) महाराज, आप तो अवधेश के चाकर होंगे —कट्टर मर्यादावादी। मैं सत्संग करके आ रहा हूं, बहुत थका हूं। आप यदि मुझे भरपेट माखन-मिश्री खिला दें, तो मैं आपके सामने भलामानुस होने का प्रयत्न कर सकता हूं। (लाठी फेंक देता है और तुलसीदास जी के सामने पद्मासन लगाकर बैठ जाता है। पेट पर

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

हाथ रख कर कहता है—'जल्दी कीजिए महाराज, अवधेश के चाकर को क्या कमी हो सकती है' सब लोग हँसते हैं ।)

तुलसीदास—कौन सा सत्संग करके आ रहे हैं, मनसुखा जी ?

मनसुखा—हम सब सखा यमुना तट पर गेंद खेलने चले गये थे, परस्पर खूब मार हुई । मैं आज श्रीदामा को अच्छी मार लगाकर यहाँ भाग आया हूं । हमारा याही सत्संग है ।

तुलसीदास—धन्य हो सखा ! (भावविभोर होकर नेत्र मूंद लेते हैं ।)

सूरदास—मनसुखा ! आज तुमने श्रीदामा जी को मार लगा दी । रोज तो तुम्हीं खब पिटा करते थे, अच्छा आज तुमको तुम्हारे सत्संग का मनचाहा पुरस्कार नवनीतप्रियजू के कलेवा में भाग के रूप में मिलेगा—

माखन रोटी, सद्य जम्यौ दधि, भाँति-भाँति के मेवा ।
खारिक, दाख, चिरौंजी, किसमिस, उज्वल गरी बदाम ॥
सफरी, सेब, छुहारे, पिस्ता, जे तरबूजा नाम ।
अरु मेवा बहु भाँति-भाँति हैं षटरस के मिष्ठान्न ॥
सूरदास प्रभु करत कलेवा रीझे स्याम सुजान ।

मनसुखा—मेरा सत्संग सफल हो गया ! (लाठी उठाकर भाव-विभोर होकर नृत्य करने लगते हैं और गाते हैं—

'कमल नैन हरि करो कलेवा' । परमानंद प्रसाद की उपर्युक्त सब सामग्री लाकर रखते हैं ।

सूरदास—(तुलसीदास से) तात, ये मनसुखा जी गोपभाव के उपासी व्रज के एक सिद्ध संत हैं ।

तुलसीदास—मैंने पहचान लिया, महाराज !

मनसुखा(तुलसीदास से) क्या पहचान गये महाराज ! मैं संत हूं ! आप तो देश भर का भ्रमण करके यहाँ पधारे हैं, ऐसे ही होते हैं संत ? अच्छा, अवधेश के सरदार ! नवनीतप्रियजू

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

क्रा प्रिय लगनो वारौ काऊ पद सुनाइयो, तब हम लोग प्रसाद ग्रहण करें।

तुलसीदास—जो आज्ञा, सखा! (गाते हैं, सूरदास अपना तम्बूरा उठा लेते हैं और उनके सखागण अन्य वाद्यों का वादन करते हैं :—

मोकहँ झूठेहु दोष लगावहिँ।
मैया! इन्हहिँ बानि परगृह की, नाना जुगति बनावहिँ।
इन्ह के लिए खेलिबो छाँड़्यों तऊ न उबरन पावहिँ।
भाजन फोरि, बोरि कर गोरस देन उरहनो आवहिँ॥
कबहुंक बाल रोवाइ पानि गहि मिस करि उठि उठि धावहिँ।
करहि आपु सिर धरहिँ आन के बचन बिरंचि हरावहिँ॥
मेरी टेव बूझि हलधर को संतत संग खेलावहिँ।
जे अन्याउ करहिँ काहू को ते सिसु मोहिँ न भावहिँ॥
सुनि सुनि बचन-चातुरी ग्वालिनि हँसि हँसि बदन दुरावहिँ।
बाल गोपाल केलि-कल-कीरति तुलसिदास मुनि गावहिँ॥

[सब लोग जय जयकार करते हैं। पर्दा गिरता है]

पंचम दृश्य

[दीनबंधु पाठक के घर का मंदिर। पूस का दिन। पाठक बीमार हैं, धूप में खाट पर लेटे हैं। उनकी पत्नी उनके सीने पर और सरस्वती पैरों में तेल मल रही हैं। रत्नावली अपनी माता के सामने खाट की दूसरी ओर भूमि पर बैठी हैं। उनके केश श्वेत हो गये हैं।]

सरस्वती—(रत्नावली से) ननदजी! मध्याह्न पूजा का समय हो गया है। आज भोग और आरती आप कर लें।

रत्नावली—चलो, भगवान् के नैवेद्य की सामग्री तैयार रखी है।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

दीनबंधु—(रत्नावली से क्षीण स्वर में) जाओ, बेटी ! मध्याह्न-भोग का समय बीत रहा है। (अपनी पत्नी से) क्या जमाई जी का कोई समाचार मिला ?

सरस्वती—पिताजी, हम लोग समर सिंह और कैलाशजी के लौटने की प्रतीक्षा में हैं। वे लोग उनकी खोज में वृन्दावन की ओर गये थे। अब तो उन्हें आना ही चाहिए।

(रामनाथ प्रसन्नता से भरा हुआ तेजी से प्रवेश करता हैं।)

रामनाथ—माताजी ! माताजी ! बहनोई जी का बड़ा शुभ समाचार आया है। (यह कहकर मंदिर के अलिंद में भगवान् राम के विग्रह के समक्ष साष्टांग प्रणाम करते हैं।)

रत्नावली की माता—कुछ बता तो ! क्या समाचार मिला है ?

दीनबंधु—(मानों स्वास्थ्य फिर लौट आया हो, उठने का प्रयत्न करते हैं। उनकी पत्नी उनसे लेटे रहने का आग्रह करती है। लेट जाते हैं।) क्या शुभ समाचार है ? मेरा हृदय धड़कने लगा है।

रामनाथ (उनकी शय्या के निकट जाकर) पिताजी, भैया समर सिंह और कैलाशनाथ अपनी ब्रज की यात्रा से लौट आये हैं। दोनों लोग आपको अभीष्ट समाचार देने आ ही रहे होंगे। (कैलाशमाथ और समर सिंह का प्रवेश। दोनों दीनबंधु और उनकी पत्नी के चरण छूते हैं।

काशीनाथ—माताजी ! समाचार तो परम मंगलमय है। रत्नावली बहिन की तपस्या फलीभूत हो रही है।

समरसिंह—सत्य है। श्रीवर जी आज के परम सिद्ध संत हैं। उनकी सिद्धि में हमारी बहिन के तप का प्रमुख योगदान है।

रत्नावली की मां—कुछ कहो तो, भैया !

दीनबंधु—(आधे उठकर) कुछ बताओ बेटा ?

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

कैलाशनाथ—हम लोगों के वृन्दावन पहुंचने के कुछ समय पहले तक श्रीवर जी ब्रज में ही थे। हम लगों के वहाँ पहुंचने के चार ही छे दिन पूर्व उन्होंने ब्रज से प्रस्थान किया था।

समर सिंह—पिताजी! अब आप उनकी चिंता छोड़ें, वे परम सिद्ध पुरुष हैं। वे जब गोवर्धन पर श्रीनाथ जी के मंदिर में दर्शन करने गये, तो श्रीनाथ जी ने मुरली छोड़कर धनुष-बाण उठा लिया।

दीनबंधु—(मुख पर लालिमा दौड़ जाती है।) कलिकाल में यह विग्रह परिवर्त्तन!

कैलाशनाथ—कुछ लोग तो कहते थे कि मदनमोहन जी के मंदिर में भी ऐसी ही घटना घटी।

सरस्वती—यह सब आपको कैसे ज्ञात हुआ?

कैलाश—ब्रज में घर-घर गली-गली इसकी चर्चा है।

समर सिंह—हम लोगों को महाप्रभु बल्लभाचार्य और उनके पुत्र गोस्वामी विठ्ठलनाथ की भक्तमंडली से इसकी प्रामाणिक जानकारी मिली।

कैलाश ब्रज के इस समय के सबसे बड़े ज्ञात भक्त सूरदास महाराज हैं। वे महान् कवि भी हैं। सात दिन श्रीवर जी ने उनका सत्संग किया। सूरदास महाराज उनकी प्रशंसा करते थक नहीं रहे थे। रत्नावली बहिन! यह सब तुम्हारी तपस्या का प्रताप है।

रत्नावली—(सिर नीचा कर लेती हैं। आँखों से अश्रु ढलकने लगते हैं।) भैया............।

समरसिंह—बहिन! माता जी! पिताजी! आप लोग चिंता छोड़ें, प्रसन्न हों। अब निकट भविष्य में ही श्रीवर जी से भेंट होगी।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

कैलाशनाथ—उनका दर्शन प्राप्त करने की मंगलमयी घड़ी निकट आ रही है। उन्होंने ब्रज से तीर्थराज प्रयाग के लिए प्रस्थान किया है।

समरसिंह—वे प्रयाग किस मार्ग से आयेंगे, इसका कोई अनुमान नहीं। यदि कुछ सूत्र प्राप्त होता, तो हम लोग मार्ग में ही उनसे मिलने का प्रयत्न करते।

कैलाशनाथ—वे यमुना जी के किनारे चलकर वहाँ जायेंगे अथवा गंगा जी के—कुछ ज्ञात नहीं हो सका।

समरसिंह—उनके ठहरने के जिन स्थानों का पता लगा, हम लोग वहाँ गये। कोई कुछ बता नहीं सका।

कैलाशनाथ—यह निश्चित है, मकर संक्रान्ति के अवसर पर वे प्रयाग में होंगे। हम लोग वहीं उनको खोज निकालेंगे।

रत्नावली की माता—मकर संक्रान्ति को अब दिन ही कितने रह गये। (रत्नावली से) चलो, बेटी! भगवान् को भोग लगाओ। उन अशरणशरण के चरण ही हमारी रक्षा करेंगे।

(सब लोग मंदिर के जगमोहन में जाकर खड़े होते हैं। रत्नावली भोग लगाती हैं, फिर आरती होती है। आरती के पश्चात् सब लोग भगवद्विग्रह के सामने साष्टांग प्रणाम करते हैं।)

कैलाशनाथ—मैंने ब्रज में एक भक्त से श्रीवर जी का एक छंद सुनकर कंठस्थ भी कर लिया था। सुनिए—

सियराम सरूप अगाध अनूप विलोचन
मीननु को जलु है।
श्रुति राम कथा मुख राम को नाम हिये पुनि
रामहिं को थलु है।
मति रामहिं सो, गति रामहिं सो, रति राम सो
रामहिं को बल है।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

सब की न कहै, तुलसी के मते, इतनो
जगजीवन को फलु है ।

सब लोग—धन्य है यह चातकी वृत्ति ! हम लोग भी धन्य हो गये !

[सब लोग चरणामृत लेकर चले जाते हैं । केवल रत्नावली और सरस्वती रह जाती हैं ।]

सरस्वती—जीजी ! मकर संक्रान्ति के अवसर पर हम लोग भी प्रयाग चलकर उनके दर्शन करें । पिताजी सहर्ष आज्ञा दे देंगे ।

रत्नावली—मेरा जाना उचित नहीं होगा, बहिन ! मैं उनकी ऊर्ध्वमुखी महती साधना में किसी प्रकार बाधक बनना नहीं चाहती ।

सरस्वती—आपको उनके दर्शन प्राप्त करने की इच्छा नहीं होती ?

रत्नावली—इच्छा नहीं············होती··········(मौन हो जाती हैं, आँसू गिरने लगते है ।)

सरस्वती—जीजी ! आपके कोमल मन को चोट लगी । मुझे क्षमा करें । (रत्नावली को हृदय से लगा लेती है ।)

रत्नावली—(आँसू गिरते रहते हैं) ऐसी कोई बात नहीं, बहिन !

सरस्वती—आप उनकी साधना में बाधक नहीं होना चाहतीं, इसलिए उनके दर्शन करने के लिए नहीं जाना चाहतीं! पर मुझे विश्वास है, आपकी स्मृति उनके हृदय में निरंतर जागृत रहती है ।

रत्नावली—(साश्चर्य) यह कैसे कहती हो, भाभी ?

सरस्वती—मैं उनके बरवै पढ़ती रहती हूं । भगवान् राम के विरह का जो वर्णन उन्होंने किया है, उसमें मुझे उनकी व्यथा का भी आभास मिलने लगता है—

सीतलता ससि की रहि सब जग छाइ ।
अगिनि ताप ह्वै, तन कहँ सँचरत आइ ।।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

रत्नावली—ऐसी कल्पना न करो, भाभी ! यह तो किशोरी जी के प्रति प्रभु के विरह की सहज निर्व्याज व्यंजना है।
(आँखें भर आती हैं। आँसू बहने लगते हैं।)

[पटाक्षेप]

षष्ठ दृश्य

[समय—प्रातःकाल। सूर्योदय हो रहा है। स्थान—अयोध्या में सरयू के तट से कुछ दूर श्रीअयोध्या में नंदिग्राम की ओर जाने पर बरगद के वृक्षों का एक सघन कुंज। चारों ओर बड़े बड़े वटवृक्ष लगे हैं। उनके बीच में एक विशिष्ट और विशाल वटवृक्ष है। उसका पत्रसमूह बड़ा घना है, लाल रंग के फल लगे हैं। नीचे एक वेदिका है। उस पर कुशासन बिछा है। कुशासन पर गोस्वामी तुलसीदास सिद्धासन लगाए ध्यानमग्न बैठे हैं। बेनीमाधवदास प्रवेश करते हैं और उनके सामने मसिपात्र, मयूरपंख की कुछ लेखनियाँ और भूर्जपत्रादि रखते हैं। गोस्वामीजी, नेत्र खोलकर एक बार देखते हैं, फिर 'सीताराम सीताराम' कहकर उन्हें बाहर चले जाने का संकेत करते हैं। बेनीमाधवदास बरगद के वृक्षों के झुरमुट के बाहर आसन बिछाकर बैठ जाते हैं। आज संवत् १६३१ की रामनवमी का दिन है। उस मार्ग से जाने वाले श्रीअयोध्या के दर्शनार्थियों का कोलाहल और जयजयकार कभी कभी सुनाई पड़ जाता है। कुछ यात्री बेनीमाधवदास को देखकर उनके पास आते हैं। वे हैं रामू, कैलाशनाथ, उज्जयिनीदास और काशीनाथ। निकट जाकर वे बेनीमाधवदास को पहचान लेते हैं।]

रामू—भैया कैलाशनाथ, ये तो बेनीमाधवदास महाराज हैं। मेरी आँखें धोखा तो नहीं दे रहीं ?

कैलाशनाथ— (ध्यान से देखकर) निश्चय ही ये महाराज बेनीमाधव दास हैं।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

काशीनाथ—निश्चय ही ये वे ही हैं, वेश कुछ अवश्य बदला हुआ है।

कैलाशनाथ—मुझे विश्वास हो गया, अब श्रीवर जी के दर्शन भी अवश्य होंगे।

उज्जयिनीदास—निश्चय ही अब हमारी लम्बी यात्रा का लक्ष्य प्राप्त होकर रहेगा।

(चारों लोग आगे जाकर बेनीमाधवदास को प्रणाम करते हैं। बेनीमाधवदास सबको पहचान कर स्वागत में खड़े हो जाते हैं।)

बेनीमाधवदास—बंधुओ ! दीर्घकाल के बाद आज आप लोगों के दर्शन का सौभाग्य प्राप्त हो रहा है। आप लोगों का स्मरण करता रहता था, पर दर्शन का सुयोग नहीं मिल रहा था। स्वागत है, आप सब बंधुओं का !

रामू—हम लोग महाराजजी को और आप को प्रयाग में खोजते रहे। वहाँ आप लोगों के दर्शन नहीं हुए, तो वहाँ से निराश हो यहाँ आये हैं।

कैलाश—श्रीवरजी के विषय में कुछ बतलाइए, वे इस समय कहाँ हैं ?

काशीनाथ—हम लोगों ने सम्पूर्ण अयोध्या छान डाली। फिर नंदिग्राम गये। वहाँ से भी विफल-मनोरथ होकर लौट रहे हैं।

बेनीमाधवदास-अब आप लोग आश्वस्त हों। गुरुदेव इन्हीं वटवृक्षों के कुंज में ध्यानलीन हैं। आपको यथासमय उनके दर्शन होंगे।

(कुंज के भीतर से मधुर गुंजन सुनाई पड़ता है—

वर्णानामर्थसंघानां रसानां छंदसामपि ।
मंगलानां च कर्त्तारौ वंदे वाणीविनायकौ ॥
भवानीशंकरौ वंदे श्रद्धाविश्वासरूपिणौ ।
याभ्यां विना न पश्यंति सिद्धाः स्वान्तःस्थमीश्वरं ॥

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

शीतल मंद सौरभपूर्ण पवन बहने लगता है। उसके साथ अनेक प्रकार के दिव्य पुष्प चारों ओर बिखरने लगते हैं। वीणा का सा मधुर गुंजन दिशाकाश में भर जाता है,
मानों अदृश्य ऋषिगण सामगान कर रहे हों।)

रामू—यह क्या हो रहा है, महात्मन् ?

बेनीमाधवदास—लगता है, गुरुदेव ने किसी महान् ग्रन्थ की रचना का उपक्रम किया है। संभवतः हम लोग उसका मंगलाचरण सुन रहे थे।

(फिर स्वर गूंजते हैं: — वन्दे बोधमयं नित्यं गुरुं शंकररूपिणं।
यमाश्रितो हि वक्रोऽपि चन्द्रः सर्वत्र वन्द्यते।)

उज्जयिनीदास—भगवान् शंकर की वन्दना है यह। हम लोग ध्यान से सुनें। आज रामनवमी के पावन पर्व पर भगवान् का वाङ्मयावतार हो रहा है क्या ? सामवेद के स्वरों की माधुरी है इस वाणी में।

काशीनाथ—तो क्या अब श्रीवर जी संस्कृत में रचना करेंगे ?

बेनीमाधवदास—मैं ऐसा नहीं समझता। उन्हें भगवान् शंकर ने स्वयं भाषा में काव्य-रचना करने का आदेश दिया है।

रामू— यह आप कैसे जानते हैं, महात्मन् ?

बेनीमाधवदास—जब वे चिंतामणि धाम वृन्दावन से लौटे, तो प्रयाग से मैं उनके साथ हो गया था।

काशीनाथ— प्रयाग में तो हम लोग भी उनको खोज रहे थे।

बेनीमाधवदास—प्रयाग में उन्हें महर्षियों ने दर्शन दिये और भारद्वाज आश्रम में उन्होंने उन मुनियों से वही कथा सुनी जो उन्होंने अपनी बाल्यावस्था में भपने गुरु नरहरिदास से सुनी थी।

सब लोग— आश्चर्य ! महदाश्चर्य !

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

रामू– प्रयाग से वे काशी गये। वहाँ उनकी कवित्व-शक्ति सहसा अत्यधिक स्फुरित हो उठी। वे संस्कृत में काव्य-रचना करने लगे।

कैलाश—संस्कृत में तो अभी भी हम लोगों ने उनकी रचना सुनी है।

बेनीमाधवदास –भगवान् शंकर ने उन्हें स्वप्न में आदेश दिया है कि वे भाषा में रामकथा लिखें। उन्हीं के आदेश से वे यहाँ आये हैं।

रामू—यही स्थान उन्होंने रामकथा गायन के लिए चुना है।

बेनीमाधव दास—वे अयोध्या में विचरण कर रहे थे, मैं भी उनके साथ था। एक संत ने उनको यहाँ आने का निर्देश किया।

रामू—कौन थे वे संत ?

बेनीमाधव दास– कुछ पता नहीं। वे हमको वटवृक्षों के इस सघन वन में ले आये। इसके मध्य में एक वटवृक्ष के नीचे सुन्दर वेदी है। उस पर अग्नि के समान देदीप्यमान महात्मा सिद्धासन पर बैठे तप कर रहे थे।

कैलाश—वे अब भी इस कुंज में हैं ?

बेनीमाधवदास—नहीं। उन्होंने गुरुदेव को देखकर अपना स्थान छोड़ दिया और कहा— "मैं आपकी प्रतीक्षा कर रहा था। मेरे गुरुदेव ने आदेश दिया था, जब तुलसीदास आवें तो यह स्थान उनको सौंप देना। यह सिद्धपीठ है। आप यहाँ बैठकर भाव-समाधि में लीन हो रामायण की रचना करें।" यह कहकर वे चले गये।

रामू—कोई महान् दैवी विधान क्रियाशील प्रतीत होता है।

बेनीमाधव दास—ऐसी ही बात है, बंधु ! आज चैत्र की रामनवमी पर ग्रह, नक्षत्र, दिवस आदि का वैसा ही योग घटित हुआ है, जैसा त्रेतायुग में प्रभु राम के जन्म के समय था।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

(दो व्यक्तियों का प्रवेश। वे वेशभूषा से दक्षिण भारतीय प्रतीत होते हैं। वट की शीतल छाया देखकर वहीं कुछ विश्राम करने के लिए ठहर जाते हैं।)

बेनीमाधवदास—महानुभावो! आप सुदूर दक्षिण से यहाँ पधारे प्रतीत होते हैं। क्या मैं आपका परिचय प्राप्त कर सकता हूँ?

दोनों आगंतुक—हम लोग कर्णाटक के निवासी हैं, यहाँ अपने गुरुदेव की खोज में आये हैं। हम लोग कई दिनों से अयोध्या के हाट-बाट घर-गली में उन्हें खोज रहे हैं।

(नेपथ्य में वृक्षों के कुंज से फिर स्वर गूज उठते हैं:—

कुंद इंदु समदेह उमा रमन करुना अयन।
जासु दीन पर नेह करहु कृपा मर्दन मयन।)

दोनों—यह तो हमारे गुरुदेव की ही वाणी है। वे भगवान् शंकर की वन्दना कर रहे हैं।

बेनीमाधव—यह आपके गुरुदेव की वाणी है? कौन हैं आपके गुरुदेव? कौन हैं आप लोग?

वेंकट—ये हैं सोमशेखर और मैं हूं वेंकटरमण। हमारे गुरुदेव हैं गोस्वामी तुलसीदास।

बेनीमाधवदास—निश्चय ही यह उन्हीं गुरुदेव की वाणी है। वे संप्रति भाव-समाधि में लीन हैं और इसी वटाटवी में निवास करते हैं।

वेंकट—धन्य हो गये हम! संवत् १६३१ की रामनवमी तिथि पर उन्होंने दर्शन देने का आश्वासन दिया था।

बेनीमाधव—देखिए, मध्याह्न-बेला हो गई। चारों ओर मंदिरों में विविध वाद्यों की ध्वनि सुनाई पड़ने लगी है।

(वटवृक्षों के कुंज से भी पंच वाद्यों की ध्वनि सुनाई पड़ती है।)

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

सोमशेखर–गुरुदेव ने कर्णाटक में जगद्गुरु वसवेश्वर द्वारा प्रवर्त्तित वीरशैव साधना कर भगवान् शंकर का साक्षात्कार किया था। मैंने यहाँ भी उनके मुख से भगवान् शिव की वंदना सुनी और धन्य हो गया।

वेंकट–लगता है, स्वयं भगवान् शंकर उनसे रामकथा लिखवा रहे हैं।

(अत्यन्त मधुर वीणा के स्वरों के साथ साथ अमृतोपम गायन गूंजता है। सब लोग मुग्ध होकर सुनते हैं।)

बेनीमाधव--लगता है, स्वयं भगवान् राम इस वाणी के रूप में अवतरित हो रहे हैं।

सोमशेखर–मैंने सामवेद का अभ्यास किया है। वैसी ही मधुरता है इन स्वरों में।

(फिर स्वर गूंजते हैं:—

सादर सिवहिं नाइ अब माथा। बरनउँ बिसद राम गुनगाथा॥
संबत सोरह सै इकतीसा। करउँ कथा हरि पद धरि सीसा॥
नौमी भौम वार मधुमासा। अवधपुरी यह चरित प्रकासा॥
जेहिं दिन राम जनम श्रुति गावहिं। तीरथ सकल तहाँ चलि आवहिं॥
असुर नाग खग नर मुनि देवा। आइ करहिं रघुनायक सेवा॥
जन्म महोत्सव रचहिं सुजाना। करहिं राम कल कीरति गाना॥)

सब लोग—(हर्षोन्मत्त होकर) मानवमात्र के कल्याण के लिए भगवान् श्रीराम का वाङ्मय अवतार हो गया।

[पंच वाद्यों के वादन के साथ पर्दा गिरता है।]

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

चतुर्थ अंक

प्रथम दृश्य

[स्थान—दीनबंधु पाठक का घर । घर के मंदिर के अलिंद में रत्नावली, उनकी माता, सरस्वती और दीनबंधु पाठक बैठे हैं । पाठक अब कुछ स्वस्थ हैं । कैलाशनाथ और रामू श्रीअयोध्या से लौट आये हैं । सब लोग उनके आगमन की प्रतीक्षा कर रहे हैं ।]

रत्नावली की माता—रामू और कैलाशनाथ कल रात देर में अयोध्याजी से लौटे हैं। यह समाचार उन्होंने भेजा है।

दीनबंधु—वे लोग आते ही होंगे।

सरस्वती—मुझे लगता है, कोई अच्छा समाचार है।

श्यामनाथ—(प्रवेश कर) बहुत अच्छा समाचार है।

दीनबंधु—क्या शुभ समाचार है, बेटा ?

श्यामनाथ—लो, ये रामू भैया और कैलाश आ गये। ये ही बतलायेंगे।

(रामू और कैलाशनाथ प्रवेश करते है और दीनबंधु, उनकी पत्नी तथा रत्नावली को प्रणाम करते हैं।)

दीनबंधु की माता—आयुष्मान् हो पुत्र ! क्या जमाई जी से तुम्हारी भेंट हुई ?

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

रामू–हम लोगों से उनकी भेंट तो नहीं हुई, दूर से उनके दर्शन अवश्य हुए।

कैलाश - संप्रति वे भाव-समाधि में लीन हैं और रामकथा लिख रहे हैं।

रामू–उन्होंने मौनव्रत धारण कर रखा है। केवल रात्रि में एक बार थोड़ा दूध लेते हैं।

कैलाश—बाबा बेनीमाधवदास उनकी सेवा में हैं। वे वट-वृक्षों के एक सघन कुंज में एक सिद्धपीठ पर समासीन हैं। रामनवमी के दिन उन्होंने विमल रामकथा के प्रणयन का आरम्भ कर दिया है।

सरस्वती—क्या आप लोगों ने उस कथा का कोई अंश सुना ?

रामू --कभी कभी भावाविष्ट होकर वे अपनी लिखी कथा का गायन करने लगते हैं। भैया कैलाश को अनेक अंश कंठस्थ हो गये हैं। सुनाओ कुछ भैया कैलाश ?

कैलाश—सुनो—

जागबलिक जो कथा सुहाई। भरद्वाज मुनिवरहि सुनाई ॥
कहिहौं सोइ संबाद बखानी। सुनहु सकल सज्जन सुख मानी ॥
संभु कीन्ह यह चरित सुहावा। बहुरि कृपा करि उमहि सुनावा ॥
जो शिव कागभुसुडिहि दीन्हा। राम भगति अधिकारी चीन्हा ॥
तेहि सन जागवलिक पुनि पावा। तिन्ह पुनि भरद्वाज प्रति गावा ॥
ते श्रोता बकता समसीला। सवँदरसी जानहिं हरि लीला ॥
जानहिं तीनि काल निज ग्याना। करतल गत आमलक समाना ॥
औरउ जे हरि भगत सुजाना। कहहिं सुनहिं समुझहिं बिधि नाना ॥

मैं पुनि निज गुरु सन सुनी कथा सु सूकर खेत।
समुझी नहिं तसि बालपन तब अति रहेउँ अचेत ॥
श्रोता बकता ज्ञान निधि कथा राम कै गूढ़।
किमि समुझौं मैं जीव जड़ कलिमल ग्रसित बिमूढ़ ॥

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

तदपि कही गुरु बारहिं बारा। समुझि परी कछु मति अनुसारा।।
भाषाबद्ध करबि मैं सोई। मोरे मन प्रबोध जेहि होई।।
(सब लोग उस रस-माधुरी में लीन हो जाते हैं। रत्नावली के नेत्रों से निरन्तर अश्रुपात होता है।)

रामू—मैंने सुना है, प्रयाग में याज्ञवल्क्य ने श्रीवर जी को स्वयं यह कथा फिर सुनाई।

दीनबंधु—हम सब धन्य हो गये, रामू भैया!

रामू—हम सब ही नहीं, सारा लोक धन्य हो रहा है। मेरा एक निवेदन है।

दीनबंधु—कहो पुत्र!

रामू—आप सब लोग मेरे बाल-बच्चों की देख-रेख करते रहें। मैं अब अपना शेष जीवन श्रीवरजी की सेवा में अर्पित कर देने का संकल्प कर चुका हूं।

दीनबंधु की माता—तुम्हारे यहाँ रहने से हम लोगों को बड़ा भारी अवलम्ब था।

रामू—माता, श्रीवर जी का प्रताप सर्वत्र हम लोगों का रक्षक है। फिर तपोमूर्त्ति परम चितामणिस्वरूपा महामंगला बहिन रत्नावली आपके निकट है।
(रत्नावली सरस्वती के कान में कुछ कहती हैं!)

सरस्वती—रत्नावली दीदी ने व्रत लिया है कि जब तक श्रीवर जी रामकथा पूरी नहीं कर लेते, तब तक वे मौनव्रत धारण कर अखंड सीताराम नाम जप करेंगी और केवल एक बार थोड़ा सा दुग्ध ग्रहण करेंगी।

दीनबंधु—तेरा सारा जीवन कठोर से कठोर व्रत करते बीता है। अब क्या अपर्णा बनना चाहती है, बेटी?
(सबके नेत्रों से आँसू झरने लगते हैं। रत्नावली की माता उन्हें हृदय से लगा लेती हैं। पट-परिवर्त्तन होता है।)

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

द्वितीय दृश्य

[समय—संवत् १६३३ मार्गशीर्ष मास के शुक्ल पक्ष की रामविवाह की पंचमी। समय—सूर्योदय के पूर्व की प्रत्यूष वेला। आकाश में शुक्र नक्षत्र प्राची दिशा की चूडामणि के समान देदीप्यमान है। स्थान—वही वटाटवी जहाँ तुलसीदास रामायण का प्रणयन कर रहे हैं। सामगान की ऋचाओं जैसा संगीत गूंज रहा है। वटाटवी के बाहर बाबा बेनीमाधवदास रामू, सोमशेखर, वेंकट, रूपारुण स्वामी ध्यानलीन बैठे हैं। सब के मुख मंडल पर अभिनव ज्योति छिटकी हुई है और वे अखंड सीताराम नाम का जाप कर रहे हैं।)

बेनीमाधवदास—लगता है, आज मानस की कथा पूर्ण हो रही है।

रामू—आज विवाह-पंचमी है। दो वर्ष सात महीने छब्बीस दिन पूर्व इसकी रचना आरम्भ हुई थी।

बेनीमाधवदास—मुझे प्रतीत होता है, प्रतिदिन वे जितनी कथा लिखते थे, रात्रि में उसे गाकर हनुमान्‌जी को सुनाते थे।

रामू—इसका अर्थ यह हुआ कि श्रीहनुमान् जी यह कथा अथ से इति तक सुनते रहे हैं।

रूपारुणस्वामी—मुझे तो ऐसा ही विश्वास है। सुनो, गुरुदेव की यह वाणी ध्यान से सुनो।

(सब लोग ध्यानस्थ हो जाते हैं। वाणी गूंज उठती है :—

रघुवंशभूषन चरित यह नर कहहिं सुनहिं जे गावहीं।
कलिमल मनोमल धोइ बिनु श्रम राम धाम सिधावहीं।
सतपंच चौपाई मनोहर जानि जो नर उर धरैं।
दारुन अविद्या पंच जनित विकार श्री रघुवर हरैं।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

सुंदर सुजान कृपानिधान अनाथ पर कर प्रीति जो।
सो एक राम अकामहित निर्वानप्रद सम आन को।
जाकी कृपा लवलेस ते मतिमंद तुलसीदासहू।
पायो परम विश्राम राम समान प्रभु नाहीं कहू।

सब लोग आत्मलीन होकर सुनते हैं। पादुकाओं पर चलने की आवाज सुनाई पड़ती है।)

बेनीमाधवदास—लगता है गुरुदेव का भाव-समाधि से व्युत्थान हुआ है। क्या वे बाहर आ रहे हैं?

रूपारुण—ऐसा ही है, गुरुदेव आ रहे हैं।

तुलसीदास—(वटाटवी से बाहर गुनगुनाते हुए आते हैं, उनका हाथ अभय मुद्रा में ऊपर उठा हुआ है। सब दौड़कर उनके सामने साष्टांग प्रणाम करते हैं।)

मो सम दीन न दीन हित तुम्ह समान रघुवीर।
अस बिचारि रघुबंस मनि हरहु विषम भव भीर।।
कामिहि नारि पियारि जिमि लोभिहि प्रिय जिमि दाम।
तिमि रघुनाथ निरन्तर प्रिय लागहु मोहि राम।।
यत्पूर्वं प्रभुणा कृतं सुकविना श्रीशंभुना दुर्गमं।
श्रीमद्रामपदाब्जभक्तिमनिशं प्राप्त्यै तु रामायणम्।
मत्वा तद्रघुनाथनामनिरतं स्वान्तस्तमःशान्तये
भाषाबद्धमिदं चकार तुलसीदासस्तथा मानसं।।

('गुरुदेव की जय, गुरुदेव की जय' के सम्मिलित उच्च स्वर के कारण वे आगे जो कुछ गान करते हैं, वह सुनाई नहीं पड़ता।)

तुलसीदास—वत्स, तुम सबका कल्याण हो। आज मानस की रचना विवाह पंचमी की इस पुण्य तिथि पर पूरी हुई। तुम सब लोग कितने दिनों से यहाँ रहकर मेरे योगक्षेम की व्यवस्था कर रहे हो! मैं कृतकृत्य हूँ।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

सब लोग—कृतकृत्य हैं हम लोग जो आपकी इस महान् सिद्धि के पश्चात् आपका दर्शन कर रहे हैं।

तुलसीदास—कितनी कितनी दूर से चल कर आप लोग आये हैं। वेंकट और सोमशेखर कर्णाटक से यहाँ पधारे हैं। रूपारुण स्वामी जनकभाव के प्रसिद्ध उपासक हैं। मैं स्वयं इन्हें बालकांड सुनाऊँगा।

रूपारुण स्वामी—धन्य हुआ गुरुदेव !

तुलसीदास—मैं आपका गुरु कैसे हो सकता हूं। आप तो स्वयं मिथिला-भाव के आचार्य हैं।

रूपारुण स्वामी—इतना गौरव न दें मुझे स्वामी !

तुलसीदास—आज विवाह-पंचमी है। आज आप लोग विवाह की कथा सुन लें। रूपारुण स्वामी ही उसे आपको सुनायेंगे। कल हम लोग काशी के लिए प्रस्थान करेंगे। वहाँ पहले मैं अपनी रामकथा शंकर जी को सुनाऊँगा।

बेनीमाधवदास—यह विचार सर्वथा समीचीन है।

तुलसीदास—रामू, तुम कब आये ? मैं तो पूछना ही भूल गया।

रामू—मैं सं० १६३१ की रामनवमी को यहाँ आ गया था। कैलाश नाथ, उज्जयिनीदास आदि सभी लोग आये थे। हम लोग पाठक बाबा और रत्नावली बहिन को आपका कुशल समाचार देने लौट गये थे। मैं उन्हें सब समाचार देकर लौट आया, लगभग दो वर्षों से यहीं हूं।

तुलसीदास—इतना कष्ट क्यों कर रहे हो, भैया ! परिवार भी तो है।

रामू—परिवार तो श्रीराम जी का है। मेरा सारा जीवन आपकी सेवा में अर्पित है। हाँ, रत्नावली बहिन को आपके अनुष्ठान के पूर्ण होने का समाचार देने मुझे जाना ही है।

तुलसीदास—ऐसी क्या बात है भैया

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

रामू—जिस दिन से उन्हें यह समाचार मिला है कि आप अखंड मौनव्रत धारण कर एक बार थोड़ा दूध ग्रहण करते हैं, तब से वे भी मौन हैं और केवल एक बार कठिनाई से थोड़ा दुग्ध ग्रहण करती हैं। कैलाश भैया कुछ दिन पूर्व यहाँ आये थे, और आपका कुशल-समाचार जान कर लौट गये हैं।

तुलसीदास—आह! रत्नावली तुमने मुझे ज्ञान ही नहीं दिया, तपस्या में भी मुझे पराजित कर दिया। मेरी मार्गदर्शिका! धन्य हो तुम देवी! ऐसा विलक्षण प्रेम! जाओ रामू! उनको समाचार दो।

रामू—मैं उन्हें समाचार देकर लौटकर काशी में आपके दर्शन करूँगा।

[पटाक्षेप]

तृतीय दृश्य

[स्थान—काशी में भदैनी का गंगातट। कई पंडित बैठे हैं। भंग छन रही है। सब लोग बड़े क्रुद्ध और आपे से बाहर प्रतीत होते हैं।]

एक पंडित—यह तुलसीदास भाषा में रामायण लिखकर हम पंडितों पर अपनी धाक जमाना चाहता है। जहाँ देखो, उसी की चर्चा है।

दूसरा पंडित—इसकी चली, तो हम संस्कृत के पंडितों को पूछेगा कौन?

तीसरा पंडित—भाई रविदत्त जी, आप तो नवद्वीप से आये हुए प्रसिद्ध नैयायिक हैं। सुना है, आपको भी वह तुलसीदास शास्त्रार्थ में पराजित कर चुका है।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

रविदत्त--पराजित क्या कर चुका है ? मैं उस दिन बिना भंग-भवानी की सेवा किये हुए उससे शास्त्रार्थ करने पहुंच गया था। इसी से बुद्धि लड़खड़ा गयी थी। मैं उससे इसका बदला लिये बिना नहीं रहूंगा।

चौथा पंडित--काशी के ये सर्वश्रेष्ठ तांत्रिक बटेश्वर मिश्र भी तो यहाँ बैठे हैं। इन्होंने भीं तुलसीदास पर अभिचार का प्रयोग कर कुछ अनुभव प्राप्त किया है।

बटेश्वर मिश्र—पंडित रविदत्त ! भूलकर भी तुलसीदास का अनिष्ट करने का प्रयत्न न करना। मैं फल भोग चुका हूं।

रविदत्त आप इतने बड़े तांत्रिक होकर बड़े कायर प्रतीत होते हैं। चलिए मेरे साथ, मैं आज ही उसको ऐसा पाठ पढाऊँगा कि वह काशी छोड़कर चला जाएगा। बमभोला ! (यह कह कर एक लोटा भंग गटक जाते हैं।)

बटेश्वर मिश्र—पंडित जी, सुनिए ! भैरव जी मुझसे कह चुके हैं, स्वयं हनुमान् जी निरन्तर तुलसीदास की रक्षा करते हैं। उसकी ओर कभी शत्रु-दृष्टि से न देखना। भैरव जी की आज्ञा का उल्लंघन तो मैं नहीं कर सकता।

रविदत्त—भैरव जी हनुमान् जी से डर गये। कैसे तांत्रिक हो तुम ? लो, एक लोटा विजया छानो, फिर देखो भैरव जी का करिश्मा। (एक लोटा विजया गटागट कर फिर पी जाता है।)

बटेश्वर मिश्र—भैरव जी के हनुमान् जी से डरने का कोई प्रसंग नहीं, मिश्रजी ! स्वयं हमारे स्वामी भगवान् शंकर तुलसीदास पर प्रसन्न हैं। मैं उनका अनिष्ट करने की इच्छा करने मात्र से दंडित हो चुका हूं।

रविदत्त—कोरा भ्रम है यह आपका ! एक लोटा विजया पीकर फिर देखिए भैरवजी की करामात !

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

बटेश्वर मिश्र—मिश्रजी ! बहुत अधिक विजया पी जाने के कारण आप बहुत उत्तेजित हो उठे हैं। मैं विजया सेवन छोड़ चुका हूं।

रविदत्त—आप डर गये उस पाखंडी तुलसीदास से ! विजया छोड़ दी, तो समझ लीजिए विजय ने आपका साथ छोड़ दिया। देखिए, मैं यह चौथा लोटा जमाता हूं। अब चतुर्वर्ग मेरे करतलगत हो गये हैं। पंडितो, पियो, पियो, तुम भी पियो। (कुछ पंडित पीते हैं और अट्टहास करते हुए रविदत्त की जय-जयकार करते हैं।)

पहला पंडित— ठीक कहते हैं आप पंडितजी ! जहाँ विजया, वहीं विजय।

रविदत्त—देखिए, मैं यह सोमरस का पाँचवा लोटा उदरस्थ करता हूं। (एक प्रचंड दंड उठाकर) और इस दंड से तुलसीदास का मुंड दधिभांड की तरह अभी आज ही फोड़ दूँगा।

बटेश्वर मिश्र—मैं आपका हितैषी हूं, रविदत्त जी ! ऐसा उग्र कर्म न करिएगा। परिणाम भयानक होगा।

एक पंडित—दुर्बुद्धि त्याग दीजिए, रविदत्त जी ! काशी के सर्वमान्य मनीषी मधुसूदन सरस्वती ने उनके मानस को यह कहकर मान्यता दी है:—

आनन्दकाननेह्यस्मिन् जङ्गमस्तुलसी तरुः।
कवितामंजरी यस्य रामभ्रमरभूषिता॥

रविदत्त—काशी के संस्कृत के पंडितों की बुद्धि मारी गई है। कायरो ! तुलसी तुम्हारी आजीविका का हरण कर लेगा। मैं अकेले उसका निर्मूलन करूँगा। (आँखें मूदकर)……… विजया जया संग में रंग भरे। ………देखो मेरा चमत्कार। (दंड उठाता है उसमें एक काला सर्प लिपटा हुआ फुंकार करता दिखाई पड़ता है। सब पंडित लोग डर जाते हैं।)

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

बटेश्वर मिश्र—यह चमत्कार दिखाने आज तुलसीदास के पास न जाएँ। ध्यान कर देखें, भगवान् शंकर की रौद्रमुद्रा !

रविदत्त—हः हः हः। कायर कहीं का ! तंत्र को लजाने चला है। मैं शक्ति का उपासक हूं, शक्ति का ! देख मेरा यह प्रचंड दंड (सर्प की तरह फुंकार करता है)

[पर्दा गिरता है]

चतुर्थ दृश्य

[वाराणसी में गंगातट के निकट टोडरमल का निवास-स्थान। उनकी बैठक में गोस्वामी तुलसीदास, टोडरमल, मेघा भगत, सोमशेखर, रूपारुण स्वामी, रामू, बेनीमाधवदास, स्वामी नन्दलाल, बनखंडी महाराज आदि बैठे हैं। सब लोग किसी बड़े गंभीर विषय पर वार्तालाप कर रहे हैं।]

टोडरमल—वह दुष्ट रविदत्त आज आपको मारने के लिए आया ? उसने आप पर प्रहार भी करना चाहा ?

तुलसीदास—(हंसकर) विद्या और तांत्रिक साधना के अभिमान ने उसमें अकारण मेरे प्रति द्वेष उत्पन्न कर दिया है। भगवान् उसको सुबुद्धि दें।

रामू—उसको सुबुद्धि आ ही नहीं सकती ! गुरुदेव गंगास्नान करने जा रहे थे, वह डंडा तानकर सामने आ गया। डंडे के लौहमंडित शीर्ष पर उसने साँप जैसा कुछ लपेट रखा था।

बेनीमाधवदास—फिर क्या हुआ ?

रामू—मैंने समझा उसने प्रहार कर दिया। मैं पीछे था, दौड़कर बीच में आने का प्रयत्न किया। पर एकाएक प्रहार करते करते उसका हाथ रुक गया, अन्यथा बड़ा अनर्थ हो गया होता।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

टोडरमल—उस दुष्ट को दंड दिया जाना चाहिए।

तुलसीदास—हनुमान्‌जी हम लोगों के रक्षक हैं। करोड़ों रविदत्त भी हमारा बाल बाँका नहीं कर सकते।

रामू—उस दुष्ट ने गुरुदेव पर अपना दंड तान दिया, फिर न जाने कैसे उसका हाथ रुक गया। अंत में वह महाराजश्री के चरण पकड़कर अनुनय-विनय करने लगा।

टोडरमल—क्या कहा उसने?

तुलसीदास—(हँसते हुए) वह कह रहा था, आप काशी से चले जाएँ।

टोडरमल—आपने क्या उत्तर दिया?

तुलसीदास—मैंने कहा, मैं तो काशीश्वर भगवान् विश्वनाथ के आदेश से यहाँ आया हूं। उन्हीं के चरणों की छाया में यहाँ निवास करता हूं। जब वे चाहेंगे, यहाँ से चला जाऊँगा।

मेघा भगत—अब आपका क्या आदेश है?

तुलसीदास—रविदत्त जैसे लोगों को भुला दीजिए। अपने कर्त्तव्य-कर्म के संपादन में लग जाइए। भगवान् के भक्त का परम धर्म है सेवा। आपके द्वारा आयोजित रामलीला को अब देशव्यापी और समाजव्यापी सेवा का रूप दिया जाना चाहिए। सेवा सभी की करनी है। आशा किसी से कुछ नहीं रखनी है। सेवा के सर्वोच्च आदर्श हैं हनुमानजी।

मेघा भगत—अब रामलीला का आयोजन वाराणसी में मानस के आधार पर हुआ करेगा।

टोडरमल—देश भर में ऐसे आयोजन होंगे—चैत्र और आश्विन में।

रूपारुण स्वामी—मार्गशीर्ष की शुक्ला पंचमी को राम विवाह की लीला होनी चाहिए। समाज के जीवन से आनंद तिरोहित हो गया है। प्राण-प्राण में उसका संचार विवाह-लीला के माध्यम से किया जा सकता है।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

तुलसीदास—अत्यन्त साधु योजना है यह ! इसके अतिरिक्त गाँव-गाँव में हनुमानजी के चरित्र का आदर्श जागृत कीजिए। भगवान् राम की शक्ति और शील के आदर्शों का प्रचार रामकथा के माध्यम से होना चाहिए।

नंदलाल—जो आज्ञा, गुरुदेव ! ऐसे कई व्यास आपकी कथा सुनकर सेवा के लिए तत्पर हो गये हैं।

तुलसीदास—प्रशंसनीय है आपका उद्योग, वत्स ! किन्तु यह ध्यान रहे, व्यास लोग कोरे कथावाचक न हों। वे समाज के सेवक भी हों। जहाँ दुःख हो, दैन्य हो, रोग हो, वहाँ जाकर वे सब प्रकार की सेवा करें।

नंदलाल—आप अपने आदेश को और अधिक स्पष्ट करें, गुरुदेव !

तुलसीदास—यह संसार भगवान् का विग्रह है—'विश्वरूप रघुवंश मणि' की व्याख्या मैं आप लोगों के समक्ष कर चुका हूँ। हमारी सेवा का लक्ष्य हो समाज का प्रत्येक दीन-हीन व्यक्ति। दीनबंधु भगवान् राम की कृपा प्राप्त करने का यही मार्ग है। सोमशेखर वत्स ! तुम तो बसवेश्वर देव के कायिक दर्शन से परिचित हो।

सोमशेखर—गुरुदेव ! आप उसी को व्यावहारिक रूप प्रदान कर रहे हैं।

तुलसीदास—नंदलाल ! मानस के किसी व्यास को अपने प्रवचन के पारिश्रमिक के रूप में अर्थ ग्रहण नहीं करना चाहिए। शुल्क लेकर रामकथा का वाचन प्रभावहीन हो जाएगा। उससे समाज का अनिष्ट होगा।

नंदलाल—ऐसा ही होगा, गुरुदेव !

रूपारुण स्वामी—इस नियम का कठोरता से पालन किया जाएगा।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

तुलसीदास—आप लोग अपने शिष्यों को भी मानस की कथा कहने की दीक्षा दें और उनके लिए यह नियम बना दें कि वे अपना शेष समय ग्रामों में दीनों-दुखियों, दलितों और रोगियों की सेवा में लगावें। सेवा का मूल्य प्रभु देते हैं, ससार नहीं दे सकता।

नंदलाल—आपके आदेशों का पालन करने के लिए मानस के कथा-व्यास गाँव-गाँव फैल जाएंगे। परतंत्रता के अधंकार में सांस्कृतिक स्वतंत्रता का प्रकाश फैल कर रहेगा।

मेघा भगत—जहाँ जहाँ कथावाचक जाएँ, वहाँ रामलीला के अभिनय का भी विधान होना चाहिए। रामचरित मानस जितना गेय है, उतना ही अभिनेय भी।

रूपारुण स्वामी—यथार्थ है आपका कथन!

स्वामी नंदलाल—मेरे एक सम्बन्धी नैमिषारण्य क्षेत्र के निवासी हैं, नाम है नरोत्तमदास! वे उत्कृष्ट कोटि के भक्त और कवि हैं। वे केवल भक्तों के चरित्र का ही गायन करते हैं। हमें ऐसी प्रतिभाओं का सहयोग अपेक्षित है।

वनखंडी स्वामी—(तुलसीदास से) महाराजश्री! आपसे मेरा अनुरोध है, आप नैमिषारण्य पधारें, और वहाँ के लुप्त तीर्थों का उद्धार करें।

तुलसीदास—यह तो हम सब लोगों का परम धर्म है।

वनखंडी स्वामी—महाराज! इस यात्रा की योजना बना डालें।

तुलसीदास—हम लोग रामनवमी के अवसर पर अयोध्या रहेंगे। वहाँ से मैं श्री सरयू की परिक्रमा के लिए निकलूँगा। मार्गशीर्ष की अमावस्या को हम लोग नैमिषारण्य में मिल सकतेहैं।

वनखंडी महाराज—ठीक है, महाराज!

नंदलाल स्वामी—हो सकता है, अमावस्या को नरोत्तमदास भी नैमिषारण्य को तीर्थयात्रा के लिए जाते हों।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

तुलसीदास—ऐसा हुआ तो हमारा परम सौभाग्य होगा।

(सब लोग समवेत स्वर मे गान करते हैं :—

जय राम सदा सुखधाम हरे।
रघुनायक सायक चाप धरे ।।)

[पट परिवर्तन होता है]

पंचम दृश्य

[स्थान—सरायन नदी के तट पर बसा हुआ बाड़ी नाम का ग्राम। ग्राम के पूर्व में श्वेत और रक्त कुमुदों तथा कमलों से भरा हुआ एक सरोवर है। सरोवर के चारों ओर पक्के घाट हैं, पश्चिम की ओर के घाट पर शिवजी का एक छोटा सा सुन्दर मंदिर है। उसके कुछ ऊपर एक छोटा सा घर है। घर के द्वार पर एक छोटी सी कपिला गाय बँधी है और एक श्वेत वर्ण का पुष्ट वत्स दौड़ दौड़ कर उसके साथ क्रीड़ा कर रहा है। घर का आँगन गोबर से लिपा-पुता अत्यंत स्वच्छ है। एक कोने में तुलसी चत्वर है, तुलसी वृक्ष की छाया में एक छोटे से चन्दन के पीठ पर शालिग्राम का सिंहासन स्थित है, जिसके सामने नरोत्तमदास जी ध्यानस्थ बैठे हुए भगवन्नाम का जप कर रहे हैं। उनसे कुछ दूर हटकर निकट ही उनकी पत्नी बैठी हैं। वे बड़ी उदास हैं। उनका मुखमण्डल किसी असह्य मानसिक वेदना के कारण अत्यंत करुण प्रतीत होता है, उनकी बड़ी बड़ी आँखों में आँसू छलक छलक आते हैं जिनको वे अपने आँचल के छोर से पोंछती जाती हैं। वे अपने पति का जप सम्पन्न होने की प्रतीक्षा कर रही हैं। समय—दिन के द्वितीय प्रहर का आरम्भ।]

नरोत्तम दास—(जप पूरा कर) सीताराम ! सीताराम ! राधेश्याम ! राधेश्याम ! (भगवान के सामने साष्टांग प्रणाम करते हुए)

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

नमः पुरस्तादथ पृष्ठतस्ते नमोऽस्तुते सर्वत एव सर्व ।
अनंत वीर्यामितविक्रमस्त्वं सर्वं समाप्नोषि ततोऽसि सर्व ।
ॐ ईशावास्यमिदं सर्वं यत्किंच जगत्यां जगत् ।
तेन त्यक्तेन भुंजीथा मा गृधः कस्य स्विद्धनम् ।

(उठकर पत्नीकी ओर देखकर) देवी ! आज तुम विशेष चिंतित दिखाई पड़ती हो, मुख बहुत मुरझाया हुआ है ?

देवी—स्वामी ! आपने कल निरंबु एकादशी व्रत किया है, और आज……………(कंठावरोध हो जाता है, आँसू गिरने लगते हैं) ।

नरोत्तम—देवी समझ गया, समझ गया ! कल मैंने निरंबु एकादशी व्रत किया, आज तुम पारण की कोई व्यवस्था नहीं कर सकी हो, इसलिए दुःखी और उदास हो । पर इतनी छोटी बात के लिए इतना अधीर होना तुम्हें शोभा नहीं देता, प्रिये !

देवी—धैर्य की भी तो कोई सीमा होती है, स्वामी ! परसों दिन में आपने केवल एक बार सवाँ के चावलों का अपर्याप्त भोजन पाया था, और कल एकादशी का निर्जल व्रत किया । आज भगवान् के भोग के लिए मैं आपको गुड़ का एक टुकड़ा भी नहीं दे पाई । आपने तुलसीदल का नैवेद्य अर्पित किया, उसी से अब आप पारण भी कर लेंगे । हाय ! पहाड़ से ये दिन और रात कैसे कटेंगे ? घर में आज अन्न का एक भी दाना नहीं !

नरोत्तम—शान्तं पापं, शान्तं पापं ! तुमको आज भगवान् के प्रसाद पर अश्रद्धा कैसे हुई ? नैवेद्य के तुलसी दल से श्रेष्ठ सौरस्य हम ब्राह्मणों के लिए और क्या हो सकता है । जिसे ग्रहण कर भगवान् तृप्त हो गये, उसी से हम अतृप्त रह जाएँगे ? तुम्हारी यह कैसी कुकल्पना है ?

देवी—स्वामी ! मुझे तुलसीदल के प्रसाद पर अश्रद्धा कदापि नहीं, किन्तु भगवान तो नित्यतृप्त है, हम उनकी समता कैसे

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

कर सकते हैं ? दैनिक भोजन के अभाव में आपका शरीर दिन दिन क्षीण होता जा रहा है। देखकर भी मैं इसे अनदेखा कैसे कर सकती हूँ ?

नरोत्तम—(हँसकर) प्रिये ! कितनी बार मैंने तुमको यह समझाने का प्रयत्न किया कि ब्राह्मण का शरीर अन्न के अधीन नहीं रहता। वह तो भगवान् के भजन से ही तुष्ट-पुष्ट होता है। उसके लिए संसार के सब भोग वृथा होते हैं।

देवी—मैं ही भोगों को अवृथा कब कहती हूं, मैं यह कहाँ चाहती हूं कि आप भोगों की मृगतृष्णा में पड़कर कोई अब्राह्मणोचित कर्म करें। जिसको इस देश के सब ऋषियों ने धर्म का मूल साधन माना है, मैं तो आपके इसी निरन्तर कृश होते हुए शरीर के विषय में चिंतित हूं।

नरोत्तम—(हँसकर) इस देश के तपस्वी ब्राह्मणों के शरीर को दीमक खा जाया करती थी, गायें चाट जाती थीं, पर उन्हें इस पीड़ा का अनुभव भी नहीं होता था। तुम मेरे विषय में निरंकुश व्रत मात्र से विचलित हो उठीं। हृदय की यह स्नेहजन्य दुर्बलता तुम्हारे लिए शोभन नहीं।

देवी—वह युग अब नहीं रहा, स्वामी ! आप यदि थोड़ा सा गो-दुग्ध ही लेते होते, तो मुझे कुछ संतोष रहता। पर आप तो उसे भी अग्राह्य मानते हैं।

नरोत्तम—गो-दुग्ध कैसे लूं देवी ? उस पर तो एकमात्र बछड़े का अधिकार है। बछड़े की आवश्यकता से अधिक दुग्ध होता ही कहाँ है ?

देवी—हो कहाँ से, हम बेचारी गाय को भी भर पेट चारा नहीं दे पाते। खेतों में अन्न तो उपजता ही नहीं, चरागाहों में इतनी घास भी नहीं होती कि पशुओं का पेट भर सके।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

नरोत्तम—देवी ! जब राजा अधर्मी हो जाता है, शासन-व्यवस्था में धर्म और नैतिकता के लिए कोई स्थान नहीं रह जाता, लोग ऋत और सत्य की व्यवस्था का खुलकर उल्लंघन करने लगते हैं, तब उसका यही स्वाभाविक परिणाम होता है।

देवी—यही बात है, स्वामी ! उस दिन श्रीमद्भागवत का पाठ करते हुए आप ऐसा ही कुछ कह रहे थे।

नरोत्तम—तुम्हें ठीक स्मरण है। धरती ने महाराज पृथु से कहा था कि जब मैं यह देखती हूं कि पूर्वकाल में ब्रह्मा ने जिन धान्यादि को उत्पन्न किया था, उन्हें यम नियमादि व्रतों का पालन न करने वाले दुराचारी लोग खाये जा रहे हैं, और शासकों ने मेरा ठीक ठीक पालन करना और आदर करना छोड़ दिया है और वे लोग चोरों के समान हो गये हैं तो मैं सब धान्यों, वनस्पतियों और औषधियों को अपने भीतर छिपा लेती हूं।

देवी—यही हुआ है, बढ़ते हुए पापों के कारण धरती बांझ हो गई है, जनता भूख की आग में भुनी जा रही है।

नरोत्तम—देवी, चाचा जी के लड़के तुम्हारे देवर कथावाचकजी अभी कल ही काशी, अयोध्या आदि तीर्थों की यात्रा करके लौटे हैं, रात्रि में भेंट हुई थी। आज यहां भी आते ही होंगे। उन्होंने दक्षिण देश की जनता की दारुण दशा का ऐसा वर्णन किया कि जिसे सुनकर हृदय कांप उठा। अनेक अभागे प्रदेशों में लोग वृक्षों की पत्तियां, छाल और जड़ें खा-खाकर रह रहे हैं और कीड़ों की तरह रेंग रेंग कर मर रहे हैं। लोग पेट भरने के लिए अपने पुत्र-पुत्रियों तक को बेचने को बाध्य हो रहे हैं।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

देवी—(अधीर, विकल होकर) हाय, स्वामी! इस देश के शासकों को क्या हो गया है? आप तो कहते थे कि यहाँ के शासक प्रजा को औरस पुत्रों के समान पालन करते थे। प्रजा की जीविका की समुचित व्यवस्था करने के कारण वे उसके वृत्तिदाता पिता कहे जाते थे। हाय! आज यह करुण पुकार उनके कानों तक नहीं पहुंचती?

नरोत्तम—प्रिये, यह कलियुग है। विधर्मियों और विदेशियों का शासन है। दिल्ली के सिंहासन पर यवन सम्राट बैठा हुआ है। उसे भोग-विलास और लूट-पाट के कामों से अवकाश नहीं। जनता की यह दुर्दशा वर्तमान राजनीति का सहज परिणाम ही तो है। (रामलीला-पाठक कथावाचक का प्रवेश। लम्बा सुडौल पुष्ट सुन्दर शरीर। सिर पर संवरे हुए काकपक्ष और बीच लम्बी शिखा है, मस्तक पर चन्दन की खौर। वे रेशमी अधोवस्त्र और उत्तरीय धारण किये हुए हैं, पीत वर्ण का यज्ञोपवीत पहने हैं।)

कथावाचक—प्रणाम दादा! प्रणाम भाभी।

देवी—आयुष्मान् हो देवर! इस बार यात्रा में बहुत दिन लगाये! कहाँ कहाँ रहे? अभी आपकी ही चर्चा हो रही थी।

कथावाचक—इस बार अधिकतर काशी और अयोध्या क्षेत्र में रहा, वैसे चला तो बैद्यनाथ धाम तक गया था।

नरोत्तम—अनेक प्रदेशों की जनता को तो तुमने निकट से देखा, भगवान के दिव्य विग्रहों और तीर्थों के दर्शन किये, बड़े भाग्यशाली हो तुम भैया!

कथावाचक—मैं तो बार बार यही अनुरोध करता आया हूं कि आप भी कभी कभी बाहर निकल पड़ा करें। आप जैसे महान रससिद्ध कवि को तो देशाटन में प्रचुर यश और धन भी प्राप्त होगा। आपका यह अर्थकष्ट, जिसके कारण

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

आपका शरीर दिन दिन क्षीण हो रहा है, मिट जाएगा। बड़े बड़े राजा और ऐश्वर्यवान् आपके चरण चूमेंगे।

नरोत्तम—भैया! कवित्व-शक्ति तो भगवान् का सबसे बड़ा वरदान है। क्या इसे मैं छुद्र लोकेषणा और वितेषणा की पूर्ति का साधन बनाऊँ? हमारे देश के कवियों की वाणी में काव्य और सत्य एकत्र रहते आये हैं। यश और धन की कामना करनेवाले कवियों की वाणी में सत्य का प्रस्फुटित होना असम्भव है, और सत्य के लिए कष्ट सहन किये बिना हृदय में महान् वाणी का प्रस्फुटन असम्भव है।

कथावाचक—दादा! मैंने तो बड़े बड़े कवियों को राजदरबारों में असाधारण ऐश्वर्य का जीवन बिताते देखा है।

नरोत्तम—भैया! उन कवियों की वाणी में सच्चाई नहीं हो सकती। वे अपने देश की परम्परा के प्रति सच्चे नहीं हो सकते।

कथावाचक—मैं आपकी इस बात का अर्थ नहीं समझ सका, दादा!

नरोत्तम—भैया, कल तुम मुझे देश की जनता की दरिदता की बात बता रहे थे। क्या राज दरबारों में रहने वाले आज के किसी कवि की वाणी इस दुर्दैव से विदलित राष्ट्र की भूख के कष्ट से विगलित होकर बही है? क्या ऐसा कोई कवि तुमको किसी राजदरबार में मिला?

कथावाचक—नहीं दादा! ऐसा कवि तो मुझे दरबारों में नहीं दिखाई पड़ा। हाँ, काशी और अयोध्या में मुझे ऐसे एक महापुरुष के दर्शन अवश्य हुए जिनकी वाणी में देश की जनता का हाहाकार, उसके दुःख का दावानल प्रज्वलित हो रहा है।

नरोत्तम—भैया, वे कौन हैं?

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

कथावाचक—उनका नाम है महात्मा तुलसीदास ! वे महान् राम भक्त एवं अद्वितीय वक्ता और महाकवि हैं। वाराणसी और अयोध्या दोनों ही स्थानों पर मुझे उनकी कथा और प्रवचन सुनने का अवसर मिला है। उनकी वाणी एक ओर भगवान् की भक्ति से हृदय को द्रवीभूत कर देती है तो दूसरी ओर हृदय में जनता के दुःख की अनुभूति का तूफान पैदा कर देती है। उनका व्यक्तित्व और कवित्व दोनों ही अविस्मरणीय हैं।

नरोत्तम—जनता के दुःख की अनुभूति उत्पन्न करने वाली उनकी कोई रचना तुमको स्मरण है ?

कथावाचक—हाँ है, सुनिये—

किसबी किसान कुल, बनिक भिखारी भाँट,
चाकर चपल नट चोर, चार चेटकी।
पेट को पढ़त, गुन गढ़त, चढत गिरि,
अटत गहन-वन, अहन अखेटकी।
'ऊँचे नीचे करम-धरम-अधरम करि
पेट ही को पचत बेचत बेटा-बेटकी।
'तुलसी' बुझाइ एक राम-घनश्याम ही ते
आगि बड़वागि तें बडी है आगि पेट की' ॥१॥

खेती न किसान को, भिखारी को न भीख बलि
बनिक को बनिज न चाकर को चाकरी।
जीविका विहीन लोग सीद्यमान सोच बस
कहैं एक एकन सों कहाँ जाई का करी ?
वेदहू पुरान कही लोकहु विलोकियत
साँकरे सबै पै राम रावरे कृपा करी।
दारिद-दसानन दबाई दुनी, दीनबन्धु
दुरित-दहन देखि तुलसी हहा करी ॥२॥

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

नरोत्तम—(आँखों में आँसू आ जाते हैं) देश की वर्त्तमान अवस्था का कैसा यथार्थ चित्र है। भूख की पीड़ा की कैसी निशित एवं निबिड़ अनुभूति शब्द शब्द में उद्वेलित हो रही है। निश्चित ही इन महाकवि का हृदय जनता के हृदय के साथ एकरूप हो गया है।

कथावाचक—उन्होंने 'रामचरितमानस' नाम का एक महाकाव्य भी लिखा है। मैंने उन्हीं के मुख से उसकी कथा सुनी। दादा, उसे काव्य कहूं या पीयूष की भोगावती गंगा जो धरती के अतल गर्भ से आविर्भूत हुई है।

नरोत्तम—भैया! जिनकी वाणी में लौकिक और अलौकिक का ऐसा अपूर्व सामंजस्य घटित हुआ है, वे महाकवि वस्तुतः दर्शनीय हैं। उनके जन्म से यह हमारी धरती धन्य हो गई है।

कथावाचक—इसमें कोई संदेह नहीं, वे महापुरुष ऐसे ही हैं। दुःख-दग्ध प्रपीड़ित लोक के लिए उनके हृदय में जितना दर्द और करुणा है, भगवान् के लिए उतना ही उत्कट प्रेम और भक्ति भी।

नरोत्तम—उन महापुरुष के दर्शन कहाँ हो सकते हैं?

कथावाचक—रामनवमी को वे अयोध्या में ही थे। वहाँ से वे सरयू तट पर कुछ दिनों तक भ्रमण करते हुए मार्गशीर्ष की अमावस्या के पूर्व ही नैमिषारण्य पहुंचने वाले थे।

नरोत्तम—आज मार्गशीर्ष की द्वादशी तो हो ही गई। मैं भी आज ही नैमिषारण्य के लिए प्रस्थान करूँगा। यदि उनके दर्शन वहाँ हो गये, तो जीवन धन्य हो जाएगा। (पत्नी से) मेरे झोले में भगवान् शालग्राम का सिंहासन और लोटा डोर आदि रख दो। शुभ मुहूर्त्त है, मैं आज ही नैमिष जाऊँगा।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

देवी—स्वामी ! कल प्रातःकाल जाइए। आज घर में सावाँ और कोदो का भी एक दाना नहीं। पड़ोसियों से माँगकर पाथेय की कुछ व्यवस्था तो कर दूँ।

नरोत्तम—देवी ! ब्राह्मण का पाथेय केवल भिक्षा है। तुम मेरी चिंता न करो।

देवी—तो फिर करूँ क्या ?

नरोत्तम—देश के उन करोड़ों भूखों की बात सोचो जिनके बारे में ये तुम्हारे देवर अभी अभी कह रहे थे। समाज को भुलाकर अपने पेट की चिंता करना हम ब्राह्मणों का धर्म नहीं है, हमारी चिंता तो स्वयं भगवान् करते हैं। इसलिए शास्त्र में हमारी जीविका का सब से शुद्ध साधन शीलोंछ-वृत्ति बताई गई है।

(देवी और कथावाचक शिर नीचा किये हुए चुप रह जाते हैं।)

[पटाक्षेप]

षष्ठ दृश्य

[समय—प्रातःकाल। स्थान—नैमिषारण्य क्षेत्र के अंतर्गत अयोध्या नाम का स्थान, गोमती का तट। तट से कुछ ऊपर रामजानकी का एक पुराना मंदिर है, उसी के निकट एक बहुत पुराना संकीर्ण मुंह वाला गहरा कुंआ है। आसपास घना जंगल है। यह स्थान साधारणतया जनशून्य रहता है, किन्तु आज अमावस्या का मेला होने के कारण वहाँ भी बहुसंख्यक दर्शनार्थियों का आगमन-निर्गमन हो रहा है। मंदिर के बाहर के चबूतरे पर बैठे हुए एक वृद्ध पुजारी पूजा के पश्चात् चरणामृत एवं प्रसाद-वितरण कर रहे हैं, और आसपास बैठे हुए लोगों से बातचीत भी करते जाते हैं।]

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

एक तीर्थयात्री—पुजारीजी, आपके स्थान पर इतनी दिव्य राम-कथा हुई, और मैं चक्रतीर्थ पर पड़ा हुआ रात भर खर्राटे लेता रहा। इससे बड़ा मेरा दुर्भाग्य और कौन हो सकता है ?

पुजारी—बात तो ठीक ही है, भैया ! कथा क्या थी, सुधा वसुधा पर सुलभ हो गयी थी। मेरी जानकारी में तो ऐसा कोई महात्मा नैमिषारण्य अभी तक आया नहीं।

दूसरा तीर्थयात्री—पुजारी भैया ! कहाँ के हैं वे महात्मा ?

पुजारी—महात्मा किसी एक स्थान के तो होते नहीं, उनकी दृष्टि में तो सब धरती ही गोपाल की है। 'शय्या शैलशिला गृहं गिरि गुहा वस्त्रं तरूणां त्वचः' भला ऐसे विरक्तों से कोई कैसे पूछे कि आप कहाँ के हैं ?

तीसरा तीर्थयात्री—पुजारी जी की बात ठीक है। संतों के मन में न कोई भटक होती है और न कोई अटक। उनके चरण जहाँ पड़ते हैं, वहीं यह धरती तीर्थ हो जाती है।

पुजारी जी—ठीक कहते हो, इन महात्मा ने नैमिष को फिर से महातीर्थ बना दिया है।

चौथा तीर्थयात्री—क्या नाम है उन महात्मा का ?

पाँचवाँ तीर्थयात्री—उनका नाम महात्मा तुलसीदास है। मैं भी पुजारी जी की कृपा से उनकी कथा सुनकर धन्य हो गया हूं। मेरे कानों में तो उनकी वाणी अब भी गूँज रही है।

(एक ओर से नरोत्तमदास का प्रवेश। वे पहले मंदिर में स्थित भगवान की मूर्ति के सामने जाकर साष्टांग प्रणाम करते हैं, फिर पुजारी जी के चरण छूते हैं।)

पुजारी—भगवान् कल्याण करें। आप यहाँ कब आये, नरोत्तमदास जी ? कल रात बराबर आपकी याद आती रही।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

नरोत्तमदास—घर से चलने में देर हो गयी थी, इसलिए रात्रि में यहाँ से कुछ दूर एक गाँव में रह जाना पड़ा। वहाँ से चलकर गोमती-स्नान कर सीधे यहीं आ रहा हूं। क्या कल रात्रि में यहाँ कोई उत्सव था? ये सब यात्री बैठे हुए किसकी चर्चा कर रहे हैं?

पुजारी—भैया, नैमिषारण्य के इतिहास में कल एक अभूतपूर्व घटना घटी है। आज कल एक महात्मा यहाँ पधारे हैं, जिनकी वाणी में साक्षात् सरस्वती का निवास है। किसी की वाणी में ओज, तेज और मधुरिमा का ऐसा प्रकर्ष तो मैंने कभी देखा या सुना नहीं। प्रतीत होता है, नैमिषारण्य का कोई महर्षि ही अपना अज्ञातवास छोड़कर कलि के कुटिल जीवों के उद्धार के लिए प्रकट हुआ है।

नरोत्तमदास— कौन हैं वे, पुजारी जी? क्या महात्मा तुलसीदास तो नहीं?

पुजारी जी—(आश्चर्य से) हाँ भैया, महात्मा तुलसीदास ही तो हैं वे! आपने कैसे जाना?

नरोत्तम दास—उन्हीं के दर्शन के लिए तो मैं यहाँ आया हूं। मेरे भाई कथावाचक जी को तो आप जानते हैं? उन्होंने ही मुझे महात्मा तुलसीदासजी की नैमिषारण्य-यात्रा के विषय में बताया था।

पुजारी जी—कथावाचक जी महात्मा तुलसीदास जी से पहले से ही परिचित हैं, तब तो इस अवसर पर उन्हें नैमिषारण्य में अवश्य आना चाहिए था! वे रुक कैसे गये?

नरोत्तम दास—वे आज अवश्य आवेंगे, प्रातःकाल ही घर से चल दिए होंगे।

पुजारी—बड़ा दुर्लभ सत्संग होगा, महात्मा तुलसीदास आपसे मिलकर बड़े प्रसन्न होंगे।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

नरोत्तमदास—मुझमें ऐसा क्या है पुजारी जी ! मैं अवश्य उन महापुरुष के दर्शन पाकर कृतार्थ हो जाऊँगा।

पुजारीजी—आप किस महात्मा से कम हैं, नरोत्तमदासजी। ब्राह्मणत्व की तो आप साकार मूर्ति हैं, और ऊपर से लोक-दुर्लभ कवित्व भी आपको प्राप्त है।

नरोत्तम दास—(हँसकर) स्नेह अंधा होता है, भाई ! तभी आप मुझ जैसे तुक जोड़नेवाले के कवित्व को लोक-दुर्लभ कहते हैं।

पुजारी जी—कस्तूरी मृग दिशा-विदिशाओं को प्रमत्त करने वाली सुरभि के अपने ही अधिष्ठान को नहीं पहचानता, उसके गुण-ग्राहक तो दूसरे ही होते हैं !

नरोत्तमदास—कविता तो यह है पुजारीजी।

पुजारी—पिछली बार जब आप यहाँ आये थे, तो मैंने आपका ध्रुव चरित्र आपके ही मुख से कई बार सुना था। कैसा तन्मयकारी लोकोत्तर संगीत है उसमें। आप उपेक्षा से उसकी मूल पाण्डुलिपि की सब पुष्पिकायें भी यहीं छोड़ गये थे, मैं तो पूजा के उपरान्त प्रतिदिन भगवान् के सामने उसका पाठ करता हूं।

नरोत्तम दास—आप मेरा ध्रुव-चरित्र भगवान् को सुनाते हैं, तब तो मेरा कवि-कर्म सफल हो गया बंधु ! मैं उसे कविता नहीं मानता। आज के कवि प्राकृत राजाओं का गुणगान कर धन संपत्ति प्राप्त करते हैं, मुझमें वैसी प्रतिभा या प्रवृत्ति नहीं। मैं तो भगवान् के भक्तों के गुण गा-गाकर भगवान् की कृपा की एक कोर पा लेना चाहता हूं। इसलिए मैं अपने लिखे हुए का कभी संग्रह नहीं करता। लिखकर अपनी रचना भगवान् को एक बार सुना देता हूं, मेरी दृष्टि में यही उसकी सार्थकता है।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

पुजारी—नरोत्तमजी, आपकी कविता निश्चय ही भगवान् का अनुग्रह प्राप्त करने का अमोघ साधन है। क्या इधर आपने कोई नई रचना की ?

नरोत्तम—हाँ, पिछली कृष्ण जन्माष्टमी के अवसर पर सुदामा-चरित्र लिखा है। स्वर्गीय पिताजी ने द्वारका एवं सुदामापुरी आदि की यात्रा की थी, उनसे जो कुछ अनेक बार सुना था, उसी के संस्कार इस रचना के रूप में प्रकट हुए हैं।

पुजारी—चुन चुन कर परम भक्तों के चरित्र ही आप लिखते हैं, वंदनीय बन जायेगी आपकी यह भगवद्भक्ति के रस में सिक्त वाणी। महात्मा तुलसीदासजी भी आपकी रचनाएँ सुनकर प्रसन्न होंगे।

नरोत्तम—महात्मा तुलसीदास जैसे महाकवि के लिए मेरी वाणी में क्या आकर्षण हो सकता है ? पर्वत क्षुद्र तृणों को भी अपने मस्तक पर धारण करते हैं, अगाध सिंधु फेन तक को अपनी मुकुट-मणि बना लेता है, यह तो बड़ों का स्वभाव ही ही है। अपने असाधारण गौरव से ही सहज नमित होकर वे मुझे अपना सकते हैं।

पहला तीर्थयात्री—पुजारीजी ! यदि आपकी कृपा हो जाय, तो हम लोग भी नरोत्तमदास जी के सुदामा चरित्र का कुछ अंश सुनें।

पुजारी जी—हाँ हाँ, क्यों नहीं ? किन्तु महात्मा तुलसीदास जी भी अब आते ही होंगे, वे ब्राह्ममुहूर्त्त में ही तीर्थ स्थान एवं देव दर्शन के लिए गये थे। अब उनकी परिक्रमा भी पूरी हो गई होगी। उनके आने पर ही सत्संग और काव्य चर्चा हो, तो अधिक आनंद रहेगा।

नरोत्तम दास—यही ठीक है।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

(पुजारी जी सबको चरणामृत देकर पात्र यथास्थान रखने के लिए मंदिर के अन्दर जाते हैं, इसी समय एक ओर से सीताराम-सीताराम की मधुर ध्वनि उस परिवेश में व्याप्त हो जाती है और सबके ऊपर एक गीत के मन्द भाव-विभोर स्वर छा जाते हैं—'राम कहत चलु राम कहत चलु, राम कहत चलु भाई रे। नाहित भव—बेगारि महँ परि हौ छूटत अति कठिनाई रे।' पुजारी जी शीघ्रता से मंदिर के बाहर आ जाते हैं।)

पुजारी—यह महात्मा तुलसीदास जी का कंठस्वर है। वे भगवान् का स्मरण करते हुए यहीं आ रहे हैं।

(यह सुनकर सब लोग उठकर खड़े हो जाते हैं, एक ओर से गोस्वामी तुलसीदास जी आते हैं। उनका व्यक्तित्व बड़ा प्रभावशाली है, उन्नत ललाट, आयत प्रशान्त दृग, सौम्य नासा और आजानु भुजाएँ। वे रामानन्दी सम्प्रदाय के वैष्णवों जैसा वेश धारण किये हुए हैं, मुख से निरन्तर राम नाम का उच्चारण करते रहते हैं। उनके गले में तुलसी की माला है, और हाथ में सुमिरनी। सब लोग बढ़कर उनके चरण छूते हैं, नरोत्तम दास भूमिष्ठ हो साष्टांग प्रणाम करते हैं।)

गोस्वामी तुलसीदास—कल्याण हो, सबका कल्याण हो। 'मंगल भवन अमंगल हारी, द्रवहु सो दशरथ अजिर विहारी'।

(पुजारी जी मंदिर के भीतर से आसन लाते हैं। आसन बिछाकर गोस्वामी जी से आसीन होने की प्रार्थना करते हैं। गोस्वामी जी बैठते हैं अन्य लोग भी पुजारी जी के अनुरोध से बैठ जाते हैं।)

पुजारी—आज परिक्रमा करते हुए कदाचित् आप कुछ दूर निकल गये। बड़ी देर से ये सब लोग यहाँ आपके दर्शन की उत्कंठा लिये हुए बैठे हैं।

तुलसीदास—अवश्य, आज मुझे देव-दर्शन और परिक्रमा में कुछ अधिक विलम्ब हो गया। मैंने ब्राह्म मूहूर्त्त में गोमती-स्नान कर मनु-शतरूपा की तपोभूमि में ध्यान-पूजन किया, फिर

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

गामती तट का अनुसरण करता हुआ हंसतीर्थ तक चला गया। इसी में विलम्ब हुआ। इस पुराणप्रथित महातीर्थ की महिमा अकथनीय है, पुजारी जी !

पुजारी जी—यथार्थ है भगवन् !

तुलसीदास—अनादि काल से ही यह महान् साधकों का सिद्धपीठ रहा है। इस पुण्य तीर्थ में ही महर्षियों के दीर्घकालीन ज्ञानसत्रों में अपने देश की निखिल मंगलविधायिनी संस्कृति की रूप-रचना हुई है। पर आज इस पुण्यभूमि की दुरवस्था देखकर मेरा हृदय विदीर्ण हो गया—

'सुर सदननि तीरथ पुरिन निपट कुचालि कुसाज।
मनहुं मवासे मारि कलि, राजत सहित समाज।'

(व्यथित होकर नेत्र मूंद लेते हैं, सब लोग विमुग्ध भाव से उनको देखते रह जाते हैं।)

नरोत्तम दास—(गोस्वामीजी को प्रकृतिस्थ देखकर) महाराज, इस दुरवस्था से मुक्ति पाने का उपाय क्या है ?

(प्रश्न सुनकर गोस्वामी जी ध्यान से नरोत्तम दास जी की ओर देखने लगते हैं।)

पुजारी—भगवन्, ये यहाँ से कुछ दूर पर स्थित बाड़ी नामक ग्राम के रहने वाले कविश्रेष्ठ नरोत्तम दास जी हैं, तपस्वी ब्राह्मण हैं। आपके दर्शन के लिए ही अपने ग्राम से आज प्रातःकाल यहाँ आये हैं।

तुलसीदास—बड़ी कृपा की आपने नरोत्तमदासजी ! मैं भी आपके दर्शन पाकर कृतकृत्य हो रहा हूं। आपके विषय में संडीला के नंदलाल जी ने मुझसे बहुत कुछ कहा था।

नरोत्तम दास—मेरे भाई कथावाचक जी ने अयोध्या में आपके दर्शन किये थे। उनको आपकी इस प्रदेश की यात्रा की पूरी योजना ज्ञात थी। उन्हीं से यह जानकर कि मार्गशीर्ष की

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

अमावस्या को आप नैमिषारण्य पधारेंगे, मैं यहाँ आ गया हूं। आपके दर्शन पाकर मेरा जीवन········(भावावेग से कंठ रुँध जाता है।)

तुलसीदास—ठीक है, बाड़ी ग्राम के कथावाचक जी से मेरा परिचय अयोध्या में हुआ है, बड़ा ही भक्ति-विभोर मधुर कंठ है उनका। मार्गशीर्ष की अमावस्या को तो वे भी नैमिषारण्य आने वाले थे। मुझे आज उनका स्मरण हो रहा था।

नरोत्तमदास—आते ही होंगे, देव ! मैं कल अपराह्न में ही चल पड़ा था। वे आज ब्राह्म-वेला के पूर्व ही प्रस्थान करने वाले थे। मध्याह्न के पूर्व उन्हें यहाँ पहुंच जाना था। कुछ विलम्ब हो गया प्रतीत होता है।

तुलसीदास—अहोभाग्य ! कथावाचक जी की कृपा से आपके दर्शन हुए। आप महाकवि हैं, यह जानकर विशेष प्रसन्नता हुई थी कि आप भक्तों के ही चरित्रों का गायन करते हैं। मैं भी आपकी कविताओं का अमृत-पान करने के लिए उत्कंठित हो रहा हूं।

नरोत्तम दास—आप मुझे लज्जित न करें, महाकवि ! क्या एक खद्योत भी सूर्य के समक्ष अपनी प्रभा के प्रदर्शन का दु:साहस कर सकता है ? मैं तो आपके दर्शन करने और आपकी वाणी की सुरसरिता में अवगाहन करने यहाँ आया हूं।

तुलसीदास—आपको कुछ भ्रम हो गया है नरोत्तम दास जी ! मैं ही महाकवि या कवि कहाँ हूं ? मैं तो केवल राम के नाम, रूप, गुण, लीला, धाम आदि की महिमा का क्षुद्र गायक हूं। अन्य महाकवि गीर्वाण-वाणी में इन्हीं विषयों का अनु-कीर्त्तन कर अमर हो गये हैं, मैं तो राम की महिमा जनता की सामान्य भाषा के माध्यम से गाता हूं। आप मुझे महाकवि मान बैठे हैं, मुझ मन्द में तो कवि-यश:प्रार्थी होने

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

का भी साहस नहीं। इतना मैं अवश्य मानता हूं कि जब कवि का मानस राम-भक्ति के जल से आप्लावित हो उठता है, तभी काव्यकला की मंदाकिनी धरती के चिर-तृषित प्राणों को शीतल करने के लिए आविर्भूत होती है। पर मैं तो राम-घनश्याम का चातक भर हूं, अभी तक तो मुझे भक्ति की स्वाती का एक बूंद भी नहीं मिला है।

नरोत्तम—देव ! आप राम के नाम, रूप, गुण आदि के गायन के अधिकारी हैं, मेरी उतनी पहुंच नहीं। मैं तो केवल भगवान् भक्तों के चरित्र का ही यथामति गान करता हूं।

पुजारी—भगवन् ! बड़ा सरस ध्रुवचरित्र लिखा है नरोत्तमजी ने। इसकी पाण्डुलिपि भी ये मेरे पास छोड़ गये थे। इधर इन्होंने "सुदामा चरित्र" भी लिखा है। वे अपनी रचनाओं का संग्रह या संरक्षण भी नहीं करते। भगवान् को सुनाकर ही उसी में इतिकर्त्तव्यता मान लेते हैं। आपके आने के पूर्व हम लोग उसी की चर्चा कर रहे थे।

तुलसीदास—अभिनंदनीय है आपका कवि-कर्म, नरोत्तमदासजी ! आपकी कवि-दृष्टि ने परम जीवन के चरम सत्य का साक्षात्कार किया है। मैंने देख लिया भगवान् के भक्तों का चरित्र गानेवालों की वाणी को स्वयं सरस्वती ही रसवती बनाती हैं। इसलिए आप अपनी रचना का संरक्षण करें चाहे न करें, वह युग-युग तक जन-जन का कण्ठहार बनकर अमर रहेगी।

पुजारी—इसमें कोई संदेह नहीं, देव ! यहाँ सभी लोग आपकी तथा नरोत्तमदास जी की कविता सुनने के लिए उत्सुक बैठे हैं।

तुलसीदास—तो फिर आज के अपराह्न के सत्संग मे हम लोग नरोत्तम दास जी का 'ध्रुवचरित्र' और 'सुदामा चरित्र' उन्हीं

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

के मुख से सुनेंगे। तब तक कदाचित् कथावाचक जी भी आ जाएँगे। उनकी वाणी का प्रसाद भी हम लोगों को सहज सुलभ हो जाएगा। इस समय तो नरोत्तमदास जी को कुछ विश्राम करने देना चाहिए, यात्रा की क्लान्ति उनके मुख पर प्रकट है।

पुजारी—जैसी आज्ञा। पर नरोत्तमदास की जिज्ञासा का समाधान नहीं हो सका है। उन्होंने आपसे पूछा था कि समाज, धर्म, तीर्थादि की आज जो दुरवस्था है, उसे दूर करने का उपाय क्या है?

तुलसीदास—प्रश्न जितना जटिल है, उतना ही महत्वपूर्ण भी। आप देख ही रहे हैं, यह काल बड़ा ही प्रतिकूल है। साधारणतया प्रजाजन राजा का ही अनुसरण करते हैं। देश में दुर्भाग्य से इस समय यवन सम्राट् है और अधिकांश सजातीय माण्डलिक शासक भी राजन्य संस्कृति से हीन हो गये हैं। वस्तुतः यह प्रतिकूल काल गोलन्दाज की तरह विधर्मी शासकों को कठिन तथा गुरु गोला बनाकर पृथ्वी की तोप में पाप का पलीता लगाकर धर्म और समाज को ध्वंस कर रहा है। ऐसी विपरीत परिस्थिति में उपाय दो ही हैं—राम की कृपा और उसी का सुदृढ़ अवलम्ब लेकर किया हुआ जनता का संगठित पुरुषार्थ।

नरोत्तमदास—जनता के संगठित पुरुषार्थ का क्या रूप हो सकता है?

तुलसीदास—जन-जन के संगठित पुरुषार्थ का प्रकाश अनेक रूपों में होगा। कुछ स्वातन्त्र्य प्रेमी क्षत्रिय राजा आज भी स्वधर्म और स्वराष्ट्र के सम्मान एवं स्वाभिमान की रक्षा के लिए बड़े से बड़ा बलिदान कर रहे हैं। अपने सतीत्व की रक्षा के लिए हमारी माताएँ और बहनें भी हँसते हँसते अग्नि

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

की ज्वालाओं का आलिंगन कर रही हैं। प्रायः नित्य ही उनके जौहर के रोमांचकारी संवाद सुनने में आते हैं। किन्तु इन असंगठित प्रयासों का अभीष्ट परिणाम नहीं हो रहा, अतएव जनजागरण के लिए अधिक व्यापक उद्योग करना आवश्यक है।

नरोत्तमदास—यह कैसे होगा? आज तो हमारी तलवार कुंठित और तूणीर रिक्त है, उनको शाणित और सम्पन्न बनाने का कौन सा साधन हमारे पास शेष है?

तुलसीदास—वह साधन है हमारी चिर-स्वतंत्र एवं अपराजेय वाणी। मैंने प्रायः सारा भारत घूम घूम कर देखा है। देश के कोने कोने में ऐसे संतों और भक्तों का आविर्भाव हुआ है, जो जनता के बीच घूम घूम कर अपनी वाणी द्वारा अविचल संस्कृतिनिष्ठा और धर्म-प्रेम का संदेश सुना रहे हैं। उनकी वाणी में उस परम सत्य की साधना फलवती हुई, जिसमें धर्म, दर्शन, संस्कृति और काव्य सब मिलकर एक रूप हो गये हैं। उनके कवि-कंठ से लोक का मंगल-निर्घोष ध्वनित हो रहा है। रामकृष्ण के दिव्य चरित्रों के रूप में भगवान की सगुण लीलाओं का गान सुनकर पराजय और पराधीनता के कारण मुरझाया और मरा हुआ जनता का मन फिर से प्रफुल्लित हो रहा है। इस समय संतों और भक्तों के इन प्रयासों को अधिकाधिक मूर्त्त रूप देने की आवश्यकता है।

नरोत्तमदास—अब स्थिति मुझे भी स्पष्ट हो रही है। संतों और भक्तों के प्रयासों को मूर्त्त रूप देने के लिए क्या उपाय किये जा सकते हैं?

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

तुलसीदास—एक अमोघ उपाय तो आप स्वयं कर रहे हैं—स्वधर्म के लिए बड़े से बड़ा कष्ट सहने वाले भक्तों का चरित्र लिखकर। इनका श्रवण या पारायण करने से जन-जन के भीतर धर्म और नीति के लिए प्राण तक देने का संकल्प जागृत होगा और इस समय इसी की आवश्यकता है। यदि ये चरित्र संवादप्रधान शैली में लिखे जाते तो अभिनय द्वारा उन्हें अधिक ग्राह्य और प्रभावशाली बनाया जा सकता।

नरोत्तम दास—भगवन्! मैंने अपने चरित्र संवादप्रधान शैली में ही लिखे हैं। वे अभिनेय भी सिद्ध हो सकते हैं, पर उसके लिए उपयुक्त अपना रंगमंच ही कहाँ है? देवालयों और राजप्रासादों से संलग्न अपने प्रेक्षागृहों को विदेशी बर्बरों ने नष्ट कर दिया है। अपने रंगमंच और अभिनय की परम्परा ही लुप्त हो गयी है।

तुलसीदास—यह परम्परा खंडित और विकलांग अवश्य हुई है, लुप्त नहीं। लोकधर्मी कही जाने वाली इसकी जो परम्परा जनता के बीच क्षीण रूप में वर्त्तमान हैं, उसी की धार्मिक शाखा का वासंतिक नव विकास हुआ है। ब्रज के विविध सम्प्रदायों के कृष्णभक्तों के सम्मिलित प्रयास से रासलीला का नव्योत्थान हुआ है। मैंने भी मेघाजी जैसे भक्तों का सहयोग पाकर काशी एवं अयोध्या में आश्विन एवं चैत्र मास में रामलीला के अभिनय की परिपाटी चलाई है। इन अभिनयों को देखकर जनता अत्यन्त उत्साहित होती है।

नरोत्तमदास—यह सब जानकर मैं भी अपने भीतर नई चेतना और प्रेरणा का अनुभव कर रहा हूं। निश्चय ही आप युग-पुरुष हैं।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

तुलसीदास—काशी और अयोध्या में होनेवाली लीलाओं में भगवान् के प्रायः पूरे जीवन का अभिनयात्मक प्रदर्शन होता है, इसलिए उसका कोई महिमामय पक्ष-विशेष सामने लाना संभव नहीं होता। इस अभाव को दूर करने के लिए मैंने इसी मार्गशीर्ष मास से ग्रामों में भी राम-विवाह के अभिनय की परम्परा चलाने का संकल्प किया है।

पुजारी—यह तो बड़ा मंगलमय अनुष्ठान है।

तुलसीदास—इससे दो लाभ होंगे। एक तो लोक-मानस को राम के आदर्श दाम्पत्य जीवन का स्वरूप समझने की प्रेरणा मिलेगी, जिससे आज की प्रतिकूल परिस्थिति में विश्रृंखल होता हुआ हमारा गार्हस्थ्य धर्म पुनः मर्यादित बनेगा। हमारी संस्कृति में गृहस्थाश्रम एक अत्यन्त कठोर और परम उत्तरदायित्वपूर्ण साधना है। आधुनिक काल में परकीय-सम्पर्क के प्रभाव से उसका मूल रूप विकृत और विस्मृत हो जाने की आशंका है। दूसरे, देश में अत्यन्त प्राचीन काल से प्रचलित मधुर भाव की जो उपासना-धारा विदेशी संपर्क और प्रभाव से विपथगामी हो गई है, उसको भी भगवान् राम और भगवती सीता के चरित्र के पुण्य प्रकाश में स्वकीय संयम-शुद्ध स्वरूप को पहचानने में सुविधा हो जाएगी।

नरोत्तमदास—धन्य हैं आप! बड़ा पवित्र और महिमामय अनुष्ठान है यह। इसके लिए आपने स्थान कौन सा चुना है?

तुलसीदास—आपके ही जनपद का जयरामपुर नामक ग्राम। नैमिषारण्य आते हुए मैंने एक रात्रि वहीं नदी तट पर बिताई। मुझे वह स्थान और उसका नाम दोनों ही बड़े प्रेरणादायक प्रतीत हुए। उस ग्राम के प्रमुख रामसिंह जी भी बड़े निष्ठावान वैष्णव हैं और उपासना के तत्त्व के सम्यक् ज्ञाता भी। उनका अनुरोध भी इसका एक निमित्त बना

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

और मैंने राम-विवाह की अभिनय परम्परा के प्रवर्त्तन के लिए वह ग्राम चुना। नैमिषारण्य क्षेत्र सदैव धर्म के प्रवर्त्तन के क्षेत्र में अग्रणी रहा है।

नरोत्तमदास—वह बहुत ही निकट है, देव ! यह तो हमारा परम सौभाग्य है कि आपने हमारे निकटवर्त्ती ग्राम को अपना कार्य-क्षेत्र बनाया है। मैं भी आपके साथ रहूंगा, आप वहाँ कब पहुंच रहे हैं ?

तुलसीदास—परसों अमावस्या के प्रभात में ही मैं वहाँ के लिए प्रस्थान करूँगा। इस षष्ठी को धनुष-यज्ञ सम्पन्न होना है, वहाँ तैयारी हो रही होगी।

पुजारी—महाराज, मैं भी मंदिर की व्यवस्था करके आपके साथ ही चलूंगा।

तुलसीदास—मेरी इच्छा है कि यदि नरोत्तमदास जी के दोनों चरित्र संवाद-प्रधान हैं, तो उनका भी अभिनय वहां जनता के बीच किया जाए।

पुजारी—बड़ा अच्छा विचार है। आप अभी उन्हें सुनेंगे ही। मुझे पूर्ण विश्वास है कि दोनों ही चरित्र सफलतापूर्वक अभिनीत हो सकेंगे।

तुलसीदास—(प्रसन्न होकर) तो राम-विवाह के अभिनय के साथ-साथ पवित्र भक्त-चरित्रों के अभिनय की परम्परा फिर से चले।

(एक अति क्लांत व्यक्ति का हांफते हुए प्रवेश। वह सबको हाथ जोड़कर खड़ा हो जाता है।)

नरोत्तमदास—(पहचान कर) तुम कब आये निरंजन ? बहुत थके और उद्विग्न दिखाई पड़ते हो ? क्या कथावाचक भैया से भेंट हुई थी ! हम सब लोग उनकी प्रतीक्षा कर रहे हैं।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

निरंजन—उन्होंने ही मुझे भेजा है। आपके चले आने के बाद आपकी धर्मपत्नी, देवी जी सहसा बहुत अस्वस्थ हो गईं। कई घण्टों तक मूर्छा की अवस्था में रहीं, बड़े प्रयत्नों के बाद कठिनाई से प्राण रक्षा हो सकी है। अब भी वह संकट से बाहर नहीं। कथावाचक जी इसीलिए नहीं आये, उन्होंने आपको तुरन्त बुला लाने के लिए मुझे भेजा है। इसी समय चलिए।

तुलसीदास—नरोत्तमदास जी, क्या आप अपनी सहधर्मिणी को अस्वस्थ छोड़कर यहाँ आये थे ?

नरोत्तमदास—ऐसा कुछ नहीं था, महाराज ! मुझे स्वयं यह सुनकर आश्चर्य हो रहा है।

तुलसीदास—तो फिर उनकी इस आकस्मिक अस्वस्थता का क्या कारण है, निरंजन ?

निरंजन—महाराज ! उन्होंने कई दिनों से कुछ नहीं खाया था, जल या तुलसीदल के अतिरिक्त अन्न का एक दाना भी उनके गले के नीचे नहीं उतरा था। नरोत्तमदास जी को मानसिक कष्ट न हो, इसके लिए इनके सामने तो उन्होंने अपने आपको किसी तरह मनोबल से सम्हाले रखा, पर उनके चलने के बाद ही अति दुर्बलता के कारण वे मूर्च्छित होकर गिर पड़ीं।

तुलसीदास—कई दिनों तक उनके बिना अन्न के रह जाने का क्या कारण था ?

निरंजन—नरोत्तमदास जी शिलोंछवृत्ति से जीवन बिताते हैं। इस सम्बन्ध में उनका जीवन-व्रत बड़ा कठोर है। गाँवों में चारों ओर दरिद्रता छाई है, खेतों या बाजारों में चिड़ियों तक को दाने के दर्शन नहीं होते, फिर नरोत्तमदास जी को क्या मिलता ! पिछला पूरा सप्ताह इन ब्राह्मण-ब्राह्मणी ने

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

बिना अन्न के काटा है। यहाँ आते समय नरोत्तमदासजी के साथ उन्होंने कुछ सवाँ के चावल उधार लेकर बाँध दिये थे, पर स्वयं वैसे ही रह गई थीं। वे इनको खिलाए बिना कभी स्वयं कुछ खाती नहीं, उसी का यह परिणाम है।

तुलसीदास—धन्य है ऐसी अविचल धर्मनिष्ठा ! अपरिग्रह की यह पुण्यमयी परिसीमा है।

निरंजन—इतना ही नहीं, महाराज ! कठिनाई तो यह है कि ये गोदुग्ध भी नहीं ग्रहण करते। उस पर बछड़े का ही एकमात्र अधिकार मानते हैं।

तुलसीदास --इस कलिकाल में भी इस कठोर निष्ठा के साथ ऋत अमृत जीविका का वरण करनेवाले ब्राह्मण का दर्शन कर मैं धन्य हो गया। निश्चय ही हमारे धर्म और समाज की जड़ें बड़ी गहरी हैं, वे अपराजेय और अमर हैं।

पुजारी --नरोत्तमजी की इस व्रतनिष्ठा का परिचय मुझे भी आज ही मिला।

तुलसीदास--नरोत्तमदास जी ! आप तुरन्त अपने गाँव के लिए प्रस्थान करें। भगवान की कृपा से आपकी पत्नी पूर्ण स्वास्थ्य-लाभ करेंगी। उनके स्वस्थ होने पर आप उनको तथा कथावाचक जी को लेकर जयरामपुर आवें। वहीं हम लोग सभी आवश्यक विषयों पर विचार करेंगे तथा आपके 'सुदामा चरित्र' का अभिनय भी देखेंगे।

नरोत्तमदास—जो आज्ञा भगवन्।

तुलसीदास—आप अपने 'सुदामा चरित्र' की पुष्पिकायें मुझे देते जाएँ, मैं पारायण करूँगा।

[पटाक्षेप]

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

पंचम अंक

प्रथम दृश्य

[वाराणसी में असीघाट के कुछ दूर ऊपर एक आश्रम। आश्रम में एक मंदिर है जिसमें उत्तराभिमुख हनुमान जी की मूर्ति है। हनुमद्विग्रह के चरणों के नीचे एक असुर दबा पड़ा है। उनके ठीक सामने श्रीराम मंदिर है, उसमें भगवान राम, भगवती सीता और लक्ष्मण जी के विग्रह इस प्रकार स्थित हैं कि श्रीहनुमानजी उनको निरन्तर देखते रह सकें। दोनों मंदिरों के बीच में प्रस्तर का बना एक आयताकार चत्वर है। चत्वर के पश्चिमी छोर पर एक कुशासन पर गोस्वामी तुलसीदास पूर्वाभिमुख बैठे हैं। वे कभी भाव-विभोर होकर हनुमद्विग्रह को देखते हैं और कभी भगवान राम को। उनके सामने आसनों पर टोडरमल, बेनीमाधव दास, रामू, मेघा भगत, समर सिंह, रूपारुण स्वामी, नन्दलाल आदि बैठे हैं। तुलसीदास अब कुछ कृश दिखाई पड़ते हैं और केशों में कुछ श्वेतता का आभास होने लगा है।]

टोडरमल—(गोस्वामी तुलसीदास से) आपने सारे भारत का भ्रमण कर सभी तीर्थों की यात्रा कर जो पुण्य, अनुभव और शक्ति संचित की, वह 'रामचरित मानस' के रूप में लोक को प्राप्त हुई है।

मेघा भगत—मानस तो भगवान् का स्वकीय वाङ्मयविग्रह है। हम लीलारसिकों को उसने बहुत बड़ा अवलम्ब प्रदान किया है।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

नंदलाल—गुरुदेव जहाँ जहाँ गये हैं, वहीं रामलीला आरम्भ हो गई है। अब रामलीला केवल वाराणसी, अयोध्या, चित्रकूट, प्रयाग जैसे तीर्थों में ही नहीं होती, अब तो गाँवोंमें भी यह परम्परा व्यापक रूप में चल पड़ी है। गुरुदेव का संकल्प अनेक रूपों में सर्वत्र सिद्ध हो रहा है।

रूपारुण स्वामी—गुरुदेव ने जनकपुर धाम में दूल्हा सरकार के 'परब' के अवसर पर मार्गशीर्ष में रामविवाह-लीला का बड़ा अद्भुत आयोजन करवाया। विवाह-संस्कार मानस में निरूपित विधि के अनुसार हुआ। जानकी-मंदिर के मंहत ने कन्यादान किया था।

बेनीमाधवदास—स्वामी जी, मुझे भी उस अवसर पर जनकपुर धाम में उपस्थित होने का सौभाग्य मिला था। समूचा जनकपुर धाम उत्सवमय था। जनकपुर के प्रत्येक नर-नारी ने किशोरीजू के कन्यादान के लिए निरंबु व्रत किया था।

तुलसीदास—जनकपुर धाम पराधीन नहीं हुआ है। वह किशोरी जू का स्वधाम है, जो प्रभु की अन्तरंगा परा आह्लादिनी शक्ति हैं। मिथिला-भाव भक्ति का मधुरतम रूप है।

रामू—गुरुदेव ! आपने ग्राम-ग्राम में हनुमान् जी की उपासना का भी प्रचार किया है। अनेकानेक हनुमद्विग्रह आपने स्थापित किए हैं।

समर सिंह—श्रीवर जी के द्वारा स्थापित हनुमद्विग्रहों की विशेषता हैं उनके चरणों के नीचे दलित कंठगतप्राण असुर।

टोडरमल—हनुमान् जी के इसी असुरविमर्दन रूप की स्थापना गोस्वामी जी सब जगह कर रहे हैं।

तुलसीदास—हनुमान्‌जी की उपासना से हमारे समाज में अत्याचार के प्रतिरोध की शक्ति उत्पन्न होगी और भक्ति-साधना में सिद्धि प्राप्त होगी।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

नंदलाल—गुरुदेव, एक अनुरोध है।

तुलसीदास—कहिए।

नंदलाल—मेरे और रूपारुण स्वामी के पारस्परिक सम्बन्ध का निर्णय कर दीजिए।

बेनीमाधवदास—नंदलाल जी, दूल्हा सरकार के 'परब' पर यदि आप जनकपुर धाम गये होते, तो यह निर्णय वहाँ की गालियाँ सुनकर आप स्वयं कर लेते।

(सब लोग हँसते हैं।)

तुलसीदास—नंदलाल जी रामलला के वत्सल रस के उपासक हैं। इनको अवध क्षेत्र का होने का गर्व है।

मेघाभगत—दोनों परस्पर समधी हुए।

तुलसीदास—जीवन के सब सम्बन्ध राममय हो जाएँ, यही भक्ति की साधना है।

वनखंडी—गुरुदेव ने नैमिषारण्य क्षेत्र के सब तीर्थों का उसी प्रकार उद्धार किया है, जिस प्रकार महाप्रभु चैतन्य ने वृन्दावन के लीलास्थलों का उद्धार किया था। साथ ही हनुमान् जी की उपासना के व्यापक प्रवर्त्तन से जनता में नई शक्ति का संचार हो रहा है।

(आश्रम के द्वार पर 'सीताराम सीताराम' का उच्च स्वर गूँजता है। रामू बाहर जाकर देखकर लौटते हैं।)

रामू—गुरुदेव के दर्शन के लिए अयोध्या के दो श्वपच आये हैं। वे अयोध्यावासी हैं और जब आप वहाँ के वट-निकुंज में रामायण की रचना कर रहे थे, तो वे उस परिसर को स्वच्छ रखने का कार्य करते रहते थे। वे आपको अपना गुरु मानते हैं और यहाँ आपके दर्शनार्थ आये हैं।

तुलसीदास—अयोध्यावासी आये हैं। (कहते कहते भावुक हो उठते हैं) अयोध्यावासी सब राम के ही रूप हैं। राम के धाम में वर्ण-

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

भेद या जातिभेद के लिए कोई स्थान नहीं। (उठकर खड़े हो जाते हैं) उनको भीतर ले आओ।

रामू—जो आज्ञा !

(रामू बाहर जाते हैं, किन्तु तुलसीदासजी अपने प्रेमावेश को नियंत्रित नहीं कर पाते हैं। उनके स्वागत के लिए आगे बढ़ जाते हैं। दोनों श्वपच ससंकोच भीतर प्रवेश करते हैं। तुलसीदास दौड़कर बारी-बारी से उन्हें गले लगाते हैं। दोनों उनके चरणों में गिर जाते हैं। तुलसीदास उन्हें उठाकर बैठाते हैं और कुशल-क्षेम पूछते हैं। यह प्रेम और आदर पाकर दोनों के आँसू उमड़ पड़ते हैं।)

तुलसीदास—मुझे आज ही ज्ञात हुआ आप दोनों भक्तों ने मेरे अवध-निवास के काल में मेरी बड़ी सेवा की थी। मैं आप लोगों से कभी उऋण नहीं हो सकता। परिवार में कुशल तो है।

दोनों श्वपच—आपके दर्शन हुए और आपका आशीर्वाद मिला ! यही सबसे बड़ी कुशल है, महाराज !

तुलसीदास—अवध में सब भक्त और संत सुखी और प्रसन्न हैं न ?

एक श्वपच—महाराज ! अवध के चारों ओर महामारी फैली हुई है। लोग कीड़ों मकोड़ों की तरह मर रहे हैं। एक एक दिन में गाँव के गाँव उजड़े जा रहे हैं।

दूसरा श्वपच—महाराज ! हम रास्ते भर यही सब देखते हुए आये हैं।

टोडरमल—सुना जाता है, काशी में भी गिलटीवाली महामारी आरम्भ हो गयी है। जहाँ तहाँ चूहे मर रहे हैं।

तुलसीदास—मित्र ! हम भगवान् के दास हैं। दासभाव की भक्ति का एक व्यावर्त्तक गुण-धर्म है भगवान् की सचराचर रूप-राशि की सेवा और अर्चना। हम भक्तों के लिए यह विकट परीक्षा का काल है।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

टोडरमल—हम लोग इस स्थिति में क्या कर सकते हैं, बन्धु !

तुलसीदास—हम सब वैष्णवजन संगठित होकर महामारी से पीड़ित लोगों की सेवा के लिए निकल पड़ें । मैं स्वयं औषधियाँ लेकर रोगियों की सेवा करूँगा ।

टोडरमल—आप रोगियों की सेवा के लिए निकलेंगे, तो हम सभी आपके साथ चलेंगे ।

तुलसीदास—भगतजी ! आप काशी के वैद्यों की सभा का आह्वान कर उनसे औषधियों का संग्रह कीजिए । मैं सब वैष्णवों से अनुरोध करूँगा कि वे भगवान् का आदेश मानकर महामारी से पीड़ित जनता की सेवा के लिए निकल पड़ें । भगवान् के दया, कृपा, करुणा आदि गुणों की जिसको व्यावहारिक अनुभूति नहीं, वह वैष्णव कैसे हो सकता है ?

मेघाभगत—जो आज्ञा, महाराज ! आज से ही यह कार्य आरम्भ हो जायेगा ।

अयोध्या के दोनों श्वपच—महाराज ! यह रोग क्षण भर में एक व्यक्ति से दूसरे में प्रवेश कर जाता है । इससे बचना ही अच्छा है । आप लोग अपने अनमोल प्राणों को संकट में न डालें ।

तुलसीदास—भक्तो ! राम हमारे रक्षक हैं । उनके चरणारविंद अभयप्रद हैं । कोई भय और आशंका नहीं । हम लोग औषधियाँ लेकर सीताराम नाम का कीर्त्तन करते हुए नगर-नगर मुहल्ले-मुहल्ले गली-गली और गाँव-गाँव भ्रमण करेंगे । भगवान् का नाम रक्षा का वितान बनकर तन जाएगा । यह हम वैष्णव भक्तों की परीक्षा का काल है ।

[**पट परिवर्तन होता है ।**]

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

द्वितीय दृश्य

[स्थान—वही दीनबन्धु पाठक के घर का मंदिर। मंदिर के जग मोहन में रत्नावली बैठी हैं। उनके केश अब श्वेत हो चुके हैं। शरीर कृश हो गया है, पर मुख पर अपरिमेय तेज है। भगवान् का विग्रह उनकी दाहिनी ओर है। उनके सामने एक छोटी चौकी पर कौशेय वस्त्र बिछा है, उस पर रामचरित मानस की एक हस्तलिखित प्रति रखी है। सामने एक थाली में पूजन की सामग्री रखी है। रत्नावली भगवान् का पूजन संपन्न कर अब मानस का पूजन करने बैठी हैं। वे गंध, पुष्प, धूप, दीप और नैवेद्य अर्पित कर पाठ करना आरम्भ कर चुकी हैं। धीरे धीरे उनका मधुर स्वर गूँजता है।]

रत्नावली—(बद्धांजलि होकर) उद्भवस्थितिसंहारकारिणीं क्लेश-
हारिणीं,
सर्वश्रेयस्करीं सीतां नतोऽहं रामवल्लभां।
(सरस्वती प्रवेश करती हैं और अपने आँचल को हाथ में लेकर तीन वार रत्नावली के चरणों का स्पर्श करती हैं।)

रत्नावली—अखंड सौभाग्यवती रहो, भाभी।

सरस्वती—मानस के रूप में हमें महानिधि मिल गई है। दशरथ जी का प्रसंग सुनते-सुनते पिताजी ने बड़ी शान्ति से अपना शरीर छोड़ा। अन्तिम समय में उन्हें रोग की पीड़ा का अनुभव शेष नहीं रह गया था। प्रत्येक इन्द्रिय राम के विरह में विकल थी।

रत्नावली—माताजी भी पिताजी का विरह अधिक दिन नहीं सह पाई। शबरी का प्रसंग सुनते सुनते शरीर छोड़ दिया।

सरस्वती—जीजी! कल आप शिव-विवाह के प्रकरण में पार्वतीजी की बिदा के प्रसंग का पाठ कर रही थीं। अद्भुत है वह चौपाई—

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

'कत विधि सृजी नारि जग माहीं,
पराधीन सपनेहुं सुख नाहीं।'

नारी जीवन की युग-युग की पीड़ा इस अर्द्धाली में पुंजीभूत हो उठी है।

रत्नावली—(आँसू निकल आते हैं) ठीक ही कहती हो, भाभी!

सरस्वती—श्रीवर जी को जो यह महान् सिद्धि प्राप्त हुई है, उसमें आपकी तपस्या का भी योग है।

रत्नावली—मैं इस गौरव की अधिकारिणी नहीं, भाभी! मैं तो इस ग्रंथ को पाकर यह अनुभव करती हूं कि इसके रूप में मेरे स्वामी अपने इष्टदेव के साथ मुझे प्राप्त हो गये हैं। मैं अपने जीवन में परिपूर्णता का अनुभव करने लगी हूं।

सरस्वती—भाभी! इस ग्रंथ का पारायण श्रीवर जी की अन्य रचनाओं के साथ किया जाना चाहिए।

रत्नावली—यह आप ठीक कहती हैं, भाभी!

सरस्वती मुझे लगता है, मानसरामायण कुल रामचरित् का रोजनामा है और श्रीवर जी के अन्य ग्रंथ सब खाता जैसे हैं।

रत्नावली—मैं भी ऐसा ही अनुभव करती हूं।

सरस्वती—भाभी! कीर्ति और माधुर्य लीला का खाता गीतावली है, प्रताप और गुणों का खाता विनयपत्रिका है, दोहावली नीति, कर्म ज्ञान और भक्ति का खाता है।

रत्नावली—शोभा का खाता बरवै रामायण है, वैराग्य का खाता वैराग्यसंदीपनी है।

सरस्वती—आप आज आगे की कथा का पाठ कीजिए। उधर देखिए, श्री सीताराम के विग्रह के चरणों के निकट बैठे हनुमानजी आपका पाठ सुनने को उत्कंठित प्रतीत होते हैं।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

(रत्नावली हनुमान्‌जी की ओर देखकर प्रणाम करती हैं तत्पश्चात् पाठ आरम्भ करना चाहती हैं। उसी समय समरसिंह प्रवेश करते हैं, और रत्नावली के चरणों में प्रणाम करते हैं।)

रत्नावली—बहुत दिनों पर लौटे, भैया ! इन दिनों कहाँ थे ? काशी में ही रहे अथवा और कहीं गये ?

समरसिंह—श्रीवर जी के साथ काशी और आसपास के क्षेत्रों में ही भ्रमण करता रहा। चारों ओर गिल्टीवाली महामारी का प्रकोप था। श्रीवरजी हम सब भक्तों को लेकर स्वयं रोगियों की सेवा के लिए निकल पड़े थे।

सरस्वती—श्रीवरजी आप लोगों को लेकर गिल्टीवाली महामारी के रोगियों की सेवा के लिए निकले। यह तो बड़ा दुःसाहस-पूर्ण कार्य है। यह रोग संक्रामक है।

समरसिंह—संक्रामक तो है ही, भाभी ! सेवा कार्य में हमलोग उनकी समता नहीं कर पाते थे। औषधियों की झोली उनके कन्धे पर लटकी रहती थी और वे अपने हाथों रोगियों की शुश्रूषा करते थे।

सरस्वती—उन्होंने मानस में लिखा है—

मैं सेवक सचराचर रूपरासि भगवंत।

समरसिंह—'सीताराम' 'सीताराम' एवं इस दोहार्ध का उच्चारण करते हुए वे दिन रात रोगियों की सेवा करते रहते थे। मृतकों का अंतिम संस्कार भी स्वयं करते थे।

सरस्वती—इस महामारी के प्रकोप के समय आत्मरक्षा के लिए लोग गाँव छोड़कर बाहर चले जाते हैं, और श्रीवर जी ने इस प्रकार अपने प्राणों को संकट की ज्वाला में झोंक दिया।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

समरसिंह—यही हुआ, भाभी ! हम लोग तो उनके आशीर्वाद से सुरक्षित रहे, पर श्रीवरजी पर महाभारी का भयंकर आक्रमण हो गया ।

(यह सुनकर रत्नावली का मुख विवर्ण हो जाता है, कठिनाई से अपने को सम्हाल पा रही हैं। सरस्वती स्तब्ध रह जाती हैं।)

सरस्वती—देवर जी, यह तो बतलाइए कि श्रीवर जी सकुशल तो हैं।

समरसिंह—स्थिति तो बड़ी भयावह थी, भाभी ! श्रीवर जी के गले में और शरीर के सभी संधिस्थलों पर गिलटियाँ निकल आयी थीं। बड़ा तीव्र ज्वर था, हम लोग निराश होचुके थे।

सरस्वती—तो फिर हुआ क्या ? आप शीघ्र कहें।

समरसिंह—अघटित घटित हुआ, भाभी ! जिस अवस्था में रोगी बेहोश हो जाते हैं, उसमें भी श्रीवरजी सचेत थे और बराबर हनुमान जी का स्मरण कर रहे थे। उनका रोम-रोम पीड़ामय था, बाहु की पीड़ा विशेष रूप से अत्यंत असह्य थी, किन्तु उनके मुख से काव्य का निर्झर झर रहा था। रामू उसको लिख रहे थे।

सरस्वती—अब उनकी क्या स्थिति है ?

समरसिंह—अब उनकी दशा में बहुत सुधार है, वैद्यों ने उन्हें संकट-मुक्त तो घोषित कर दिया है। किंतु शरीर में अब भी बहुत पीड़ा रहती है, ज्वर भी कुछ न कुछ रहता है—बहुत दुर्बल हो गये हैं। उनके मुख से जो अंतिम छन्द मैंने सुना उसका अन्तिम चरण था—'खाये हुते तुलसी कुरोग राढ़ राकसनि केसरी-किसोर राखे वीर बरियाई हैं।'

सरस्वती—इसका आशय यह कि उनको अपने स्वस्थ होने का विश्वास हो गया है।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

समरसिंह—स्वस्थ तो प्रायः वे हो ही चुके हैं, भाभी ! पर दुर्बल बहुत हो गये हैं।

(सरस्वती की आँखों से अश्रु निर्झर की तरह झरते हैं। वे निर्निमेष होकर भगवान के विग्रह की ओर देखती रह जाती हैं। मुख पर वेदनापूर्ण प्रार्थना का भाव है।)

समरसिंह—वैद्यों का कहना है, संकट के क्षण कट गये हैं, फिर स्वयं हनुमान् जी रक्षा कर रहे हैं। कोई आशंका की बात नहीं। मैं यही बताने तो यहाँ आया हूं।

(गाँव में यह समाचार फैलता है। अनेक स्त्री पुरुष कुशल समाचार जानने के लिए एकत्र हो जाते हैं। सबके मुखों पर चिन्ता और विषाद की गहरी छाया है।)

एक वृद्धा—(प्रेमावेश से रत्नावली को हृदय से लगाकर)बेटी ! चिंता न करना। तुम्हारा पुण्य और तप ऐसा है कि जमाई जी का बाल भी बाँका नहीं हो सकता।

सरस्वती—आपका आशीर्वाद सफल हो, दादी !

एक वृद्धा—ऐसा ही होगा, बहू ! जमाई जी युग-युग अमर रहेंगे।

(रत्नावली सरस्वती के कान में कुछ कहती हैं।)

सरस्वती—(समरसिंह से) देवर ! जीजी ने निश्चय किया है कि वे श्रीवरजी के आरोग्य-लाभ के लिए अन्न-जल छोड़कर एकासन पर बैठकर अहर्निश हनुमानजी को रामचरित मानस सुनायेंगी। उनका यह अनुष्ठान अभी अभी आरम्भ हो जाएगा। उनका निश्चय अटल है।

समरसिंह—बड़ा कठोर व्रत ग्रहण किया है बहिन ने। वे तो आजीवन तपस्विनी हैं। सब सिद्धियाँ उनको सहज सुलभ हैं।

(रत्नावली सिद्धासन पर बैठ जाती हैं। सबसे 'सीताराम' नाम का अनुरोध करती हैं और स्वयं मंद मधुर स्वर से मानस का पाठ

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

आरम्भ कर देती हैं। सरस्वती उनके निकट बैठकर धीरे-धीरे व्यजन करती हैं। अन्य सब लोग समवेत स्वर से 'सीताराम' नाम का कीर्तन करते हैं।)

[पर्दा गिरता है।]

तृतीय दृश्य

[वाराणसी में असी घाट पर गोस्वामी तुलसीदास का अखाड़ा। उष;काल होने वाला है। गोस्वामी तुलसीदास पर्णकुटी में सोए हुए हैं। शरीर बहुत कृश हो गया है। उनकी शय्या के एक ओर वेनीमाधव बैठे हैं और दूसरी ओर रामू। दोनों लोग धीरे-धीरे व्यजन कर रहे हैं। चरणों के पास रूपारुण स्वामी बैठे हैं। वे चरण सहला रहे हैं। रात्रि में गोस्वामीजी को कुछ ज्वर हो आया था। ये लोग रात्रिभर उनकी सेवा करते रहे हैं, कोई सोया नहीं है। शिर की ओर नंदलाल जी बैठे हैं। वे कभी-कभी मस्तक पर हाथ रखकर तापमान का अनुमान लगाने का प्रयत्न करते हैं। एकाएक वह पर्णकुटी प्रकाश से भर जाती है। तुलसीदास की निद्रा टूट जाती है। वे 'सीताराम' 'सीताराम' कहते हुए चकित दृष्टि से चारों ओर देखते हैं।]

नंदलाल—महाराज ! आज तो आपको निद्रा कम आई। रात में ज्वर हो आया था, अब नहीं है। अभी अभी कुटी सहसा प्रकाश से भर गई थी, यह आपके पूर्ण स्वस्थ होने का संकेत है।

तुलसीदास—रात में ज्वर हो आया होगा, इस समय तो मैं बहुत स्वस्थ हूं। अभी अभी स्वप्न में मुझे एक अत्यन्त दिव्य तेज से मंडित श्वेतकेशा देवी के दर्शन हुए। उन्होंने मेरे मस्तक पर

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

हाथ फेरा, फिर मेरा चरण-स्पर्श कर अंतर्धान हो गई। उसके स्पर्श ने मेरी सब पीड़ा हर ली। नहीं जानता, कौन थीं वे पुण्यदर्शना!

रूपारुण स्वामी—हनुमान् जी की कृपामूर्ति ही वह रूप धारण कर आई होगी। 'हनुमानबाहुक' की सिद्धि उस रूप में प्रकट हुई।

तुलसीदास—उस दिव्य देवी ने मेरे चरण छुए। हनुमानजी की कृपामूर्ति के विषय में ऐसी कल्पना करना भी पाप है।

रूपारुण स्वामी—क्षमा करें! मुझसे बड़ी भूल हुई, गुरुदेव!

तुलसीदास—मैं उन देवीमूर्ति को कई दिनों से स्वप्न में देख रहा हूं। मुखमण्डल कुछ परिचित तो लगता है, मैं यह निश्चय नहीं कर पा रहा कि वे कौन हैं? पर उन्होंने मुझे स्वस्थ तो कर ही दिया है। हनुमान् जी ने ही संभवतः उन्हें मेरे कल्याण के लिए प्रेरित किया होगा। पर यह चरण-स्पर्श करना कुछ समझ में नहीं आ रहा!

बेनीमाधव—कौन सी सिद्धि आपको सुलभ नहीं? उन्हीं में से कोई होगी।

रामू—यह भी सम्भव है।

तुलसीदास—आज मैं स्वस्थ हूं। मेरी दिनचर्या अब पूर्ववत् चलेगी। आज मैं नित्यक्रिया सम्पन्न कर स्वयं प्रभु का पूजन करूँगा।
(रामू और बेनीमाधवदास कुछ अवलम्ब प्रदान करना चाहते हैं। पर गोस्वामी जी स्वयं उठकर बैठ जाते हैं।)

रामू—गुरुदेव! अभी आपका शरीर बहुत दुर्बल है। बैठकर देर तक सब दैनिक उपासना करना अभी पथ्य नहीं प्रतीत होता।

बेनीमाधव—मैं भी यही निवेदन करना चाहता था। आपकी उपासना का क्रम खंडित ही कब हुआ है। जिस असाध्य

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

मानी जाने वाली व्याधि के आक्रमण से लोग अचेत हो जाते हैं, उस अवस्था में भी आप निरन्तर हनुमान् जी का गुणगान करते रहे।

तुलसीदास---बेनीमाधव ! मेरा रोम रोम यंत्रणा से छटपटा रहा था। मैं तो उससे मुक्ति पाने के लिए हनुमान् जी को पुकार रहा था। यह सकामता तो भक्ति का दूषण है। मेरे अन्तर्मन में प्रभु की कृपा पर विश्वास डिग गया होगा, तभी मैंने कातर होकर ऐसा किया।

रूपारुण—ऐसा नहीं है, भगवन् ! उस अवस्था में भी आपके कंठ से जो वाणी फूटी थी, वह आपकी अहैतुक अव्यभिचारिणी परम निष्काम प्रेमाभक्ति का प्रमाण है।

बेनीमाधव—सत्य कहते हैं, रूपारुण स्वामी। आपके अतिरिक्त ऐसा कौन है जो उस चरम पीड़ा की स्थिति में भी यह कह सकता था—

असन-वसन हीन विषम विषाद लीन
देखि दीन दूबरो करै न हाय हाय को।
तुलसी अनाथ सो सनाथ रघुनाथ कियो
दियो फल सीलसिंधु आपने सुभाय को।
नीच यहि बीच पति पाइ भरुहाइगो
विहाय प्रभु भजन वचन मन काय को।
ताते तनु देखियत घोर बरतोर मिस
फूटि फूटि निकसत लोन राम राय को॥

तुलसीदास—क्या उन पीड़ा के क्षणों में मैंने यह भी कहा था ?

बेनीमाधव—आप उस अवस्था में जो जो कहते गये थे, मैंने सब लिख लिया है।

तुलसीदास—मुझे संतोष है, प्रभु के उपकारों की चेतना उस अवस्था में भी मुझे बनी रही। कृतघ्न होंने से बच गया।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

बेनामाधव—अपने परम मित्र टोडरमल की हत्या से आप भीतर भीतर दुःखी थे ही, उन्हीं दिनों जनसेवा करते हुए आप पर इस महामारी का आक्रमण हुआ। इन दिनों हम लोग निरन्तर यह अनुभव कर रहे थे कि हनुमान् जी स्वयं आपकी शुश्रूषा कर रहे हैं।

तुलसीदास—बेनीमाधव ! टोडरमल जैसा मित्र मिलना इस कलिकाल में कठिन है—

चार गाँव को ठाकुरो, मन को महा महीप।
तुलसी या कलिकाल में अथए टोडर दीप ॥
तुलसी राम सनेह को सिर पर भारी भार।
टोडर कांधा ना दियो, सब कहि रहे उतार ॥
तुलसी उरमाला विमल, टोडर गुनगन बाग।
ये दोउ नयना सींचिहैं समुझि समुझि अनुराग ॥
राम धाम टोडर गये तुलसी भये असोच।
जियबो मीत पुनीत बिनु, यही जानि संकोच ॥

रूपारुण—टोडर महान् नररत्न थे। उनका यश अमर रहेगा।

(नेपथ्य में 'गोस्वामी जी की जय जयकार' का शब्द सुनाई पड़ता है।)

तुलसीदास—यह कौन आया है ? भीतर बुला लो।

(रामू एक ब्राह्मण को लेकर आते हैं। वह भूमिष्ठ होकर गोस्वामी जी को प्रणाम निवेदित करता है।)

तुलसीदास—कहाँ से आये हो, भाई ?

ब्राह्मण—आप मुझे पहचान नहीं पाये, महाराज ! मैं आपके पास अपनी कन्या के विवाह के लिए सहायता माँगने आया था ! आपने मुझे अब्दुर्रहीमखानखाना के पास भेजा था, वे उस समय सामरिक महत्व की यात्रा पर प्रयाग आये थे।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

तुलसीदास—स्मरण हो आया ब्राह्मणदेवता ! मैंने कुछ लिखकर भी तो दिया था ।

ब्राह्मण—महाराज ! आपने लिखा था—

'सुरतिय, नरतिय, नागतिय, सह बेदन सब कोइ ।

तुलसीदास—क्या कहा खानखाना ने ? वे बड़े उदार तो हैं ही, कवि हैं और भक्त भी ।

ब्राह्मण—उन्होंने मुझे प्रचुर द्रव्य देकर मेरी दरिद्रता दूर कर दी और यह कहा—

'गोद लिये हुलसी फिरै, तुलसी सो सुत होइ ।।

रामू—बड़े प्रत्युपन्नमति हैं, खानखाना !

ब्राह्मण—इतना ही नहीं, उन्होंने रामचरितमानस का भी श्रवण किया है, एक प्रति उनके पास है । उन्होंने यह दोहा लिखकर भेजा है, लीजिए पढ़िए महाराज । (हाथ बढ़ाकर एक सुचित्रित पत्र रामू के हाथ में देते हैं ।)

रामू—(उसे पढ़ते हैं ।)

रामचरित मानस विमल, संतन जीवन प्रान ।
हिन्दुआन को वेद सम, जमनहि प्रकट कुरान ।।

बेनीमाधवदास और रूपारूप गोस्वामी—धन्य हैं खानखाना ! अनुपम है उनकी यह बदान्यता ।

ब्राह्मण—वे गोस्वामी जी महाराज की बरवै रामायण के बड़े प्रेमी हैं और स्वयं भी बरवै लिखते हैं । उनकी इच्छा गोस्वामी जी महाभाग के दर्शन करने की भी है ।

तुलसीदास—यह उनकी महानता है । रामभक्ति का रस जिसे मिल जाता है, वह फिर किसी सीमा में बँधकर नहीं रह सकता । ब्राह्मण देवता । आप नित्यकृत्य से निवृत्त हो प्रसाद ग्रहण कर विश्राम करें ।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

ब्राह्मण—जो आज्ञा, महाराज ! (जाता है ।)

रूपारुण स्वामी—गुरुदेव ! वैशाख शुक्ल की नवमी को जानकी जयंती थी । उस दिन आप बहुत अस्वस्थ थे । आज पूर्णिमा है, आज हम लोग रात्रि में किशोरी जी की छठी का महोत्सव मनाना चाहते हैं । आप की अनुमति चाहिए ।

तुलसीदास—(प्रसन्न होकर) इसके लिए भी मेरी अनुमति की अपेक्षा ! अभी से बधाई बजे । मंगलोत्सव का उत्साहपूर्ण आयोजन हो ।

रूपारुण—(उल्लसित होकर) अभी अभी उत्सव का समारंभ हो जायेगा (बाहर जाते हैं, पंच वाद्य बजने लगते हैं । अखाड़े का वातावरण उत्सवमय हो जाता है ।)

तुलसीदास—(प्रसन्न होकर गाते हैं ।) सहेली, सुनु सोहिलो रे । सोहिलो, सोहिलो, सोहिलो, सोहिलो सब जग आज………।

(थक जाते हैं, साँस फूलने लगती है ।)

रूपारुण ! तुम अपने सोहरों का गान करो ।

रूपारुण—आप अभी बहुत दुर्बल हैं, विश्राम करें । हम लोग सब कुछ कर लेंगे ।

तुलसीदास—उत्सव अखंड रूप से चलना चाहिए—दिन और रात । बिना विश्राम के ।

रूपारुण—ऐसा ही होगा, गुरुदेव !

(नेपथ्य में अनेक कलकण्ठ मुखर हो उठते हैं—'सोहिलो, सोहिलो, सोहिलो सोहिलो सब जग आज ।

तुलसीदास—रूपारुण ! आज मैं बहुत स्वस्थ हूं । अब तो शरीर में दुर्बलता भी नहीं रह गयी है । आप आज मुझे सर्वेश्वरी जी के जन्म के सोहर सुनाइये ।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

रूपारुण—आज आप स्वस्थ हैं, यह हमारे लिए दुहरे आनन्द का विषय है। मैं आपको अहर्निश सोहर सुनाता रहूंगा। आज अखंड बधाई बजेगी। (गाते हैं।)

आजु महामंगल-मिथिलापुर सुता सुनयना जाई रे।
सदन सदन सोहिलो सोहावन बाजत विपुल बधाई रे।
आजु बधायौ जनकराइ कै, गावहु मंगलचार रे।
आये मंगल कलस साजि सब दधि फल नूतन डार रे।
जोइ जोइ जिहिं जाच्यो सोइ पायो गूंजत जय जयकार रे।
आनन्द मगन गगन सुर फूले बरसत सुमन अपार रे।

तुलसीदास–बड़ा मधुर बधाई-गीत है। कुछ मैथिली में भी तो सुनाइए।

रूपारुण—जो आज्ञा, गुरुदेव! आपका ही अनुसरण करते हुए मैं कुछ निवेदन करूँगा—

आदि सारदा गनपति गौरि मनाइय हो।
जनकलली कर सोहर गाइ सुनाइय हो।
अनिमिख, रूप निहारत बलि बलि जाओल हो।
रानि सुनयना जीवन निधि निज पाओल हो।

(एक भक्त प्रवेश करता है और गोस्वामी तुलसीदास के सामने साष्टांग प्रणाम करता है और सामने हाथ जोड़कर खड़ा हो जाता है।)

तुलसीदास—क्या समाचार है?

भक्त—गुरुदेव! समरसिंहजी और काशीनाथजी पधारे हैं।

तुलसीदास—उन्हें तुरन्त भीतर ले आओ, बाहर क्यों रुके हुए हैं।

(भक्त लौट जाता है और समरसिंह तथा काशीनाथ प्रवेश कर तुलसीदास जी के चरणों में प्रणाम करते हैं।)

तुलसीदास—आओ बन्धु! काशीनाथ जी तो बहुत दिनों पर आये। परिवार और ग्राम का कुशल समाचार कहिए।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

(समरसिंह और काशीनाथ दोनों रो पड़ते हैं। रूपारुण स्वामी और रामू उन्हें तुलसीदास जी की शय्या के निकट आसन देकर बैठाते हैं।)

रामू—ऐसा क्या हुआ है, जिसके कारण आप ऐसे शोकाकुल हो रहे हैं, बन्धु !

समरसिंह—बन्धु ....(बोलने का प्रयत्न करते हैं, हिचकी बँध जाती है।)

रूपारुण स्वामी—काशीनाथजी ! आप ही कुछ कहें। समरसिंह जी बड़े विह्वल हो रहे हैं।

काशीनाथ—(आँसुओं की बाढ़ रोककर) रूपारुण महाराज ! हमारी बहिन परम पुण्यशीला रत्नावली ने ठीक जानकी नवमी के दिन मध्याह्न में अपना भौतिक शरीर त्याग दिया। (रो पड़ते है। रामू, रूपारुण स्वामी, निरंजन स्वामी आदि सबके नेत्रों से अश्रुवर्षा होने लगती है। गोस्वामी तुलसीदास अत्यन्त गम्भीर हो जाते हैं। मुख पर विवर्णता छा जाती है। लगता है, आँसुओं को उन्होंने सप्रयास रोक रखा है।)

रामू—काशीनाथ भैया ! यह कैसे हो गया ? अकस्मात् उन महा-तपस्विनी का महाप्रयाण........ .....?

काशीनाथ—वह सारा प्रसंग अलौकिक है, क्या कहूं और कैसे कहूं ?

रामू—फिर भी ....? मैं तो दीर्घकाल से उनके दर्शन के पुण्य से वंचित था।

काशीनाथ—समरसिंह जो यहाँ से लौटकर गये और उन्होंने वहाँ श्रीवर जी पर गिलटियोंवाली महामारी के आक्रमण का समाचार सुनाया, और यह बताया कि उनको बाहु में असह्य पीड़ा है।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

रामू—क्या यह समाचार सुनकर ही उन्होंने प्राण त्याग दिये ?

काशीनाथ—समर भाई ने यह भी उनको बताया था कि अब श्रीवरजी के स्वास्थ में सुधार है और हनुमान् जी के अनुग्रह से वे उत्तरोत्तर स्वस्थ हो रहे हैं और काशी के सब श्रेष्ठ वैद्य उनके उपचार में लगे हैं ।

रामू—तो फिर क्या हुआ ?

काशीनाथ—आप जानते ही हैं, वे तपश्चर्या की परमावधि थीं । जैसे ही उन्होंने श्रीवरजी की अस्वस्थता का समाचार सुना, उन्होंने अन्न-जल सब त्याग दिया । अहर्निश एकासन पर बैठकर रामचरितमानस का पाठ करने लगीं ।

समरसिंह (आंसू गिराते हुए) उन्हें देखकर लगता था, किशोरी जी की ही कोई दिव्य अनुचरी उनके रूप में अवतरित हुई हैं । हम लोगों को बार बार मानस की यह अर्द्धाली स्मरण हो आती थी—

'कृस तनु सीस जटा एक बेनी । जपति हृदय रघुपति गुन श्रेनी ।

रूपारुण—उनके उस रूप के दर्शन करनेवाले आप लोग धन्य हैं ।

रामू—फिर क्या हुआ, भैया ?

समरसिंह—जिस दिन से उन्होंने यह व्रत लिया, मानस के पाठ और सीताराम नाम के अतिरिक्त उनके मुख से कुछ नहीं निकला । अवश्य बीच बीच में वे पाठक बाबा के घर के मंदिर में प्रतिष्ठित युगल सरकार के विग्रह को भावविभोर हो देखा करती थीं ।

काशीनाथ—सरस्वती भाभी सब कुछ छोड़कर निरन्तर उनके पास बैठी हुई, उनकी सेवा का अवसर जोहती रहती थीं । पर सेवा का अवसर उन्होंने किसी को दिया ही नहीं ।

(गोस्वामी तुलसीदास के मुख पर वेदना के चिह्न गहरे होकर लक्षित होने लगते हैं । यह देखकर रूपारुण स्वमी उन्हें सहारा

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

देकर शय्या पर लेटने को विवश कर देते हैं। उनकी आँखें कुछ सजल होती प्रतीत होती हैं। पर वे पुनः उन आँसुओं को पी जाते हैं।)

रामू—फिर क्या हुआ, काशीनाथ भैया ?

काशीनाथ—इसी अवस्था में उनके कई दिन बीत गये। जानकी नवमी का प्रभात आया। उस दिन उनका पाठ पूरा हो चुका था, केवल मंद मधुर स्वर में 'सीताराम' नाम का जय चल रहा था। हम लोग उस दिन उनको छोड़कर एक क्षण के लिए भी कहीं हटे नहीं। सरस्वती भाभी तीन-तीन बार स्नान कर उनके निकट ही बैठी रहती थीं।

तुलसीदास—(धीरे से) पुण्यभागा ....।

काशीनाथ—ज्योंही मध्याह्न बेला आई और किशोरीजी के जन्म की नीराजना आरम्भ हुई, बहिन रत्नावली का शरीर दिव्य आभा से मंडित हो उठा और वह प्रकाश किशोरीजी के विग्रह के श्रीचरणों में समा गया।

तुलसीदास—धन्य रत्नावली !

समरसिंह—सरस्वती भाभी ने देखा, शरीर से प्राण विदा हो चुके हैं। फिर भी, वे जिस आसन पर बैठी थीं, उसी पर बैठी रहीं।

तुलसीदास—मैं पहचान नहीं पाता था। निश्चय ही रत्नावली ही मेरे स्वप्नों में मेरी पीड़ा-हरण करने के लिए आती थीं। आजः प्रातःकाल वे ही मेरा चरण-स्पर्श कर मुझसे मानों विदा मांगकर गई हैं।

रूपारुण स्वामी—गुरुदेव ! ऐसा ही है। वे किशोरी जी के अंतरंग सहचरी मंडल में स्थान पा गई हैं।

नंदलाल—गुरुदेव ! आज के उत्सव के सम्बन्ध में क्या आदेश हैं ?

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

तुलसीदास—आदेश क्या हैं। छठी का महोत्सव तो जैसा निश्चय किया जा चुका है, वैसा ही होगा। उसके साथ हम रत्नावली के उर्ध्वगमन का महोत्सव भी क्यों न मनावें। आप क्या कहते हैं, रूपारुण स्वामी !

रूपारुण—गुरुदेव ! हमारी महिमामयी जननी ने किशोरी जी के अंतरंग सखीमंडल में स्थान प्राप्त किया, यह………………।
(कंठ भर आता है, आँसू गिरने लगते हैं।)

तुलसीदास—रूपारुण, ठीक है। (उठकर बैठ जाते हैं) मुझे भी अपने आँसुओं से रत्नावली की स्मृति का अभिषेक कर लेने दीजिए। (दोनों नेत्र बरस पड़ते हैं, वहाँ उपस्थित सभी लोग शोकाकुल होकर अश्रुवर्षा करते हैं

[धीरे-धीरे पर्दा गिरता है।]

चतुर्थ दृश्य

[स्थान—वही जो पूर्ववर्ती दृश्य में प्रदर्शित किया गया है। गोस्वामी तुलसीदास आज अपने आश्रम से बाहर गंगातट के निकट काष्ठ की एक चौकी पर बिछे कुशासन पर बैठे हैं। उनकी मुखमुद्रा बड़ी प्रशान्त और भव्य है। उनके आस पास बेनीमाधवदास, रूपारुण स्वामी, नन्दलाल, रामू, समरसिंह, काशीनाथ आदि बैठे हैं। गोस्वामी तुलसीदास मध्यम स्वर में निरन्तर सीताराम नाम का जप कर रहे हैं। उनका शरीर कृश हो गया है, केश श्वेत हो गये हैं। एक बाँह कुछ पतली प्रतीत होती है। भक्तगण उनसे जो प्रश्न करते हैं, उनका वे मदंस्मितिपूर्वक धीरे-धीरे उत्तर देते जाते हैं।]

बेनीमाधव दास—गुरुदेव ! मेरे मन में एक शंका है।

तुलसीदास—(मंदस्मिति के साथ) पूछो !

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

बेनीमाधव दास—आप वर्णाश्रम की मर्यादाओं को स्वीकार करते हैं और भक्ति के महत्व को सर्वोपरि घोषित करते हैं। कभी कभी दोनों में संगति बैठाने में आगे चलकर लोगों को कठिनाई हो सकती है।

तुलसीदास—कठिनाई होनी नहीं चाहिए। श्रुति का कथन बहुत स्पष्ट है—'यश्चाण्डालोऽपि रामेति वाचं वदेत् तेन सह संवदेत् तेन सह संवसेत्तेनसह संभुंजीयात्। यदि चांडाल भी राम नाम का जप करे, तो उसके साथ भोजन तक किया जा सकता है।

रूपारुण स्वामी-वैष्णव भक्ति ने समाज को विघटित और विशृंखल करने वाली सब रूढ़ियाँ तोड़ दी हैं। मानवमात्र को साम्य और सख्य का जो संदेश महान् आचार्यों ने दिया है, उसे आपने जन जन को सुलभ कर दिया है।

नंदलाल—भक्त की दृष्टि में वर्ण-व्यवस्था का क्या रूप मान्य होना चाहिए? इसे आप कुछ और स्पष्ट कर दें।

तुलसीदास—वैष्णव आचार्यों ने शूद्र अथवा चाण्डाल कहे जाने वाले कुल में उत्पन्न भक्त को जन्मजात ब्राह्मण की अपेक्षा बहुत अधिक शुद्ध और श्रेष्ठ माना है। वैदिक ज्ञान-विज्ञान में निष्णात व्यक्ति ही ब्राह्मण, द्विज या विप्र कहा जा सकता है।

रूपारुण—चैतन्य महाप्रभु के रूप में अवतरित भगवान् ने स्वयं कहा है—

किबा विप्र किबा न्यासी शूद्र केने नय।
येइ कृष्ण तत्व वित्त सेइ गुरु हय॥

मनुष्य ब्राह्मण हो, शूद्र हो अथवा सन्यासी ही क्यों न हो, वह सद्गुरुपद का अधिकारी तभी हो सकता है, जब वह कृष्णतत्व का ज्ञाता हो।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

तुलसीदास--सभी वैष्णव आचार्य इसी बात पर बल देते हैं। असूयाग्रस्त लोगों की बुद्धि भ्रान्त हो सकती है, अन्यथा राम-कथा में यह तत्व सर्वत्र स्पष्ट है।

नंदलाल--महाराज ! आपने भी तो जन्मगत उच्चता और नीचता के भाव का स्पष्ट निरसन किया है—

अति ऊँचे भूधरनि पर भुजगन के स्थान।
तुलसी अति नीचे सुखद ऊख, धान अरु पान।

तुलसीदास—मैंने वही कहा है जो शास्त्र कहते हैं, सब वैष्णव आचार्य कहते हैं और जिसे स्वयं भगवान् ने धरती पर अवतरित होकर कहा और किया है।

बेनीमाधवदास—आपने मेरी शंका का समाधान कर दिया है, गुरुदेव !

तुलसीदास – बेनीमाधव ! सब शंकाओं का समाधान है रामनाम। सब प्रकार की महिमा का स्रोत है रामनाम। मुझे ही देखो—

लहै न फूटिहु कौड़िहू, को चाहै केहि काज।
सो तुलसी महँगे किये राम गरीब नेवाज॥
घर घर माँगे टूक पुनि, भूपति पूजे पाँय।
जे तुलसी तब राम बिनु ते अब राम सहाय॥

नंदलाल—मानस में आपने वेद की महिमा का आख्यान स्थान स्थान पर किया है, गुरुदेव !

तुलसीदास—वेदतत्त्व का ही उपबृंहण उपनिषदों और पुराणादि में किया गया है, हमारे साहित्य और कलाओं का उत्स भी वही है। रामकथा वेदतत्त्व को ही सार्ववर्णिक रूप देने का आर्ष उपक्रम है।

नंदलाल—वेदतत्व का प्रकाश किसको प्राप्त होता है और कैसे ?

तुलसीदास—श्रीमद्भागवत् का पारायण और श्रवण आप करते

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

ही रहे हैं। भगवान् श्रीकृष्ण ने इसमें श्रीमुख से उद्धव से कहा है, वेदों का नाम है शब्दब्रह्म।

रूपारुण—एकादश स्कंध में उद्धव को समझाते हुए श्रीभगवान् ने वेदों के स्वरूप का निरूपण किया है। आप उसी प्रसंग का निर्देश कर रहे हैं ?

तुलसीदास—ऐसा ही है। भगवान् ने कहा है—'परोक्षवादा ऋषयः परोक्षं मम च प्रियम्।'

रामू—वेदों का यह परोक्षवाद बड़ा दुर्बोध है।

तुलसीदास—अनधिकारी के लिए वह अत्यन्त दुर्बोध है। तभी उसके विषय में इतनी भ्रान्तियां लोगों में फैलायी जाती हैं।

रामू—आपका आशय है वेद अंतर्ज्ञानात्मक और प्रतीकात्मक हैं।

तुलसीदास—यही तो परोक्षवाद है। वे ऐसे रहस्यमय शब्द हैं जो अपना तात्पर्य केवल ऋषि के समक्ष ही प्रकाशित करते हैं। भगवान् ने कहा है, वेद मेरी मूर्ति हैं और वे समुद्र के समान अनंतपार, गंभीर और दुर्विग्राह्य है। जैसे कमलनाल में पतला-सा सूत होता है, वैसे ही वह वेदवाणी प्राणियों के अंतःकरण में अनाहत नाद के रूप में प्रकट होती है।

नंदलाल—'भगत हेतु विधि भवन बिहाई, सुमिरत सारद आवत धाई।' वेदतत्व के प्रकाशन की यही प्रक्रिया है न, गुरुदेव ?

तुलसीदास—मैं तो भगवान् की कही हुई बात कह रहा था। उस प्रसंग में मेरी कही बात की चर्चा अनुचित है।

रामू—देव ! जीवन के परम पुरुषार्थ के विषय में आपका क्या मत है?

तुलसीदास—यह तो मैं अनेक बार स्पष्ट कर चुका हूं। भगवान् का प्रेम ही चरम परम पुरुषार्थ है। महाप्रभु बल्लभाचार्य ने इसे पंचम पुरुषार्थ कहा है। इसकी प्राप्ति का एकमात्र साधन है सेवा।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

समरसिंह—किसकी सेवा श्रीवरजी ?

तुलसीदास—मैं अनेक बार कह चुका हूं असंख्य दीनों, दुखियों, दलितों, भूखों, आवासहीनों और वस्त्रहीनों के रूप में भगवान् स्वयं अपनी सेवा की याचना कर रहे हैं। इन कोटि कोटि दरिद्र नारायणों को भक्त कभी भूल नहीं सकता।

समरसिंह—आपने भक्ति को परम लोक हितसाधक बना दिया है।

तुलसीदास—भगवान् स्वयं लोक के कल्याण के लिए अवतार लेकर कितना कष्ट सहते हैं। लोकसेवा का वास्तविक अधिकारी भगवान् का भक्त ही हो सकता है। इतर जनों के द्वारा किया जानेवाला लोकसेवा का आडंबर प्रायः अहंभाव को पोषित करता है और स्वार्थ-साधन का निमित्त बन जाता है। अद्वैतवाद की जो दुरवस्था हो रही है, वही भक्तिहीन सेवावाद की भी हो सकती है।

समरसिंह—आपने लिखा ही है—

ब्रह्मज्ञान बिनु नारि नर करहिं न दूजी बात।
कौड़ी कारन लोभ वश करहिं विप्र, गुरु घात॥

तुलसीदास—देख ही रहे हो, यही तो हो रहा है। अद्वैत की प्रतिष्ठा की तीन भूमिकायें श्रीमद्‌भागवत में बताई गई हैं—भावाद्वैत, द्रव्याद्वैत और क्रियाद्वैत।

काशीनाथ—आपके अन्य अंतेवासी इस विषय में आपसे सुन चुके होंगे। मैं इसका मर्म समझना चाहता हूं।

तुलसीदास—अद्वैतवाद की तीन व्यावहारिक कसौटियाँ हैं। पहली है, भावाद्वैत जिसका अर्थ है सबकी समता और एकता की निरन्तर बनी रहने वाली भावना। दूसरी कसौटी है, क्रिया द्वैत जिसका अर्थ है मन, वाणी और शरीर से होनेवाले सब

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

कर्मों को भगवान् में अध्यस्त मानकर उन्हें समर्पित कर देना। तीसरी और सबसे महत्वपूर्ण कसौटी है द्रव्याद्वैत, जिसका अर्थ है स्त्री-पुत्रादि, अपने सब सगे सम्बन्धी और संसार के अन्य सब प्राणियों के स्वार्थ और भोग एक ही जैसे हैं यह मानना। उनमें अपने पराये का भेद नहीं है। जितने से अपना पेट भरे, उसी पर अपना अधिकार है—अधिक पर नहीं। इन तीन कसौटियों पर कसकर जिस विशिष्ट कोटि के अद्वैतवाद की प्रतिष्ठा की गई है, उसी का नाम भक्ति है। उस लोकमंगलकारिणी परम प्रेमाभक्ति के प्रचार-प्रसार द्वारा जनसेवा में लग जाइए।

रामू—भगवन ! मुझे वह रात्रि याद आ रही है जब प्रलयंकर वर्षा की कालरात्रि में आपने उमड़ती-घुमड़ती यमुना की धारा को उलटे तैरकर पार किया था। आज आपने संस्कृति की परकीय धारा को उलट कर पार करने का मार्ग लोक को दिखा दिया है।

तुलसीदास—(हँसकर) रामू ! अब तो तुमने यह मान लिया कि मेरा काम पूरा हो गया। देखते हो उस क्षेमकरी चील को—

कुमकुम रंग सुअंग जितो मुख चन्द सो चन्दन होड़ परी है।
बोलत बोल समृद्धि चुवै अवलोकत सोच विषाद हरी है॥
गौरि कि गंग विहंगिनि वेष कि मंजुल मूरति मोद भरी है।
पेषु सप्रेम पयान समय सब सोच विमोचन क्षेमकरी है॥

(तुलसीदास तुलसी मिश्रित गंगाजल पान करते हैं। सप्तवर्णा किरणों का तीव्रप्रकाश फैलता है, जो सूर्य के सप्ताश्वयान जैसा प्रतीत होता है।)

[पर्दा गिरता है।]

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

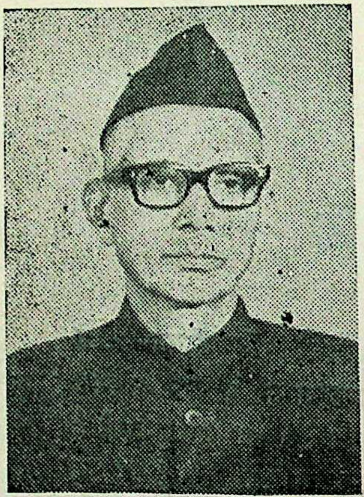

डा० कुंवर चन्द्र प्रकाश सिंह

जन्म—शरत् पूर्णिमा सं० १९६७ वि०

शिक्षा—एम०ए०, डी० लिट्

भूतपूर्व आचार्य एवं अध्यक्ष

हिन्दी विभाग, बड़ौदा विश्वविद्यालय

हिन्दी विभागाध्यक्ष एवं अधिवक्ता

कलासंकाय, जोधपुर विश्वविद्यालय

तथा मगध विश्वविद्यालय बोधगया

कई विश्वविद्यालय में अभ्यागत आचार्य।

प्रकाशन—नाटक (१) कवि कुलगुरु (२) जगकवि जगनिक (३) कवि-वर नरोत्तमदास (४) पाँच एकांकी (५) आचार्य चाणक्य (६) अग्नि-परीक्षा (७) तुलसीदास।

काव्य—(१) शंपा (२) मेघमाला (३) बा और बापू (४) प्रतिपथा (५) अपराजिता (६) विजया (७) रामदूत महाकाव्य (८) वृन्दावन (९) ऋतम्भरा।

शोध-समीक्षा—(१) हिन्दी नाट्य साहित्य और रंगमंच की मीमांसा (२) मध्यकालीन हिन्दी पाठ्य परम्परा और भारतेन्दु (३) गोविन्द हुलास (४) अक्षय रस (५) काव्य प्रभाकर किंवा रुक्मणिहरण (६) भुजकच्छ की बृज पाठशाला (७) श्रवणाख्यान (८) शोधसाधना (९) दौलतबाग विलास (१०) हिन्दी नाट्य साहित्य का समीक्षात्मक इतिहास (११) श्रीमद्भागवत-रूपान्तर।

विशेष—अनेक साहित्यिक-सांस्कृतिक संस्थाओं के संस्थापक।

संचालक—अध्यक्ष

सम्प्रति—स्वतंत्र लेखन

सम्पर्क—त्रिवेणीनगर, मौसमबाग, सीतापुर रोड, लखनऊ।